अमृत रस

(भाग -१)

परमसन्त महात्मा रामचन्द्र जी महाराज

(फ़तेहगढ़ निवासी)

के

पत्रों का संकलन

संकलन कर्ता---

ब्रह्मलीन परमसन्त डॉ० श्रीकृष्ण लाल साहब

आचार्य, रामाश्रम सत्संग,

सिकन्द्राबाद (उ० प्र०)

मुद्रक तथा प्रकाशक

प्रथम संस्करण ५०० (१९६१)

डॉ। श्रीकृष्ण लाल साहब

आचार्य , रामाश्रम सत्संग, सिकन्द्राबाद (उ। प्र।)

द्वितीय संस्करण १००० (१९८३)

मुद्रक तथा प्रकाशक

डॉ० करतार सिंह साहब

अध्यक्ष/आचार्य, रामाश्रम सत्संग, (रजि०)

सिकन्द्राबाद (उ० प्र०)

डिजिटल संस्करण - (2019)

डॉ० शक्ति कुमार जी

आचार्य/अध्यक्ष, रामाश्रम सत्संग, (रजि।)

ग़ाज़ियाबाद (उ० प्र०)

दो शब्द

सन्त-मत के अभ्यासियों के फ़ायदे के लिए यह थोड़े से पत्र जो परमसन्त मौलाना फ़ज़्ल अहमद खां साहब ने अपने गुरुमुख शिष्य परमसन्त श्री लालाजी साहब (श्री रामचन्द्र जी साहब) को लिखे, और जो पत्र परमसन्त श्री रामचन्द्र जी साहब ने मुझ सेवक और अन्य सत्संगियों भाइयों को लिखे, प्रस्तुत किये जाते हैं। यह पत्र ब्रह्म-विद्या की जान हैं और उनकी शिक्षा का निचोड़ हैं।

ब्रह्म-विद्या की गुत्थियों को नित्य की भाषा में अत्यंत सरल तौर पर समझाया गया है। जिन्होंने अभ्यास नया शुरू किया है या जो पुराने अभ्यासी हैं और किसी अवस्था को प्राप्त कर चुके हैं उन दोनों प्रकार के सज्जनों के लिए , यह पत्र बहुत लाभदायक हैं ।

सिकन्द्राबाद (यू० पी०) आसी -

गुरु पूर्णिमा, २७ जुलाई, १९६१ **श्रीकृष्ण लाल**

मङ्गलाचरण

अखण्ड मण्डलाकारम व्याप्तं ये न चराचरम !

ततपदं दर्शनं येस्य तस्मै श्री गुरुवे नमः !!

ॐ गुरुर ब्रह्मा, गुरुर विष्णु गुरुदेवो महेश्वरः !

गुरुः साक्षात पारब्रह्मः तस्में श्री गुरुवे नमः !!

हे सतगुरु स्वामी, दया कीजियेगा ,

मुझे अपने चरणों की रज दीजियेगा !

रहूँ आपके प्रेम में मगनो--सरशार।

मुझे अपनी भक्ति का वर दीजियेगा !

मैं बहरे-आलम में बहा जा रहा हूँ,

मुझे डूबने से बचा लीजियेगा !

मैं निर्धन हूँ, निर्बल हूँ, कामी हूँ, क्रोधी ,

बने जैसे मुझको निभा लीजियेगा !

हे स्वामी हों जिस काम से आप राज़ी ,

वही काम मुझ से करा लीजियेगा !

अमृत रस (1-15)

[आचार्यप्रवर सैयद मुर्शिद मौलाना फ़ज़्ल अहमद खां साहब, रायपुरी, नक्शबन्दी, मुजद्दिदी, मुज़हरी के कुछ पत्र परमसन्त महात्मा रामचंद्र जी साहब के नाम]

(१)

भाई जान-मद्द उम्रकुम-- बाद दुआ के वाज़े शरीफ़ हो कि मैं घर से बगरज़ ज़्यारत क़बूर औलिया अल्लाहे कराम निकला और कन्नौज, मकनपुर, लखनऊ में एक एक क़याम किया। जो जो अनवारो बरकात महसूस हुईं उनके बयान से ज़बान क़ासिर है – तुम्हारी सेहत के वास्ते भी दुआ की है।

(१) मद्द उम्रकुम- चिरायु हो (२) वाज़े शरीफ़ - आपको ज्ञात हो (३) ज़्यारत -धार्मिक यात्रा (४) क़बूर- कब्र का बहुवचन
(५) औलिया अल्लाहे कराम - परम् संतों (६) अनवारो-प्रकाश (७) बरकात- देन (८) क़ासिर - असमर्थ।

---

(२)

भाई जान-मद्द उम्रकुम, बाद सलाम के वाज़े शरीफ़ हो कि गिरामीनामा सादिर होकर बाइसे मसर्रत हुआ। आप बहुत ख़ुशी से अपनी पूरी कैफियत लिखिए, मुझे खुशी होगी। तक़लीफ़ क्यों होने लगी। भाई, मैं आख़िरत में भी इन्शा अल्लाह साथ होऊंगा। तुम दुनियाँ में मुझे तक़लीफ़ से बचाते हो। मैं तो तुम्हारे बाइस जो तक़लीफ़ हो उसको राहत जानता हूँ। तुम लोग मेरे लख़्ते जिगर हो। तुम्हारी थोड़ी सी तक़लीफ़ मुझे गवारा नहीं।

(१)गिरामीनामा - कृपा पात्र (२) बाइस - कारण (३) मसर्रत- ख़ुशी (४) कैफियत- ब्योरेबार हाल (५) आख़िरत-परलोक, क़यामत।

---

(३)

अज़ीज़ अज़ जान मद्द उम्रकुम। बाद दुआये तरक़्क़ी मदारिज के वाज़े शरीफ़ हो कि मैं ११ मुहर्रम को देहली से वापिस आया। जो-जो इनामो बरकात महसूस हुए उनका बयान नहीं हो सकता और ग़ालिबन आप लोगों को भी उसका हिस्सा महसूस हुआ होगा। अपनी सेहत का हाल इरक़ाम कीजिये ' या सलामो ' अक्सर ज़बानी पढ़ना सेहत को बहुत मुफ़ीद है। मेरा सारा घराना तुम्हारे तमाम ख़ानदान को दुआ और सलाम कहते हैं। मेरा इरादा था कि तुम लोगों के पास हाज़िर हूँ मगर अभी चन्दे मुल्तवी रहा।

(१) इरक़ाम कीजिये- लिखिए (२) मुल्तवी-स्थगित

(४)

भाई साहब उम्र फैयूज़कुम। बाद सलाम के वाज़े शरीफ़ हो कि आपका कार्ड मौसूल हुआ। लड़कों व नीज़ अपने ज़ुकाम वग़ैरह के बाइस जवाब में तसाहुल हुआ। मुआफ़ फरमाईयेगा। मेरी ऐसी क़िस्मत कहाँ जो मेरी बेटियाँ आयें। कहीं आँखों पर पलकें भारी होती हैं। मुझे तो बसरो चश्म मंज़ूर है, मगर तुम लोगों की तक़लीफ़ का ज़रूर ख़्याल है। इसका यह मतलब नहीं कि मैं तुमको मना करता हूँ। नहीं, हरगिज़ नहीं। बल्कि सचमुच मौसमें सरमा में सफ़र मुश्किल ख़्याल करता हूँ। मैं तो तुम लोगों से अज़हद खुश हूँ और शबो रोज़ दुआ करता हूँ। नज़दीक दूर यकसां। मुझसे ऐसे अमर में इस्तिफ़सार की ही क्या ज़रूरत थी। अज़ीज़ान रघुबर दयाल और लाला चिम्मन लाल को दुआ।

(१) उम्र फैयूज़कुम-चिरायु हो (२) मौसूल-प्राप्त तसाहुल-देरी (३)बसरो चश्म- सर आँखों पर (४) इस्तिफ़सार- पूछना

---

(५)

अज़ीज़ मन - बाद दुआ के वाज़े हो कि आपके दो ख़तूत और मनीआर्डर मौसूल होकर बाइसे इनशराह हुए। अल्लाह जल्लेशानहू तुमको सलामत बकरामत रक्खे। मैं दशहरे के अय्याम में इंशा अल्लाह घर पर रहूँगा। आप लाला चिम्मन लाल पर महनत करके तकमील करा दीजियेगा ताकि आपके बाद आपकी जानशीनी करें। मेरी तबियत नासाज़ थी। इस सबब से जबाब में भी ताख़ीर हुई।

(१) ख़तूत- ख़त का बहुवचन (२) तकमील -पूर्णता (सारूप और सायुज्य अवस्था की (३) जानशीनी करें-उत्तराधिकारी हों
(४)अय्याम में -दिनों में (५)इंशा अल्लाह- यदि ईश्वर को मंज़ूर हो ।

---

(६)

अखवी अरश्दी मद्द उम्रकुम। बाद दुआ के वाज़े शरीफ़ हो कि दिनों से आपका हाल मालूम नहीं हुआ।

बई सबब मुतफ़क्किर हूँ। तुमने रुख़सत ली या नहीं। रमज़ान शरीफ़ आया। इरादा है कि रात को बक़दरे ताक़त जागूँ और ख़ुदा को याद करूँ। अहबाबों में से जिसको तौफ़ीक़ हो तो वह भी ऐसा करें तो ज़हे सआदत, वरना नहीं। गो मैं हर तरह बे सामान हूँ मगर इरादा क़वी है। तुम भी दुआ करो।

(बई सबब - इसी कारण : मुतफ़क्किर- शोच वश, चिंचित : तौफ़ीक़-सामर्थ्य : ज़हे सआदत - परम् सौभाग्

(७)

अज़ीज़ अज़ जान मद्द उम्रकुम - बाद दुआये दराज़ी उम्रो दरजात के वाज़े शरीफ़ हो कि आपके दो कार्ड मौसूल हुए। बक़ाई पीराने उज़्ज़ाम की मुहब्बत मुसमिरे बरकात है। आतिशे दुनियाँ तो क्या है, आतिशे आख़िरत भी सर्द है। अल्लाह जल्लेशानहू तुमको अलुद्दवाम अपने हिफ़्ज़ो अमन में रक्खे। अज़ीज़ी चिम्मन लाल साहब का दिनों से कोई खत नहीं आया मुझे ख़्याल है। उनसे मेरा सलाम ज़रूर कह दीजियेगा। मैं सख़्त अलील रहा हूँ और अभी हूँ। दुआ करो कि अल्लाह तआला रूहानी और जिस्मानी सेहत अता फरमा।

(५)पीराने उज़्ज़ाम-परमसंतों (५) मुसमिरे-फलदायक (५)आतिश -आग (५) अलुद्दवाम- सदा सदा को (५) रूहानी-आध्यात्मिक (५) जिस्मानी-शारीरिक (५) सेहत -स्वास्थ्य

---

(८)

मख़दूम भाई ज़िल्लहूउलआली - बाद सलाम मसनूना कि आपका करामतनामा सादिर होकर इफ़्तिख़ार का बाइस हुआ। मेरी तबियत अच्छी नहीं। वही सर घूमता है, नाक़ीह हूँ। भाई, आजकल तो पीरी मुरीदी तो नाम को भी बाक़ी नहीं रही। लोगों का क़सूर भी नहीं। हमारी ही बुराइयों का नतीज़ा है। लोग जहां और खेल खेलते हैं वहाँ पीरी-मुरीदी भी करते हैं। सादिक़ मुरीद मिलना उन्क़ा की तरह नापैद है। और यही हाल पीरों का भी हो गया है। इल्ला माशा अल्लाह, बहुत थोड़े मुरीद फ़िदायी होते हैं। और बहुत थोड़े पीर भी। पस अब क्या किया जाय। ' ज़माना बातों न साज़द, तू बा ज़माना बसाज़।' पस आपसे अगर हो सके तो पीराने उज़्ज़ाम को बदनाम न करो। और ख़ल्के ख़ुदा से महरबानी ख़ुश ख़ुल्क़ी और तालीफ़ कलबी से पेश आओ। और इस पर भी अगर वह लोग नफ़रत करें तो उनके वास्ते दुआ करो कि शैतान ने उनको मग़लूब कर लिया है। वाजिबुउल रहम है। और अगर न कर सको तो ख़ुद दिन रात यादे ख़ुदा में मसरूफ रहो और ख़ुद को अपनी ज़मीय मुरादात को नेस्तोनाबूद समझो और अपनी दीद में महब रहो।

उमर-जैद से कोई सरोकार न रखो अपना सरकारी काम किया और यादे ख़ुदा में मसरूफ़ रहे। जो वह चाहेगा वह होगा। अगर कोई आया तो ख़ातिर की और जो न आया तो शिक़ायत नहीं। 'बेहमा' और ' वाहमा' यही है। हमारी जानिब से ख़ैर-ख़्वाही में कोई क़सूर न हो कि जिन्होंने हमारा हाथ पकड़ा कहीं उनको शैतान न छीन ले। उसके वास्ते दुआ और हिम्मत से काम लो। मैं तो तुमको अपना क़ायम -मुक़ाम ख्याल करता हूँ। और मेरी हिम्मत ऐसी आली है कि मैं किसी अमर को अनहोना नहीं ख़्याल करता हूँ। जिस बात पर हिम्मत करता हूँ, वह ही होती है, उसी का ज़हूर होता है। फिर तुम क्यों पस्त हिम्मत होते हो ? हाय, मेरी कमज़ोरी ने तुम में

सरायत किया है। ऐसा न हो कि जलसा ख़राब हो जाय। सब अहबाब को बुलाकर फिर हिम्मत करो और ख़ुदा से तौबा करो और मेरे वास्ते दुआ करो और कामिल मुहब्बत से एक दूसरे की ख़ैर-ख्वाही करो। एक दूसरे में फ़ानी होओ। और भाई, मुझे मुर्दा ख़्याल करो। मेरे बाद जो करते वह अब करो।

(१) नाक़ीह-निर्बल (२) पीरी-मुरीदी- गुरु और शिष्य पना (३) सादिक़ मुरीद-सच्चा शिष्य (४) उन्क़ा-एक पक्षी (५) नापैद- पैदा ही नहीं हुआ (६) इल्ला माशा अल्लाह-अतिरिक्त पुरुष (एक्सेप्शन) जिनकी ईश्वर रक्षा करे(७) फ़िदायी -समर्पित (८) ज़माना बातों न साज़द, तू बा ज़माना बसाज़ - ज़माना तेरा साथ नहीं देता तो तू ज़माने से मिल जा अर्थात अपनी इकाई अलग न रख, या तो उसको अपने में मिला ले या उसमें मिल जा (९)पीराने उज़्ज़ाम-अपने वंश के पूर्व पुरुष (१०) ख़ल्के ख़ुदा-सारी सृष्टि (११) ख़ुश ख़ुल्क़ी- सुन्दर व्यवहार (१२) तालीफ़ कलबी-दिल जमई, प्रेम (१३) नफ़रत-घृणा (१४) शैतान-माया (१५) मग़लूब-छा जाना वाजिबुउल रहम- दया के पात्र (१६) ज़मीय मुरादात-सभी इच्छाओं और अरमानों को नेस्तोनाबूद-न था और न है (१७) दीद - देखने (१८) महब-संलग्न , 'बेहमा' और वाहमा' - सबसे अलग भी और सबके साथ भी (१९) क़ायम -मुक़ाम - जॉ नशीन, रिप्रेजेन्टेटिव(२०) ज़हूर-प्रगटीकरण
(२१) सरायत करना -घुस जाना (२२) अहबाब -दोस्तों हिम्मत -साहस (२३) तौबा -पिछले के लिए पश्चाताप और आगे न करने का प्रण।

---

(९)

३१-५- १८९९ / अखवी अइज्जी सल्लमकुम अलेकुम। बाद सलाम और दुआ कि आपका कार्ड मौसूल होकर मसर्रत का बाइस हुआ। अल्लाह जल्लेशानहु। आपको दीनी और दुनियावी मुरादात पर सरफ़राज़ करे। मैं दोनों उमूर में हिम्मत और दुआ करूंगा। और उम्मेद है कि दोनों मुस्तजिब होंगे। मैं देखता हूँ कि पीराने उज़्ज़ाम की अरवाह की तवज्जहआत आपकी जानिब मुतवज्ज्ह है। ऐसी सूरत में कोई मुश्किल नहीं जो आसान न हो और क्यों न हो, तुम मुहब्बत और ऐतक़ाद में अपना सानी नहीं रखते। चिम्मन लाल साहब को दुआ।

(१) दीनी-पारलौकिक (२) दुनियांवी- इहलौकिक मुरादात - चाहें , सरफ़राज़ करे - सर पर लादे, प्रदान करे (३) उमूर - बहुवचन अमर का, जिसके अर्थ काम हैं (४) मुस्तजिब होंगे -दुआ क़बूल होगी (५) पीराने उज़्ज़ाम- वंश के संत सद्गुरुओं की आत्मायें (६) ज़ानिब -ओर (७) मुतवज्ज्ह-रुख किये हुए ऐतक़ाद-विश्वास (८) सानी-समतुल्य।

---

(१०)

अज़ीज़ी मुंशी रामचंद्र साहब - मद्द उम्रकुम। बाद सलाम के वाज़े शरीफ़ हो की भाई तुम औरतों को सलाहे कुल की तवज्जोह दो। और उनको अपने ख्याल से नेक बनाओ। और नज़र ख़ुदा पर रक्खो। ख़ुदा ने तुमको वह हिम्मत दी है कि जो ख़्याल करोगे, इन्शा अल्लाह वही होगा। मुन्शी चिम्मन लाल साहब को सलाम। यादे ख़ुदा से ग़ाफ़िल न होना। और इस क़ज़िये को अक्ल से फ़ैसिल कराना चाहिए।

(१)क़ज़िया - झगड़ा (२) फ़ैसिल - निबटारा।

(११)

२२-१०-१८९९, अख़वी अइजज़ी मद्द उम्रकुम। बाद सलाम के वाज़े हो कि आपका करामतनामा सादिर होकर बाइसे इनशराह हुआ। अल्लाह जल्ले शानहू बामुराद रक्खे। आमीन। पीरान की नज़रे इनायत तुम्हारी जानिब मुलतलिफ़ है। तुम्हारे मुब्तदी औरों से कहीं बढ़कर है। ख्वाजा नक्शबन्द फ़रमाते हैं -

अव्वले मा आख़िरे हर मुंतहीस्त

आख़िरे मा जेबे तमन्ना तिहीस्त

जब ख़ुदा चाहता है मुब्तदी मुंतही हो जाते हैं। उम्मेद कि अपने हालात ज़ाहिरी और बातिनी से जल्द जल्द मुत्तले फ़रमाते रहा करोगे।

(१)नज़रे इनायत - कृपा दृष्टि (२) मुलतलिफ़ - लगी हुई, झुकी हुई (३) मुब्तदी -साधक (४) मुंतही-सिद्ध अव्वले मा आख़िरे हर मुंतहीस्त /आख़िरे मा जेबे तमन्ना तिहीस्त - दूसरे जहाँ समाप्त होते हैं उस मुक़ाम से हम प्रारम्भ करते हैं और हमारा अंत वहां होता है जहाँ तम्मनाओं (इच्छाओं) की समाप्ति हो जाती है (५)बातिनी - आंतरिक

(१२)

ब्रादरम अज़ीज़ मद्दउम्रकुम - आपका कार्ड मौसूल होकर बाइसे तवानीयत और इन्शराह हुआ। अल्लाह जल्लेशानहु आपको दारेन में शादक़ाम और सुर्ख़रू रक्खे। आमीन। लड़कों के बुख़ार का सुनकर सख़्त अफ़सोस हुआ। अल्लाह ताला उनको बहुत ज़ल्द शिफ़ाये कुल्ली अत करे। आमीन। ज़ैल में तावीज़ दोनों के वास्ते दो लिखता हूँ। उनको काटकर उनके गले में बाँध देना। यह नाम पाक हैज़ा व चेचक और ग़ालिबन ताऊन को अज़हद मुफ़ीद है। तुमको इसकी इज़ाज़त है जिसको चाहो लिख दिया करो। इन्शाअल्लाह ज़रूर फ़ायदा होगा। अज़ीजी रघुवरदयाल का ख़त आया था और उसमें कुछ शिक़ायत लिखी थी, फिर उसके बाद कोई ख़त नहीं लिखा कि उसका क्या अंजाम हुआ। इस अम्र को ज़रूर लिखना चाहिए। उस अज़ीज़ से बाद सलाम के कह दीजियेगा। और अज़ीज़ो बाबू चिम्मनलाल साहब को बाद सलाम के वाज़े हो कि तुम भी इन ताबीजों की नक़ल करके अपने बच्चों के गले में डाल दो। और तुम यादे इलाही में शाग़िल और मसरूफ़ रहो।

(५)तवानीयत-इत्मीनान, तस्सली (५) दारेन- दोनों लोक (इहलोक और परलोक) (५)शादक़ाम-खुश (५) सुर्ख़रू-मुँह उजला (५) शिफ़ाये कुल्ली - पूर्ण स्वास्थ्य (५) ताबीज़ - जंत्र (५) शाग़िल -अभ्यस्त (५) मसरूफ़ - व्यस्त /संलग्न

(१३)

२-४-१९००, मुंशी चिम्मनलाल साहब का हाल मालूम हुआ। अल्लाह जल्लेशानहू जल्द उनकी मुखत्यारी चमका दे। मैं उनसे बहुत ख़ुश हूँ। अल्लाह ताला आपको और उनको दारेन में सुर्ख़रु और कामयाब रक्खे।

अलहम्दो लिल्लाह कि मैं उर्स शरीफ़ (अजमेर शरीफ़) से फ़ारिग़ होकर बखैरोख़ूबी अपने मकान पर आया। जो इनायत इस ज़रर्ये बेमिक़दार पर हुई उसका बयान कभी ज़बानी कहूँगा। इन इनायत के क़ाबिल मेरा मूँह न था। आपके वास्ते और अज़ीज़ों के वास्ते दुआ कर दी है।

(५)ज़रर्ये बेमिक़दार-तुच्छआतितु तुच्छ

---

(14)

१३-१२-१९०१ , बाद सलाम आंकी आपका करामतनामा आया। अहवाल मालूम हुआ। आपने तो अब लिखा और मैं दिनों से फ़ितूर देख रहा हूँ। अल्लाह जल्लेशानहू के दस्तेक़ुदरत में हिदायत और ज़लालत, दोस्ती और दुश्मनी है। जिसको चाहता है मेहरबानियां देता है और जिसको चाहता है नामहरबान कर देता है। इसी तमाशे का नाम दुनियाँ है। इसी में गिरफ़्तार रहना मना है। आप यह नामहरबानियाँ देखो और ख़ुश रहो। देखिये अंजाम क्या हो। अल्लाह ताआला की ज़ाते मुक़द्दस के सिवा हर एक से नाउम्मेद हो जाओ। सब फ़ानी हैं। सब की दोस्ती और दुश्मनी की इन्तहा है। इसमें दिल लगाना बेजा है। ख़ैरियत मिज़ाज़ से गाहे गाहे मुत्तिलै फ़रमाते रहिएगा। फ़लाहे दारेन के वास्ते दुआगो हूँ।

(१)फ़ितूर -विघ्न , बाधा (२) दस्तेक़ुदरत-समर्थ हाथ (३)हिदायत -राह लगाना (४) ज़लालत -गुमराही बेराह हो जाना (५)महरबानियाँ -सुख (६) ना-महरबानियाँ - दुःख, कष्ट (७)फ़ानी-नाशवान (८) फ़लाहे दारेन - दोनों लोकों (दुनियाँ और परलोक से मोक्ष पाना
(९) दुआगो - प्रार्थी

२६-२-१९०२ अखवियम मद्द उम्रकूम । बाद सलाम आंकी आपका लिफ़ाफ़ा पहुंचा । बदरज़ा ग़ायत सुरुरो इम्बिसात पैदा हुआ । अल्लाहताला आपकी जात से आलम को मुनव्वर करे । सब अज़ीज़ों से कह दो कि दुनियाँ चंदरोज़ा है । जो वक्त यादे ख़ुदा में गुज़रे ग़नीमत है । आप ज़रूर लाला मदन मोहन लाल को लिखिए इन्शा अल्लाह फ़ायदा होगा । वह शख़्स भी बहुत अहल आदमी है। अज़ीज़ी कृष्ण सहाय वाक़ई मस्त है । लड़कियों की शादी इन्शा अल्लाह अच्छी होगी । कोई ज़रूर सबब होगा । हमारी शर्म ख़ुदा के हाथ में है । इत्मीनान रखियेगा ।

(५)बदरज़ा ग़ायत - अत्यन्त (५) सुरूर -ख़ुशी (५) इम्बिसात - खिलना, ख़ुशी में फैलना (५) आलम-संसार मुनव्वर-प्रकाशित (५) अहल-अधिकारी

(परमसन्त महात्मा रामचंद्र जी महाराज के कुछ पत्र जो उनके प्रेमी जनों के लिए लिखे गए)

=======

(१)

अज़ीज़े मन सल्लमहू - दो कार्ड आये, हालत मालूम हुए । अज़ीज़ रघुवर दयाल को भेज देने का मुकम्मिल इरादा था लेकिन क्या किया जावे कि चंद साहिबान के खत इलाहबाद व दीगर जगहों से आये हैं कि वे लोग इस तातील में ख़ास उन्हीं से मिलने आ रहे हैं । एक यह मज़बूरी है । दूसरी मज़बूरी यह है कि मोहर्रम के अय्याम (दिनों) में आजकल जो अफ़वाहें बेबुनियाद मशहूर हैं उनके बाइस उनके घर वालों का दिल कच्चा हुआ और यही रुकावट का बाइस हुआ । मैं आपके वास्ते मुनासिब हाल यह समझता हूँ कि चढ़ाव का अभ्यास बहालत मौज़ूदा आपके लिए काफ़ी हो गया । इस वक़्त इसकी ज़्यादा ज़रूरत नहीं मालूम होती । लेकिन तावक्ते कि इन्द्रियाँ, मन और दीगर तत्व मग़लूब होकर तरतीब में न आ जावें उस वक़्त तक लतायफ़ नहीं आती और न असली शांति मिलती है । और यह काम बिना तप किये हुए हासिल नहीं होता । आपके वास्ते जो

तप लाज़िम है वह यह है कि तज़किये-नफ़्स हो जावे। तज़किये-नफ़्स से मतलब यह है कि जो आदात और ज़ज़बात ख़िलाफ़ अदब और तहज़ीब हो रहे हैं वो ठीक हो जावें, तमाम लतायफ़ मोहजिज़्ब होकर तकमील को पहुँच जावें। आपका अभ्यास और शगल यह होना चाहिए कि आप अपने हर एक बेजा उभार और जज़्बे को रोक कर मौतदिल हालत पैदा करें। एक जज़्बा और एक आदत को जिसके आप मग़लूब हो रहे हैं उसको आप अव्वल मराक़िबा में सामने रखें और ख़ुदा से ख़लूसकल्ब के साथ रोज़ाना इस तरह दुआ कीजिये कि हालते रिक़्क़त तारी हो जावे और उससे मदद चाहें कि यह आदत मग़लूब हो जाये। इन्शा अल्लाह फ़ायदा होगा और काम बनेगा। ' हिम्मते मर्दां मददे ख़ुदा ' हमेशा का मशहूर मकूला है और सही है। और यह भी मशहूर है कि ' ई सआदत बज़ोरे बाज़ूनेस्त गर न बख़्शह खुदाए बख़शन्दा' इसके लिए यह जबाब है कि हमारे और आप सब लोगों के सर पर बुज़ुर्गों का साया है और यह मदद काफ़ी है। आपने बहुत मुनासिब किया जो क़ानूनगो साहिब की मर्ज़ी के मुताबिक़ उनको जबाब दे दिया। बो बुज़ुर्ग हैं, उनकी मर्ज़ी होनी चाहिए।

(१)मुकम्मिल -पूरे तौर पर (२) बाइस-वजह (३) मग़लूब -काबू में आना (४) तरतीब- ठीक ढंग (५)लताफ़त -सूक्ष्मता (६) तज़किये -नफ़्स -इन्द्रिय दमन (७) लातायफ़-चक्र (८) मोहजिज़्ब होकर तकमील -विकसित होकर पूर्णता (९) जज़्बे -वासनाओं (१०) अव्वल मराक़िबा-अभ्यास (११) ख़लूसकल्ब-सच्चे दिल (१२)रिक़्क़त तारी-रोना आ जावे (१३) मग़लूब -दब जाये (१४) इन्शा अल्लाह-अगर परमात्मा ने चाहा (१५)' ई सआदत बज़ोरे बाज़ूनेस्त गर न बख़्शह खुदाए बख़शन्दा- ए गुण साधन ते नहिं होई, तुम्हरी कृपा पाव कोई कोई

(२)

अज़ीज़े मन दुआ - ख़त मुफ़स्सिल , मौसूल हुआ। यह मुसीबत चारों तरफ़ फैल रही है । समझ में जो कुछ आता है वह यही आता है कि एक हवा है जो चल रही है और उसके ज़ेर असर सब आ जाते हैं। परमात्मा अपना फ़ज़्ल करे। आपके हालात मालूम हुए। आपकी समझ में कभी आया कि तहसीलदार साहब आपसे क्यों नाराज़ हैं और चपरासी इस क़दर क्यों पावरफुल हो जाता है। मैने यह सुना है कि अहलकारान भी दरपर्दा तुमसे दिल में नाराज़ हैं और तुमको अच्छा आदमी नहीं समझते। मरव्वत और लिहाज़ से तुम्हारे मुंह पर तुम्हारी सी कह देते हैं। अगर ऐसा है तो ग़ौर करो, खूब ग़ौर करो कि तुममे क्या नुक़्स है। मेरी समझ में जो आया है अगर कहो तो कह दूँ। ग़ालिबन तुम हठी हो, अपनी मर्ज़ी और बात को सब पर ग़ालिब रखना चाहते हो और ज़बरदस्ती अपने ख्याल के मुतीअ करना चाहते हो। यह बहुत मुमकिन हो सकता है कि जिस बात को तुम अच्छा ख़्याल करते हो दूसरे उसको अच्छा नहीं समझते, फिर वो तुम्हारे हमख़याल क्यों हो जाएँ। क्या ताक़त है आपके पास जो आपके ज़ेर असर हो जावें। फिर तहसीलदार को क्या पड़ा हुआ है कि खव्वामखाह तुमसे

परखास रक्खे। कोई न कोई बात ज़रूर होगी, जिसको वे करवाना चाहते होंगे और तुम नहीं करते होंगे और खिलाफ़ मर्ज़ी करते होंगे। मेरे ख़्याल में तहसीलदार साहब, ऐहलकारान और चपरासी मज़कूर तुमको मुदम्मीग ख़्याल करते हैं और उनको पुख्ता ख़्याल हो गया है कि तुम अपनी बात के आगे किसी को कुछ नहीं समझते और एक हठ पर क़ायम हो। भाई साहब , यह हठ काम का नहीं है। जिसको चार पंच बिल्ली कह दें वह बिल्ली हो गयी। सोसाइटी में रहकर ऐसी हठ काम नहीं दे सकती। अगर बाक़ई औरों के ख़्यालात तुम्हारे ख़यालात से नहीं मिलते तो सब्र करो , नफ़्स पर जब्र करो , ख़ामोशी अखित्यार करो , अपने आपको दीन और क़सूरबार समझो। सबसे बढ़िया बात मैं तुमको बताता हूँ जो मेरे गुरु महाराज ने ऐसे ही मौक़े के लिए मुझे बतलायी थी और मुझको क़ामयाबी हुई थी , वह यह है कि जिस शख्स से तुम्हें ख़ौफ़ हो और उलझन होती हो उसको अपना ख़ैरख़्वाह और अपना दोस्त ख़्याल करो और ज़बरदस्ती इसकी मश्क़ बढ़ाओ। एकांत में बैठकर बिला नाग़ा थोड़ी देर यह मराकबा किया करो कि फ़लां शख्स मेरा दोस्त है और बिहीख़्वाह है , उसकी मिसाली शक्ल को अपने सामने बिठलाओ और यह ख़्याल करो कि उसके दिल से तुम्हारी तरफ़ से बुराई के ख़्यालात निकल गए और तुम्हारी निस्बत बेहतरी के ख़्यालात समा गए। जब कभी पास बैठने का मौक़ा हो तो उसकी शक्ल पर नज़र जमा कर जो सांस बाहर निकालकर डालते हो उस साँस के साथ साथ यह भी ख्याल करो कि तुम्हारी मुहब्बत के ज़र्रात या पार्टिकल्स (पार्टिकल्स) उस शख्स के दिल में घुस कर सरियत कर गए (असर कर गए) और जब सांस बाहर की तरफ़ से अन्दर की तरफ़ लेते हो तो यह ख़याल करो कि उस शख़्स के बुरे ख़यालात जो तुम्हारी तरफ़ से उसके दिल में थे उनको तुमने घसीट लिया है और एक तरफ़ फेंक दिया है। यह अमल इस तौर से इतना करो कि एक चक्र मिसल चर्खी के बन जावे। यह अमल निहायत मुफ़ीद और जूद असर है। थोड़े दिन में मामले का रुख़ मिस्ल पानी के पलट जावेगा। और तुम ताज्जुब करोगे कि क्या से क्या हो गया। बशर्ते कि यह अमल तुम्हारा नफ़रत की शक्ल से प्रेम की शक्ल में बदल जाय। पहले दिक़्क़त होगी। यह काम पहाड़ की तरह भारी होगा। लेकिन मर्दों के लिए यह आसान होगा। ' मुश्क़िले नेस्त कि आंसा न शबद ' भाई साहब आप ज़िल्लत का लफ्ज इस्तेमाल कर रहे हैं तो नौकरी कौन सी इज़्ज़त की चीज़ है। अगर आप अपनी ज़िल्लत ख़्याल करते हैं तो उसकी तह में इज़्ज़त की ख़्वाहिश छिपी हुई है । ज़िल्लत और इज़्ज़त सब निस्बती अल्फ़ाज़ हैं। आपको अपनी इज़्ज़त का ख़्याल है इसलिए दूसरों के फ़ैल आपके लिए ज़िल्लत हैं। अगर दूसरों की आप इज़्ज़त करें और और अपने आप को ज़लील ख़्याल करें तो आपकी इज़्ज़त होगी। दूसरे लफ़्ज़ों में ऐसा समझिये कि आप अपनी खुद इज़्ज़त करें अपने आप इज़्ज़त करना क्या है , दूसरों को ज़लील न समझना , किसी के मामलात में दख़ल दरमाक़ूलात न करना , ख़ुदाई फ़ौज़दार न बनना , किसी के भेद

दरयाफ्त न करना , दूसरों की बात पर अपनी बात को तरजीह न देना , हुज़्ज़त न करना , बहस न करना , पक्षपात न करना , अपने आपको यह साबित न करना कि मुझको दरअसल यह बात सही मालूम है। बाक़ी गुफ्तगू करने वाले ग़लत हैं। ' हर कस बख़्याले ख़्वेश ' का मज़मून है । नहीं मालूम तुम्हारे ख़्यालात , तजुरबात , वाक्यात , मुशाहिदात के लिहाज़ से तुम्हारी दलील किस हैसियत की है । और दूसरों के हालात वगैरह के लिहाज़ से उनकी दलील किस तरह की है। वह अपनी राह , तुम अपना राह। क़ानूनी वाक़्यात में भी आप अथॉरिटी (अथॉरिटी) नहीं हैं जो ख़ामख़्वाह लोग आपका इस्तदलाल सही मान लें और ज़बरदस्ती कारबन्द हो जाएँ। भाई साहब प्रेम से तुम लोगों को जीत सकते हो , और कोई तरीक़ा नहीं है। यह बड़ा तप है। स्वामी ब्रह्मानंद जी ने भी यही इशारा किया है कि जिसको तुम नहीं समझते लेकिन मैं समझता हूँ कि उन्होंने क्या कहा ? तुम्हारा नफ़्स अभी मुकम्मिल नहीं है। एक अंग अधूरा है। स्वामी जी महाराज तप के अधिष्ठाता हैं । इसलिए उनकी शक्ल में यह हिदायत तुमको मिली है। मन जीते जगजीत। नफ़्स का काबू करना बड़ा तप है और यह मुश्किल है। अब रास्ता मुश्किल आया है , इससे घबराने लगे। मरदानावार क़दम बढ़ाये चले जाओ। देखो ' क़दमे इश्क़ बेशतर बेहतर '। ज़्यादा क्या लिखूं , तुम ख़ुद समझदार हो। बच्चों को दुआ।

(१)मुदम्मीग-घमंडी (२)ज़र्रात-कण (३) मुश्क़िले नेस्त कि आंसा न शबद-ऐसी कोई मुश्किल नहीं कि जो आसान न हो सके (४) फेल -कर्म (५) मरदानवार- मर्दों की तरह (६) तमीज़ी कुब्बत -विवेक शक्ति (७) मुक़्क़मिल -पूर्ण बाज़ातहू- स्वभावतः (८) आफ़ताब -सूरज (९) हस्ती-अस्तित्व (१०) सर्फ -खर्च

---

(३)

अज़ीज़े मन, तुम्हारा खत मिलने से इस वक्त तक का ज़माना तक़लीफ़ों में गुज़रा है। मैं और मेरा तमाम ख़ानदान बीमार रहा । जिस लड़की की पारसाल शादी हुई थी और मेरी नवासी का इंतक़ाल ख़ास वाक़यात हैं। जहां तक मेरी समझ है और जिस क़दर मैं तहरीरी तौर पर इज़हार करने का माद्दा रखता हूँ बहुत मुख़्तसिर अल्फ़ाज़ में आपके ख़त का जबाब देने की कोशिश करता हूँ। हालांकि इस मामले में तहरीर और तक़रीर दोनों को आजिज़ पाता हूँ और उम्मीद नहीं है कि वह मतलब को पूरे तौर पर हलक़ के अन्दर उतार दे। मुझे आपके ख़त को देखकर यह ताज्जुब हुआ की बहुत ज़्यादा हिस्सा ख़त का आपके सवालात का जबाब है।

नहीं मालूम कि आम लोगों ने ख़ुदा और रूह को क्या समझ रखा है। मेरी समझ में जो शख्स की ख़ुदा के बाबत गुफ़्तगूं करता है और उसकी हक़ीक़त को तलाश करने वाला है वह रूह है और जिसकी उसको तलाश है वह ख़ुदा है। अगर ऐसा नहीं है तो न तो वह इंसानी रूह और न कोई उसका ख़ुदा है । चूंकि जानवरों का चलना -फिरना, ज़िंदा रहना भी एक रूहानियत है और इंसान की भी - फर्क दोनों में सिर्फ कांशसनेस का है

जिस क़दर कि जिस शख्स की क़ुब्बते तमीज़ी ज़्यादा है उसी क़दर उसकी रूहानियत साफ़ है। इन्सान की तमीज़ी क़ुब्बत ही इस बात की दलील है की वह अपने सिवाय किसी दूसरी वास्तु को देखता, जानता और समझता है और अपनी मौजूदा हालत से ज़्यादातर जानने, देखने और समझने की हज़ारों तरह पर कोशिश करता है और करता रहेगा। वह यह समझता है कि मैं कुछ हूँ और यह भी समझता है कि मेरे अलावा दूसरी चीज़ भी है और यह भी समझता है कि मेरे और दूसरी चीज़ के समझने और तमीज़ करने कि क़ुब्बत भी दरम्यान में है। इससे कोई इंकार नहीं कर सकता। अगर यह दरम्यानी क़ुब्बते तमीज़ी हर शख्स में न होती तो वह हरगिज़ न अपने को समझता न दूसरों को। पस जो कुछ भी असल है वह क़ुब्बते तमीज़ी है क़ुब्बते तमीज़ी के दर्ज़े और मरतबे हैं। मिट्टी और पत्थर के मुक़ाबिल दरख्तों और घास में क़ुब्बते तमीज़ी और दरख्तों के मुक़ाबले जानवरों में , और जानवरों के दरम्यान बाज़ बाज़ बाज़ खास जानवरों में और फिर जानवरों के मुक़ाबिल ज़ाहिल आदमियों में, जाहिल आदमियों के मुक़ाबले ज़ाहिर आलिम आदमियों में और फिर ज़ाहिर आलिम आदमियों के मुक़ाबले बातिनी आलिमों में और बातिनी आलिमों में और बातिनी आलिमों के मुक़ाबिल अमल करने वाले लोगों में। यह सब तमीज़ी कुब्बतें अपनी अपनी हैसियत और दर्ज़ों के मुताबिक़ रूह हैं और जो चीज़ कि तमीज़ की जाती है वह भी अपने अपने दर्ज़े के मुताबिक़ उसका ख़ुदा -- एक हैसियत से रूह है और दूसरी हैसियत से ख़ुदा। इसके अलावा कुछ नहीं। यही रूह है और यही ख़ुदा की हस्ती। मैं और आप जुज़वी ज्ञान हैं और ख़ुदा मुकम्मिल ज्ञान बल्कि ज्ञान स्वरुप। जहाँ रूह का सवाल आता है वहां ज़रूरी ख़ुदा का सवाल आकर मौज़ूद हो जाता है। अगर रूह और ख़ुदा का सवाल न पैदा हो वहाँ भी बज़ाताहू रूह और ख़ुदा मौज़ूद हैं। मतलब यह है कि चाहे कोई आस्तिक हो या नास्तिक, रूह और ख़ुदा ज़रूर मौज़ूद हैं। अलबत्ता जानवरों की मानिन्द अगर किसी शख्स में इस क़दर रौशनी तमीज़ की गुम हो गयी है कि वह अपने आपको किसी दूसरी चीज़ से तमीज़ नहीं कर सकता तो यह नहीं कहा जा सकता कि रूह और ख़ुदा मौज़ूद नहीं हैं। (बल्कि यह कहा जायेगा कि उसमें क़ुव्वते तमीज़ी बिलकुल नहीं है) चमगादड़ अगर आफ़ताव को न देख सके तो अफताव की अदम मौजूदगी नहीं साबित हो सकती। (बल्कि यह कहा जायगा कि चमगादड़ आफ़ताब को नहीं देख सकता) सितारे आफ़ताब की रौशनी में दिखाई नहीं देते मगर न दिखाई देने से उनकी हस्ती से इनकार नहीं हो सकता। अगर किसी औज़ार और आले के ज़रिये से किसी शख्स की विसारत (देखने की शक्ति) में यह क़ुब्बत हो सके कि वह सितारों को आफ़ताब कि रौशनी में भी देख सके तो यह खास बात होगी और वह ऐनुल-यकीन (पूर्ण विश्वास) के दर्ज़े तक पहुंचेगी कि आफ़ताब की रौशनी में भी उसने सितारों को देख लिया जो दूसरे बाकी लोग नहीं देख सकते थे। ख़ुदा और रूह कोई विज़िबल (दिखाई देने वाली) चीज़

नहीं हैं जो देखे जा सकें। अलबत्ता इल्म के अहाते थोड़ी बहुत आ सकती है। जैसा और जिस वक्त और जिस हैसियत का उसका इल्म होगा, जैसा कि ऊपर बयान किया गया है, वैसा ही उसका अनुभव (रेअलीसाशन) होगा। रेअलीसाशन इसी का नाम है, बाकी ढकोसले बाज़ी है। और ऊपर के बयान को राउंड अबाउट एक्सप्लनेशन भी समझ सकते हैं और हक़ीक़त भी । जैसी आपकी समझ हो। दूसरी तरह पर असली समझ कशफ़ी (प्रभु की कृपा द्वारा) हो सकती है जिसमें दलील की हाजत नहीं। कशफ़ी तौर पर समझा देना ऐसा है जैसा कि रामकृष्ण परमहंस जी ने स्वामी स्वामी विवेकानंद को कराया था। लेकिन मैं तो रामकृष्ण परमहंस नहीं हूँ , मुमकिन है कि आप विवेकानंद हों। रामकृष्ण परमहंस वाक़ई गुरु कहलाने के क़ाबिल थे और ऐसा ही गुरु होना चाहिए। लेकिन ग़ालिबन सिर्फ एक ही विवेकानंद जी ऐसे चेले भी थे , बाक़ी सब ऐसे हुए जो बतअदरीज (शनैः शनैः) इस मामले को पहुंचे होंगे। इस लिहाज़ से स्वामी परमहंस जी को भी न मालूम किस क़दर तादात को अर्से तक लटकाये रखने और धोखा देने के जुर्म के मुर्तकिब (दोषी) होते रहे। इस फ़क़ीर की तो गिनती ही क्या है ?

मैं इकरार करता हूँ कि अपनी मौजूदा हालत और अक़ीदे के मुआफ़िक मैं अनुभव (रीलीज़) कर चूका हूँ कि ख़ुदा भी है और रूह भी है और अभी नहीं मालूम कि ज्ञान कहाँ जाकर ठहरेगा और कहाँ इसका ठिकाना होगा। क्योंकि मुक़्क़मिल ज्ञान परमात्मा में ही है न कि रूह में, और जब यह सूरत है तो नाचीज़ रूह की क्या मज़ाल है कि परफेक्ट रेअलीसाशन (मुक़्क़मिल ज्ञान) का दावा कर सके। आपको अख्त्यार है कि ऐसे मुक़्क़मिल आदमी को आप अगर चाहें तो तलाश कर लें।

मैं मुक़्क़मिल गुरु होने का दावा नहीं कर सकता। प्राइमरी स्कूल का सबसे नीचा मुदर्रिस अपनी ज़ात से किसी अलिफ़ बे पढ़ने वाले को धोखा नहीं देता। एक गुरु और मुदर्रिस तो म।ा। क्लास को पढ़ाता है और एक प्राइमरी स्कूल के सबसे नीचे 'स सेक्शन को। अगर बतदरीज (क्रमश) कशफ़ी तौर पर तालीम हासिल करने को आप रज़ामंद हों तो वक़्त को आप सर्फ़ कीजिये। ख़्याली मनसूबों से क्या हो सकता है। ज़ाहिरी इल्म के हासिल करने में आपको किस क़दर मेहनत, वक़्त, तंदरुस्ती, रुपया खर्च करना पड़ा। उस वक़्त की आपकी उमर भी इस पुख्तगी को नहीं पहुंची थी जो इन मामलात को समझने के क़ाबिल होती और उसके बाद इस बक़्त तक अपने कोई अमली कोशिश नहीं की। दूसरी बातों की तरफ़ तवज्जह का रुख़ रहा है।

मैं आपकी तहरीर को मौहब्बत की निगाह से देखता हूँ। इसमें आप दरियाफ़्त हक़ीक़त कर रहे हैं। इसमें बुरा मानने की क्या बात है। आपका ख़त का लिखना और दरियाफ़्त करना मुहब्बत की अलामत है और ईमान की रौशनी की मौज़ूदगी साबित करता है। वरना गेर शख्स को ऐसी क्या ज़रूरत पड़ी थी जो मुझको लिवखता। वाक़ई मेरी नियत लोगों को धोखा देने की नहीं है, न सब लोग जो आते हैं धोखा देते हैं क्योंकि साल भर के क्लास में पढ़ने की मुद्द्त धोखाबाज़ी शुमार नहीं की जा सकती। अगर क़ामयाबी किसी तरह नहीं होती तो अलबत्ता न पढ़ने की शिकायत हो सकती है। इसी तरह क़ुब्बते तमीज़ी (विवेक शक्ति) की सफाई हासिल करने और उससे ज़्यादे ताक़त बढ़ाने की कोशिश में जो मुद्द्त सर्फ होती है वह इम्तिहान के वक्त तक आने के लिए तालीम की हैसियत ख़्यालकी जाती है न की वक्त ख़राब करने की और धोखेवाजी की। अगर लोगों ने मेरी तालीम को जज़्ब (ग्रहण) नहीं किया तो यह मेरे तर्ज़-तालीम (शिक्षा) की ख़राबी शुमार की जा सकती है या मेरी ख़ामी (कच्चेपन) की। और दूसरें लिहाज़ से तालिबइल्मों (साधकों) की कमी तवज्जो और slackness (बेपरवाही) की है। आपने कुम्भ में मुझको तलब किया। सरकारी काम की वजह से आप दौरे चले गए। आपकी गैरमौज़ूदगी में मैं दूसरे शख्स के यहां ठहर गया आप वापिस आ गए और मैं कई रोज़ तक ठहरा रहा। आप क्यों मेरे पास तक नहीं आये ? इसमें आपका क़सूर है या मेरा ? आपको मेरे पास आकर कहना चाहिए था की मैं दौरे से वापस आ गया हूँ, अब मेरे पास चलो।

तहक़ीक़ात और असलियत समझने के किये आमतौर पर दो तरीक़े हो सकते हैं (१) जो दुनियां की हर चीज़ को देखकर, समझकर और उससे तज़ुर्बा हासिल करता हुआ चले और फिर material world यानी माद्दी दुनियाँ की हर चीज़ की तहक़ीक़ात ख़तम करके spiritual world (रूहानी संसार) की तरफ़ मुँह मोड़ ले। (२) या दूसरी तरह पर material world की तरफ़ से आँख मीच ले और spiritual world की तरफ़ चल पड़े।

दुनियां की हर चीज़ से ताल्लुक़ करने से तज़ुर्बा होता है। पस जी शख्स इस तरह पर दुनियांदार हो की वह पहले अपने आपको दुनियांदार मुक़्क़मिल साबित कर दिखावे तब वो वाक़ई दूसरी तरफ़ पलटेगा। पस मुमकिन है कि श्रीकृष्ण इस रास्ते को पसंद करता हो और यही रास्ता उसने अख्त्यार किया हो। जब वह मुक़्क़मिल दुनियादार हो जायेगा , पलट पड़ेगा। अगर आपने इस तरीक़े निहायत बुरा समझा हुआ है तो आप इसके बरख़िलाफ़ रास्ता अख़्त्यार कीजिये , यानी दुनियाँदार न बनिये और यही रूहानियत और खुदा-परस्ती है। वाक़ई यह है कि मेरी तालीम दुनियाँदारी सिखाती है। अगर इन्सान मुक़्क़मिल इन्सान नहीं बन सकता तो

वह ख़ुदा को नहीं देख सकता और न ही अपनी समझ उसको आ सकती है। अगर मुक़्क़मिल दुनियांदार बन गया तो वह इस क़ाबिल हो सकता है कि अपने आपको समझ सके और ख़ुदा को देख सके।

दुनियांदार वही है जिसका मन दुनियाँ की चीज़ों में आनंद पाता हो। जब दुनियाँ की हर चीज़ में मन लगाकर आनन्द हासिल कर लेगा और असली आनन्द उसमें न पावेगा तो फिर दूसरी चीज़ को पकड़ेगा और इसी तरह पर हर चीज़ को लेता जावेगा और छोड़ता जावेगा। आख़िरकार वह उस चीज़ पर पहुँचेगा कि जिसमें हमेशा का आनन्द होगा और वही ख़ुदा है। पस अगर कोई शख़्स बावजूद समझाने के इस तरीक़े पर चलने को रज़ामंद न हो और सहल तालीम को क़बूल न करे तो मेरी तालीम का सिर्फ़ इस क़दर क़सूर है कि उसमें ज़ोर नहीं है। लेकिन तालीम की शकल तो बाक़ई हक़ीक़ी तालीम की है।

सालना भण्डारे की हक़ीक़त एक मुज़ाहिरा (दृश्य) है जिसमें लोग एक दूसरे से ख़्यालात का तबादला करते हैं और आइन्दा तरक़्क़ी का ज़रिया सोच लेते हैं , इससे ज़्यादा कुछ नहीं।

आपने यह कैसे समझ लिया कि सब तादाद नाक़ाबिल जमा होती है और सब बेहूदा लोगों की मजलिस है। दूर बैठे हुए बदगुमानी पैदा कर लेना जायज़ नहीं है। ख़ुदा ज़रूर है और एक है । अगर मैं और आप उसको देख सकें तो वह ख़ुदा नहीं है बल्कि कोई material (मायावी) चीज़ है। इन्तहाई अक़्ल इन्सानी (मनुष्य की बुद्धि की पराकाष्ठा) को रूहे इन्सानी (जीवात्मा) कहते हैं और यह तमीज़ की मेरी अक़्ल किसी दूसरे के मुक़ाबिल निहायत आजिज़ और हक़ीर (नम्र व तुच्छ) है , ऐन ताबेदारी ख़ुदा की है क्योंकि एक तरफ़ हक़ीर चीज़ अक्ले-इन्सानी (मनुष्य की बुद्धि) है जो रूह कहलाती है और दूसरी तरफ़ कामिल अक़्ल और ज्ञान (सर्वज्ञता) है जो ख़ुदाइयत (ईश्वरत्व) है।

आपकी ख़ुशी है कि अब आप नास्तिक हों या आस्तिक रहें क्योकि अगर आप नास्तिक होंगे तो किसके मुक़ाबिल। वहरलाल आस्तिक होने का बरख़िलाफ़ (प्रतिकूल) ख़्याल आपके इल्म में बाक़ी रहेगा। बहतर तो यह है कि आप न आस्तिक हों न नास्तिक तब तो ख़ैरियत है । हमारे यहाँ ख़ुदा को न मानने वाले को नहीं कहते बल्कि उसको नास्तिक मानते हैं जो कर्म, मन और वचन से ऐसे काम और ख़्यालात का इस्तेमाल करता हो जिससे अपनी spiritual, intellectual, mental and physical bodies (आत्मिक, बौद्धिक, मानसिक, एवं शारीरिक तत्वों) का नुकसान होता है और बर्बाद होते हैं और जिन कामों और ख़यालात से दूसरों पर ऐसे असर पड़ते हैं जिनसे वो बर्बाद हो जाएँ, और आस्तिक उसके बरख़िलाफ़ । पस अगर दिल वगैरह सब ऐसे हैं कि जो अपने किसी शरीर को बर्बाद न कर सकें तो आदमी चाहे नास्तिक हो या आस्तिक कुछ परवाह नहीं।

आप अभी सब कुछ हैं और सब क़ाबिलियत आपके अन्दर मौजूद है। रूह आपके अन्दर, ख़ुदा आपके अन्दर, सिर्फ़ इस वहम को दूर कर लेने की ज़रूरत है कि ख़ुदा है या नहीं , रूह कोई चीज़ है या नहीं। अगर यह दूर हो जाये तो गुरु वग़ैरह की हाजत (आवश्यकता) नहीं - गुरु तो सिर्फ़ इस वहम को दूर कराने की फिक्र करते हैं। अगर कोई शख़्स ख़ुद ही गुरु है तो फिर उसको हर चीज़ हासिल है । बहम का इलाज बहम से होता है । ख़ुदा और रूह की तलाश बाक़ई कुदरती है ऑफ़ यही जहालत (मूढ़ता) और वहम (भ्रम) है। इसका इलाज भी वहम यानी गुरु से होता है।

(४)

परमात्मा अपना फ़ज़्लोकरम फरमाए (दया व कृपा करे) उसी के द्वार पर प्रार्थना है कि वह अपने इरादे अज़ली के साथ बन्दों को ऐसी हिम्मत अता फ़रमाये कि उसी के रास्ते पर चलने की तौफ़ीक़ (युक्ति) हो जाय।

भाई साहब , हर शख्स की फ़ितरत (प्रकृति) जुदागाना (पृथक) है। बाज़ की तबियत इस क़दर लतीफ़ (सूक्ष्म) वाकै हुई है कि सिफ़त गुयूरियत का गल्वा (सकुच भाव) कमाल (उभार पर) रखते हैं। बावज़ूद इसके कि निहायत दर्ज़े की उसरत (तंगी) और हाजत (ज़रुरत) पर भी दूसरों की इनायत (मदद) से उनको लिहाज़ होता है। यह लातायफ़ (सूक्ष्मता) का बायस (कारण) है।

आपने जो जबाब लिखा है निहायत माक़ूल (ठीक) था। मैने उसको ज्यों का त्यों भेज दिया है । बाज़ बुज़ुर्गान सलफ़ (पूर्व पुरुषों) ने तवक्कुल (पूर्ण संतोष) किया है। आजकल 'तवक्कुल ' की शकल तो लोग मज़बूरी की वजह से अख़्त्यार कर लेते हैं जो मेरी दानिशत में बेहिम्मती और काहिली से वजह मआश (ठगी का ज़रिया) बना लेते हैं। यह मायूब (दूषित) शकल (रूप) है। लेकिन अगर वाक़ई कोशिश करने और कसब (महनत) करने के बाद भी किसी ग़ैर अखतयारी हालत-ज़माने से मआश (रोज़ी) में तंगी आ जाती है और उस वक़्त मुहीब ख़ालिस (सच्चे प्रेमी) इत्तिला पाने पर अगर हस्ब हैसियत इमदाद (सहायता) करते हैं तो कुछ मुज़ायक़ा नहीं कि कबूल कर लेना चाहिए।

क्योंकि जब यह मालूम हो जाय कि ऐसी मौहब्बत में जो हुदिया (भेंट) पेश करते हैं, उनकी नियत ख़ालिस मौहब्बत की राह (केवल प्रेम) से है और मुआविज़ा (बदला) अहसान, रस्म तबादिला वापिस लेने का मुतलक़ (बिलकुल) लिहाज़ (ख्याल) नहीं, न उनमें इस अमर की उम्मीद होती है कि इसके बाद वह किसी

क़िस्म का ख्याल दिल में करेंगे कि फलाँ शख्स को यह मदद दी गयी न तबादला अहसान के ख्वाहिशमंद होंगे, तो फिर यह हुक्म ख़ुदा-बन्दी (ईश्वरी-आज्ञा) है कि उसको क़बूल कर लें।

दूसरी तरफ़ या दूसरे फ़रीक़ जिनके लिए यह हुदिया (सौगात) भेजा जाय उसका अगर यह ख़्याल है कि न तो उसे कहीं से आने की उम्मीद है , न उसका इंतज़ार है कि फलाँ शख्स से कुछ इमदाद हो जाती तो बेहतर था, और न उसको ऐसी उम्मीदों की आदत ही है तो यह सूरत ख़राब नहीं है। ऐसी हालत में हुदिया (भेंट) भेजा हुआ क़बूल कर लेना बाज़िब है। ज़्यादा से ज़्यादा यह एहतियात अपने ऊपर लाज़िम कर सकता है कि जब परमात्मा के फज़ल की उस पर बारी (समय) आवे तो वह भी अपनी तरफ़ से ज़रूरतमंद भाइयों की मदद को हुदिया भेजेगा , ऐसी ख्वाहिश (भाव) को क़ायम कर ले।

तव्वकुल की तारीफ बुज़ुर्गों ने यह की है -- मैं उसका खुलासा लिखता हूँ कि बहुत ज़रूरी है कि कसब (परिश्रम) करता रहे और फ़िक्र मआश से ग़ाफ़िल न हो (निठल्ला न रहे), न बेकार बैठा रहे , बल्कि अपनी सारी हिम्मत से मसरूफ़ रहे और फिर जो कुछ आवे या उस मुआश (रोज़ी) की वजह से मिले, उसको अपना हासिल हुआ न ख़्याल करे बल्कि ख़ुदा या ईश्वर का दिया हुआ, उसकी तरफ़ से भेजा हुआ समझे और जब कसब (हिम्मत) करने के बाद भी न मिले तब उस पर शुक्र (धन्यवाद) करे और शिकायत न करे और न ज़बानी या ख्याली (मन या वाणी) तौर पर तलबगार हो। लेकिन अगर ख़्वाहिश न करने और तलब न होने पर भी आ जाये तो उसे फौरन क़बूल कर लेना चाहिए क्योंकि यह परमात्मा के हुक्म व इशारे से आया हुआ है।

भेद सिर्फ़ इतना है कि अपने नफ़्स (मन व अहँकार) की ख़्वाहिश से कोई चीज़ मिले तो उसे हरगिज़ न ले और बिला ख़्वाहिश जिस समय नफ़्स दूर हुआ हो और मायूस (निराशा) हो, किसी पर तक़ाज़े का का भी ख़्याल न हो, उस समय कुछ आवे तो उसे क़बूल कर ले क्योंकि वह मर्ज़ी इलाही से आया है और मर्ज़ी इलाही के मुताबिक़ न चलना और उसके हुक्म से इनकार करना एक बड़ा गुनाह है। मगर चूंकि ऐसा करते रहने से आगे आदत मन जाती है इसलिए इसमें अहतियात (समझ कर चलना) लाज़िम है जिसमें मर्ज़ी ख़ुदा बन्दी के रद्द करने का मौक़ा न हो जाय। आप यह ख़त उनको भेज दें तो ज़्यादा नफ़ा होगा और एक मसला (समस्या) भी हल हो जावेगा जो बनिस्बत आपके उनसे ज़्यादा ताल्लुक़ रखता है। सब साहबान की दीनी और दुनियावी अगराज़ (गरज़) के लिए दुआ करता हूँ।

आं अज़ीज़ को बाद दुआ तरक़्क़ी दरजात के मालूम हो। मुतवातिर अपने हालत से मुत्तला करते रहना फ़ायदेमंद है। बहुत अच्छा हुआ कि अपने हालात से इस ख़त में मुत्तले किया। आपके हालत से ज़ाहिर है कि आप पर परमात्मा का ऐसा फ़ज़्ल है कि जो इरादतमन्द है और आपके नज़दीक सौहबत रखने के ख्वाहिशमंद हैं उनको फ़ायदा होता है और कैसा फायदा होता है कि उनकी तबीयतें गो वे ज़्यादा वक्त के लिए न हों ताहम आलायश दुनियां से सिमटाव हासिल करके एक नुक़्ते की तरफ़ मायल हो जाती हैं जहाँ से कि अगर वे अपने मुस्तक़िल इरादे के साथ लगे रहें और फ़ज़्ले ऐज़दी शामिल हाल रहे तो मंज़िले मक़सूद तक रसाई हासिल कर सकते हैं। अज़ीज़ व नीज़ दीगर भाई जो इस तक पहुंचे हैं बुज़ुर्गाने दीन की क़वी इमदाद और हिम्मत को अपने शामिल हाल ख्याल करें। यह तसर्रुफ़ पीराने उज्ज़ाम का है। इस नैमत का शुक्रिया हर आन वाहिद पर बाजिव है और जायज़ इस्तेमाल यह है कि ऐसे काम को तर्क कर दें जिससे इस नैमत में ज़बाल आता है। और यह अमूर अख़्तियार करें जो इस नैमत के क़याम में मददगार है। उसकी तफ़सील बहुत मर्तबा मुलाक़ात के वक्त बतलायी गयी है। लेकिन अगर सेहत के साथ मालूम नहीं है तो आइन्दा वक्त पर लिखी जावेगी , या वक्त मुलाक़ात बयान की जावेगी बहरहाल मुख़्तसरन यह है कि नाजायज़ सौहबतों से बचें और जो काम ज़ाहिरा मना है उनसे हत्तुलमक़बूल गुरेज़ करें। जब मालूम हुआ कि किसी शख़्स में क़ुव्वते जाज़वा का यह असर है कि दूसरों में तस्सरूफ़ करने से उन लोगों की हालतें बदल जाती हैं तो ज़रूर है कि उनके सब एहवाल, चाहे वे अच्छे हों या बुरे जज़्ब में आते हैं । लेकिन चूंकि हमारी हालतें ऐसी मुस्तक़िल और मज़बूत नहीं हैं जो ऐसे बोझ को सम्भाल सकें और हर वक्त ख़तरा है कि कहीं गढ़े में न गिर जाएँ इसलिए निहायत चौकन्ना रहना चाहिए। ख़ूब समझ लेना चाहिए कि हर शख़्स जो सौह्बत में आता है बमिस्ले एक दरिंदे शेर के है जो फाड़ खाएगा या मिस्ल उस डूबने वाले के है जो गहरे पानी में घबराकर अपने इमदाद देने वाले को दबा लेता है और उसको दबोचकर खुद ग़र्क़ हो जाता है , और जो निकालने को जावे उसको भी ग़र्क़ कर देता है। इससे यह मतलब नहीं है कि जो काम इस वक़्त जारी है उसे तर्क कर दिया जावे। बल्कि काम जारी रहे और अपना नुकसान न होने पावे। लिहाज़ा सौह्बत और सत्संग में ऐसा ख़्याल न करे कि यह तसर्रुफ़ हमारा है। जो असरात लोगों पर आवें उससे अपने को मज़ा न मिले। क्योंकि दरअसल यह हाल हमारा नहीं है बल्कि किसी दूसरे का है और जब हमारा नहीं है तो हमारा एहसान क्या ?

जमाले हमनशीं दरमन असर कर्द

वरगना माहुमा खाकम कि हस्तम

(मेरे प्रीतम के जमाल ने मुझमें यह असर किया वरना मैं तो वही ख़ाक हूँ जो पहले था) और अगर बिलफ़र्ज़ यह तासीरात हममें से है ताहम जाती नहीं बल्कि ज़ल्ली । अक्सी मुताल्लिक़ मायावी के हैं जिन पर नाज़ करना अवस है क्योंकि क़याम नहीं रखते। आं अज़ीज़, अपने हम सौहबतों से ख़िलत मिलत न हों। वक़्त पर काम कर दिया और अलग हो रहे । उनके साथ हर क़िस्म की शिरकत न करनी चाहिए वरना नुक़सान का अंदेशा है। जैसा कि ख्वावों से ज़ाहिर है , ख्वाबात जिनका ज़िक्र आपने खतों में किया है। सबको सलाम और दुआ।

---

(६)

(मिनजानिब श्रीयुत डाक्टर श्रीकृष्ण)

अज़ीज़े मन दुआ ,

हाजत वकुलाहे तुर्की , दास्तनत नेस्त

दरवेश सिफतबास कुलाय तुरतीर दार

मतलब यह है कि चाहे अंग्रेजी टोपी पहनो खाह हिंदुस्तानी लेकिन दिल दरवेश - सिफत रखो। सुना गया है कि आं अज़ीज़ ने ऐसी वजह अख्तियार की है जिससे तुम्हारे वाल्देन और दोस्तों को बहुत एतराज़ है। लिहाज़ा कोई ज़रूरत नहीं है की एतराज़ की बातें अख्तियार करे। रफ्ता रफ्ता काम करें लेकिन दिल को अरास्ता करने की कोशिश लगातार करते रहें। अन्दर के सम्भालने की ज़रूरत है। ऊपर ख़ुद-ब-ख़ुद ठीक हो जायेगा। अपने पैसे व रोज़गार का भी ख़्याल करें। लापरवाही नहीं होनी चाहिए, दुआ।

(७)

(मिनजानिब श्रीयुत डाक्टर श्रीकृष्ण जी)

अज़ीज़े मन, मद्दउम्रहू , दुआ। ख़त आं अज़ीज़ मिला। हालात मालूम हुए । इस वक़्त आने की यहाँ ज़रूरत नहीं है । सुना गया है कि बिरादर अज़ीज़ रघुवरदयाल कानपूर से वहां जावेंगे। उनसे मिल लेना और मैं भी वक़्त पर तुमसे मिलूंगा , और जो हिदायत आइन्दा कारामद हैं उनको मुफ़स्सिल बयान करूंगा। अब जो हो गया सो हो गया, उसका अब क्या सोचना। आइन्दा को अहतियात चाहिए और ईश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए कि वो अपनी हिफाज़त में रखें। मुंशी मनमोहन लाल जी का ख़त आया है। वो मुझसे निस्बत (विषय में) आनंदी प्रसाद साहब के दरियाफ़्त करते हैं। मुझको कोई एतराज़ (आपत्ति) नहीं है लेकिन पहले यह दरियाफ़्त होना ज़रूरी है कि वो रहने वाले कहाँ के हैं और रिश्तेदारी कहाँ है, ताकि बाद को ऐसी बात दरियाफ़्त न हो की जिससे तमाम उम्र शर्मिंदगी हो और ख़ानदान में बट्टा लग जाये। मैं गालिवन (अनुमानतः) पंद्रह रोज़ तक अभी मकान पर रहूंगा। इसके बाद बाहर जाने का इरादा है। इसके इलावा और कोई ताज़ी बात नहीं है । मैं आजकल तनहा (अकेला) हूँ और जगमोहन हैं , बाक़ी लोग बदायूँ गए हैं । बाद कार्तिकी के आवेंगे । बच्चों को प्यार और दुआ । अपने कारोबार में तबियत लगाना चाहिए ताकि रोज़ी की फ़िकर न रहे ।

दुआगो - रामचंद्र

(८)

बरख़ुरदारम, मद्देउम्रहू (चिरंजीव हो) दुआ ,

११ दिसम्बर के खत में जो तुमने लिखा है कि शब्द कभी मालूम होता है कभी नहीं। कोशिश करने पर फिर कुछ मालूम होने लगता है, अलबत्ता दिमाग़ में हर वक्त और हर लहज़ा ख्याल के वग़ैर झींगुर के बोलने की आवाज़ मालूम होती है। मालूम होता है कि तुम शब्द सिर्फ़ दिल कि आवाज़ को ही ख़्याल करते हो, ऐसा नहीं है। शब्द हर जगह होता है। अब दिमाग़ी शब्द शुरू हो गए हैं, फिर दिल का शब्द क्यों सुनाई दे। कोशिश करने पर तवज्ज़ो को जब नीचे की तरफ़ वापस लाते हो तो दिल का शब्द सुनाई देता है । पस ऊँची हालत से नीचे की तरफ़ ज़बरदस्ती मुतवज्जह (ध्यान देना) होते हो। इसकी ज़रूरत नहीं है ।

दूसरी बात यह है कि तुम लिखते हो कि ख़्याल करने से एक सन्नाटा मालूम होता है जो कि शायद ऐसा मालूम होता है जैसा कि ज़ोर के साथ थप्पड़ लगने के बाद मालूम होता है, वगैरह , वगैरह । ये सब दिमाग़ के शब्द हैं । इनकी तरफ़ अगर खुद ख़्याल जाता है तो मशगूल रहना चाहिए। बाज़ मर्तबा बैठे बैठे एक चक्कर सा आता ही और आँख बंद होने पर एक अजीब हालत हो जाती है। बाज़ मर्तबा यह ख़्याल होता है कि यह मेरा ख़्याल है क्योंकि पेश्तर कभी ऐसी हालत नहीं हुई ।

फ़ैज़ क्या है - कैसे आता है

जबाब - यह बिला इरादे फ़ैज़ है जो ऊपर से आता है यानी ख़ुद अपने अन्दर से नहीं बल्कि दूसरी जगह से। फ़ैज़ के मानी यह है कि किसी बरतन में अगर लबालब कोई चीज़ भरी हुई है और अगर वह छलक जाय या उसमें उबाल आ जावे तब बाहर को बहने लगती है, यही क़ैफ़ियत फ़ैज़ की है । वह अमृत की धार जो असल भण्डार में या मुर्शिदों (गुरुजनों) के क़ल्ब (ह्रदय) में है उसको प्रेम का जज़्बा (प्रेमावेश) कहते हैं । इसी प्रेम की करोड़ें शक्लें हैं जो दुनियाँ में दिखाई देती हैं और आइन्दा दिखाई देवेंगी, बन गयी हैं। बिजली, क़ुव्वते -क़शिश (आकर्षण शक्ति), रौशनी, हरारत, हरारत-गरीजी (energy, vitality, centrifugal force) ग़रज़े कि जुम्ला जज़्बात इसी असली प्रेम का रूप है। तवज़्ज़ो भी , जिसको सुरत कहते हैं, इसका अंश है। जैसा कि मस्ला (कहावत) है " God is love, love is God" ईश्वर ही प्रेम है और प्रेम ही ईश्वर है " । यही प्रेम और जज़्बा जब असली भण्डार और मुर्शिदों (गुरुजनों) के वज़दान से जब सालिक (प्रेमी) के दिल और दिमाग़ के अन्दर दाख़िल होता है तो इसे फ़ैज़ कहते हैं । यह इरादे के साथ आता है और बिला इरादे भी। इरादा तालिब (इच्छा करने वाले) का हो तो अभ्यास से, और अगर इरादा मतलूब (जिसकी इच्छा की जाय) का हो तो बिला-इरादे तालिब के आता है । अगर हमेशा अभ्यास के वसीले से (द्वारा) आवे तो तालिब को मुरीद (जो प्रेम करता है) कहते हैं , और बिला इरादे और अभ्यास के ख़ुद -ब - ख़ुद आया करे तो यह नियामत शुक्र के क़ाबिल है । जितनी ज़्यादा आ जावे उसी क़दर शुक्र बाज़िब है और शुक्र यह है कि उस नियामत का जायज़ इस्तेमाल करे । जब वह नियामत आवे तो अपने आपको सराहें और ऐसी कोई बात सरज़द न होने पावे (ऐसा कोई कर्म न हो) कि जिससे उस नियामत का आना बंद हो जावे। तुम कहते हो कि तुमसे कोई जिस्मानी (शारीरिक) ख़िदमत (सेवा) ली जावे ताकि काम में बाकायदगी (नियमित होना) और पावन्दी आ जाय। दिमाग़ी और दिली रियाज़त (अभ्यास) इस क़दर ज़्यादा हो जाती है कि इसका असर जिस्म पर ख़ुद-ब -ख़ुद पड़ जाता है । लेकिन यह लतीफ़ मिज़ाज़ (कोमल स्वभाव) वालों के वास्ते है। कसीफ़ मिज़ाज़ (परिश्रमी

स्वभाव) वालों के वास्ते सूरज निकलने से पहले साफ़ होकर नफ़ी अस्वात करना चाहिए जो इक्कीस मर्तवा से ज़्यादा न हो । फिर शज़रे शरीफ़ का पाठ करना चाहिए और इसी तरह शाम को या रात को साफ़ होकर ख़त मुजद्दीदिया का विर्द करना चाहिए। जब मिलोगे बता दूंगा ।

तीन जनवरी के ख़त में तुमने लिखा है कि दस्ती नोटों में यह लिखा हुआ देखा है कि ज़िक्र (शब्द) को फ़िक्र (ध्यान),पर फ़ौक़ियत (प्रधानता) है और ज़बानी मैने कहा कि जिक्र के बाद फिक्र होता है ।

जबाब -ज़िक्र साफ़ सड़क है जिससे भटकता नहीं है और न कोई ग़लती वाक़े होती है , लेकिन जब ज़िक्र पुख़्ता हो जाये और बिला इरादे हमेशा जारी रहे और सिलसिला न टूटे तो फिर सालिक (पन्थाई) मुब्तदी (शुरू करने वाला - नौसिखिया) नहीं रहता । अब बिला फ़िक्र के आगे की तरक़्क़ी करना मुश्किल है । लेकिन ख्याली फ़िक्र से मुमकिन है कि रास्ते में वहम पैदा हो जाएँ । फ़िक्र आंय, बायं, शॉय नहीं होना चाहिए, बल्कि मुर्शिद लोग हस्बलियाक़त (योग्यता के अनुसार) फ़िक्र या मराकबा तज़बीज़ कर दिया करते हैं । बिला तज़बीब किये हुए ख़ुद -ब-ख़ुद फ़िक्र करना बाज़ मर्तबा शेखचिल्लियों के से मंसूबे होते है जो बेकार हैं ।

शक्ल के मुक़ाबले में प्रकाश ज़्यादा लतीफ़ (सूक्ष्म) है और प्रकाश के मुक़ाबले में सिर्फ़ एक ख्याल सा क़ायम रहना बदजहा अच्छा है । पहली चीज़ कसीफ़ और भद्दी थी , अब लतीफ़ हो गयी । अगर मौहब्बत बिलकुल मालूम नहीं होती तो यह अच्छा है । दरअसल वह मौहब्बत नहीं थी बल्कि उसकी नक़ल थी जो काम की नहीं थी। अगर बाक़ई होती तो गम न होती ।

इन्तहाई (अत्यन्त) दर्ज़े का मतलबी होना क्या अच्छा मुक़ाम है । इन्तहाई मतलब और इन्तहाई ख्वाहिश के मौंजू और मुनासिब इन्तहाई ideal (लक्ष्य) होता है । दो चीज़ों की इन्तहाई शक्लों के जमा होने से तीसरी दरम्यानी शक्ल भी इन्तहाई की निसबत रखती है । लिहाज़ा दरम्यानी मुर्शिद (गुरु) है जिसकी क़ुदरतन ज़रूरत होती है । बिला medium (माध्यम) के कुछ नहीं हो सकता । Medium l(माध्यम) से मौहब्बत का न होना ज़रूरी भी है क्योंकि वहीं पड़े रह जाने से आगे का सिलसिला ढंक जाता है और मक़सद (लक्ष्य) तक पहुँचना मुशिकल होता है । एक सीढ़ी के ज़रिये से छत तक पहुँचना मक़सूद है और सीढ़ी का हर डण्डा एक मुनासिब वक़्त का मुर्शिद है । आगे की तरफ जाने के वास्ते अगर किसी डण्डे पर क़दम जमा दिया तो इस क़दम जमाने का नाम तुमने ग़लती से मौहब्बत रख छोड़ा है और डण्डे का नाम भी ग़लती से मुर्शिद । पस यह सब मुर्शिद महज़ ज़रिये हैं न कि मक़सद (लक्ष्य) मक़सद और है । इसलिए मैं मौजूदा शक्ल में (गुरु) नहीं हूँ ।

और अगर इसको मुर्शिद क़रार दिया गया हुआ है तो सख़्त ग़लती है । मुर्शिद कोई और चीज़ है। असल मुर्शिद को असल मक़सद के दरम्यान तमीज़ करना सख़्त दुशवार (दूभर) है, बल्कि नामुमकिन है। पस इस वहम को दूर करो। अदब, लिहाज़ और क़ायदे की पावन्दी ज़रूरी है । हर डण्डे पर लापरवाही से औंधा टेढ़ा क़दम जमाना बेअदबी है जिससे एहतमाल(डर) नीचे गिर जाने का है। अदब अख़्त्यार करना पहली चीज़ है, अव्वल चीज़ है।

' अदब ताजीस्त अज लुत्फे इलाही '

क्या मेरे या किसी शख़्स के आँख, नाक, का, हाथ, पैर, वग़ैरह की इज़्ज़त है ? नहीं , इज़्ज़त सिर्फ़ आत्मा और उसके ज्ञान के लिहाज़ से है ।

फ़नाफ़िलशेख (गुरु में लय होना) , फ़नाफ़िलरसूल, (अवतार में लय होना) और फ़िर फ़नाफ़िल अल्लाह (ईश्वर में लय होना) ये तीन फ़नाइतें लय अवस्थायें) हैं । बिना फ़नाफ़िलशेख हुए फ़नाफ़िल अल्लाह के ख्व्वाहिस्गार (इच्छुक) नहीं मालूम कौन चीज़ हैं। मैं उनको मक्कार का नाम देता हूँ । पस ,इससे पहले अगर तुमको अल्लाह से मिलने की ख्वाहिश नहीं थी तो कुछ बेजा नहीं था। और अब आजकल अगर आने की तरफ क़दम बढ़ रहा ही तो शुक्र उसका ही कि रास्ता ग़लत साबित नहीं हुआ और दुनियां की तरफ़ से रुख़ बजानिब असल मक़सद (लक्ष्य की ओर लक्षित) है । अगर शरियत बाज़पुर्स न करे तो ग़ालिबन शुरू-शुरू में अल्लाह की ख़ालिस चाह शायद हज़ारों में सिर्फ़ एक को होती होगी वरना वक्त का रायगां करना (गवाना) होगा।

एक रिवायत (कहावत) है कि एक साहिबे-दिल (ईश्वर भक्त) जिनका नाम सुल्तानबहू था, अपने एक मुरीद (शिष्य) के साथ सफ़र को जा रहे थे । रास्ते में एक दरिया पड़ा, वहां किश्ती न थी। बाहू साहब पानी पर चलने लगे, मुरीद से कहा कि मेरे पीछे चले आओ ओर बाहू का नाम लेकर क़दम पानी पर रखते आओ। मुरीद चलने लगा, लेकिन रास्ते में बाहू का नाम छोड़कर 'याहू ' कहने लगा। फ़ौरन डूबने लगा। पुकारा ' मैं डूबा ' आपने फ़रमाया कि वहम क्यों लाया। ' याहू ' तेरे सामने नहीं ओर न उनकी तुझ से मुलाक़ात है । पस, बिला मुलाक़ाती के वसीला किसी तलाश करता है ?

संध्या के वक्त अब अगर एक भारी हस्ती के होने का ख़्याल पैदा हो गया है तो इशारा असल मक़सद की तरफ़ है । संध्या के वक्त अगर यह ख़्याल हो जाता है कि तुम्हारी जगह मैने ले ली है तो यह क्या ताज़्ज़ुब है। क्या बच्चे की हैसियत जवान की ओर जवान की हैसियत बुड़ढे की नहीं होती ? मुरीद मुर्शिद की औलाद

रूहानी इख़लाक़ी होती है। लिहाज़ा मेरा इख़लाक़ ओर रूहानियत तुममें दाखिल हो जाये तो क्या ताज्जुब है । बल्कि यह होना ही चाहिए । क्या हनोज़ (अभी तक) तिफ़्ले - मक़तब (स्कूल के बच्चे) रहना पसन्द करते हो ।

सत्रह जनवरी के ख़त में तुमने लिखा है कि अब फ़िर मुझको मौहब्बत है, बल्कि अब हर वक्त साथ मालूम होते हुए मेरा एक ख़्याल सा रहता है। मैं पहले लिख चूका हूँ कि यह मौहब्बत क्या है ? ओर इसके दर्ज़ों की इन्तहा कहाँ तक है । असली मौहब्बत तो यह है कि मौहब्बत , मौहब्बत का करने वाला ओर जिससे मौहब्बत की जाय - सब ग़ायब हो जावें यानी तमीज़ बाक़ी न रहे । अब भी दुई बाक़ी है।

बुज़ुर्गाने सिलसिला (वंश के महापुरुष) ओर उनके वसीले से हज़रत खैरूल बसर उस सैयदी नूर मुहम्मदी की ज़ियारत ओर लगाव का होना खास शुक्र का मुक़ाम है । यह बड़ा फ़ज़्ल उनका है । फ़ैज़ में अपने हम सौहबतों का शामिल कर लेना अलूहिम्मती की निशानी है ओर यह बशारत (खुशख़बरी) तुम्हारे वास्ते है जिसका ताल्लुक़ तालीम ओर दावत से है । यह ख़ास फ़ैज़ हज़रत पैग़म्बर साहब का है जो हज़ारों में से किसी एक को नसीब होता है ।

दुआ में सब का भूल जाना ओर सिर्फ़ यह याद रह जाना कि अपनी नैमतों को हम पर उतार, यह ख़ास बरकत दुआ की है। तुमने दरियाफ़्त किया है कि सौहबत में बैठने वालों को इस फ़ैज़ में शामिल करूँ या उनको सिर्फ़ तबज़्ज़ो दी जाय ।

जबाब - तबज़्ज़ो देना तो मामूली फ़र्ज़ है लेकिन यह फ़ैज़ अपने अख़्त्यार में नहीं है । जब वहाँ से रहम की लहर उठती है तब यह फैज़ान होता है । पस उस फ़ैज़ की हालत में अगर अख़्त्यार बाक़ी है ओर याद हम-सौहबतों की बाक़ी है तो उनको शामिल कर लेना चाहिए । निहायत अच्छा है , वरना अगर अख़्त्यार ओर याद बाक़ी नहीं है तो मज़बूरी है ।

ख्वाव - मगन बिहारी का एतराज़ - मैने तुमसे ख़त पढ़वाया है जिसमें लिखा है कि अपनर भाइयों की तालीम व तरबियात का खूब ख़्याल रखना ओर फ़िर अपने महबूब (प्रीतम) की याद आनी परमात्मा में लय (फ़ना) हो जाना लिखा है। फ़िर तिलायी (सुनहरी) ओर नुक़रई (रुपहली) तमग़ा (पदक) देना लिखा है। इसमें मगन बिहारी के एतराज़ की तरदीद (रद्द करना) ओर तुम्हारी हालत की तसदीक़ (पुष्टि करना) है जिसका मतलब साफ़ है । शरह (व्याख्या) करने की ज़रूरत नहीं है । तिलाई ओर नुक़रई तमगों से मुराद

लतीफ़ ओर क़फ़ीस हालत रूहानी ओर जिस्मानी से मुराद है । जलती हुई चिता का देखना जिस्म कसीफ़ (पार्थिव शरीर) से मुराद है इसके जल जाने के बाद रूहानियत महज़ (शुद्ध आत्मा) बाक़ी रह जाती है। बच्चों से मुराद जिस्म के मामूली हैवानी जज़्बात हैं जो बच्चगी की हालत में हैं ओर कुछ नहीं।

एक खत २१ जनवरी ओर ७ फरवरी का जबाब देने को रह गया है जिसके जबाब लिखने की इस वक़्त तबियत नहीं चाहती, फ़िर लिखूंगा। महफ़ूज रख लिया है।

मुंशी मनमोहन लाल साहब का नोटिस छपवाना बेकार साबित हुआ। बज़ाय फ़ायदे के नुक़सान हुआ । वह बिलकुल बेफ़ायदा निकला । वह letter form थे ओर उस पर टिकट बन्द या खुला हुआ दोनों तरह पर एक ही लगता है। ख़ैर ।

राक़िम -- रामचंद्र १०-३-३१ अज़ फ़तेहगढ

---

(९)

भाई श्री कृष्ण जी ,

ईश्वर आपके दिल में फ़क़ीरों की मौहब्बत क़ायम रहे और ऐमाल नेक की तौफ़ीक़ अता फ़रमावे मौहब्बत से भरा हुआ ख़त पहुँचा । दिल को तरावट का बायस हुआ। इसमें इस बात की तरफ़ ज़्यादा शिकायत थी कि सेरी (तृप्ति) ख़ुराक़ से नहीं होती या ख़ुराक़ नहीं पहुँचती या ख़ुदा न ख्वास्ता ख़ुराक़ का मिलना बन्द हो गया है। मेरे अज़ीज़, खूब समझ लेना चाहिए कि इस दुनियाँ में जो पैदा हुआ है और मोजूद किया गया है उसके लिए ख़ुराक़ उस मब्दयेफ़ैयाज़ (भण्डार) की तरफ़ से हरआन वाहिद (हरेक) पर बिला शिकस्त हुए (निरन्तर) ख़ुराक़ पहुँचती रहती है चाहे उसको जान सके या न जान सके। अगर एक सैकिण्ड के साठवें हिस्से को यह फ़ैज़ यानी ख़ुराक़ बन्द हो जावे तो कोई साँस नहीं आ सकती और सब काम बंद हो जावेंगे। सूर्य की रौशनी सब पर एक सी और हर वक्त पड़ती रहती है, कोई महसूस करता है कोई नहीं। लेकिन उसका असर ज़रूर पड़ता है इसके पेश्तर कि इस गिरोह की मौहब्बत तुम्हारे दिल में समायी थी और नेक सौह्बत को अख्त्यार किया था वह ख़ुराक़ जिसके बाबत इस वक्त तुमको शिकायत है रोज़े-पैदायश (जन्म-दिन) से तुमको पहुँचती थी और अब भी बराबर तुम तक पहुँचती रहती है। कोई घडी इससे ख़ाली नहीं। सिर्फ फ़र्क़ महसूस होने और ग़ैर-महसूस होने का है। कंकड़, पत्थर, मिट्टी , घास फूंस , हैवान , आदमी , देवताओं - सब में उसका फ़ैज़ और ख़ुराक़ हर वक्त जारी है । अब इनके दरम्यान फ़र्क़ तमीज़ और ग़ैर -तमीज़ का है। पत्थर और फ़रिश्तों के

तमीज़ के दरम्यान जो फ़र्क़ है उसको आप ख़ुद समझ लें । फिर तमीज़ , तमीज़ में भी एक ख़ास हालत और है कि बाज़ को तमीज़ तो है , कभी होती है, कभी नहीं होती है यानी दिन और रात में ख़ास वक्त पर असर होता है और किसी ख़ास वक्त पर बिलकुल नहीं होता है। अब मुबारिक नयन वह लोग जो एक सैकिण्ड के साठवें हिस्से में भी इस तमीज़ से गुम नहीं होते। इस पाक गिरोह के सरबराबुर्दा बुज़ुर्गों (आचार्य दिगन्त) ने इस तमीज़ के क़याम की इस क़दर मंज़िलत (appreciation) की है कि पलक मारने के लिए ग़फ़लत को बेअदबी में दाख़िल फ़रमाया है। हम लोग तो सिर्फ़ उनके नाम लेवा और बदनाम करने वाले हैं। क्या मज़ाल है कि उनकी गर्द (रज) को हमारी हवा तक लगे सके । चेजायके (कहाँ इतना) कि हम उनके मुक़ल्लिद (अनुगामी) होने का दावा कर सकें। परमात्मा हमारे दिलों को उनकी तरफ़ रागिब करे ताकि उनकी पाक और नेक इख़लाक़ी ज़िन्दगी के वारिस क़रार दिए जा सकें ।

अब अगर परमात्मा ऐसी तौफ़ीक़ हममें से किसी को अता फ़रमायें कि अपनी याददाश्त को इस तमीज़ तक क़ायम रख सकें और फिर उसमें फ़ना हो जाएँ तो अपनी ख़ास इनायत और लुफ़्तोकरम हम पर मबज़ूल फ़रमायें (उतारे) और बतुफ़ैल बुज़ुर्गाने दीन(महापुरुषों की कृपा से) इस नैमतेउज़्मा (बड़ी नियामत) से मुशर्रफ़ फ़रमायें (प्रदान करें) और इस तमीज़ के साथ हलावत ख़ास (आनन्द महज़) और ख़लूस (दिली लगाव) में रहमत फ़रमायें । यह हलावत ख़ास बिला नफ़्स सधे हुए और दिल की सफ़ाई के मयस्सर (प्राप्त) नहीं हो सकती और नफ़्स का सीधे रास्ते आ जाना और दिल की ख़ालिस सफ़ाई बिला नेक ऐमाल (शुद्ध आचरण) के मुमकिन नहीं है ।

ऐमाल की दुरुस्ती और सफ़ाई दो तरह पर हो सकती है - (१) तमाम उन बातों से आगाही (जानकारी) हासिल कर ले कि कौन कौन काम करने के क़ाबिल हैं और कौन से दूर और तर्क करने के क़ाबिल और फिर शुबा वाली चीज़ों का मालूम और अक़ीदी (विश्वास) का दुरुस्त और सही कर लेना, और जब इन बातों का इल्म हो जावे तो उन पर क़ादिर (काबू) होना और मज़बूत इरादों के साथ उन पर एक एक करके अमल करना।

(२) इस तौर पर कि सतसंग यानी सौहबत ऐसे गिरोह की अख़्त्यार करना जो वाक़ई तौर पर इख़लाक़ कामिल के साथ ज़िन्दगी बसर करते हैं और साहिबे-दिलवर (ईश्वर प्रेमी) और और बाअसर (असर रखने वाले) हैं। ऐसे लोगों का मिलना ऊनका-सिफ़त (दूभर) है। मेरे भाई, अगर ऐसे लोग क़िस्मत से मिल जावें तो उनकी सौह्बत्त को ग़नीमत जानें और लग-लिपटकर अपने कामों को बना लेवें। वरना दुनियाँ का क्या

ऐतवार ? बहुत से असहाब (सज्जन) मौक़े को ग़नीमत न जानकर न मालूम किस ख़्याल में महब हो (डूब) जाते हैं की मौक़े को हाथ से निकाल देते हैं और फिर अफ़सोस करते हैं । मुमकिन है कि साहबे-दिल और बा-असर लोग मयस्सर आ सकें (मिल जावें) लेकिन उनके साथ ही इख़लाक़ (सदाचार) के आला पैमाने (उच्च स्तर) के साथ बुज़ुर्ग कमयाब (जो कम मिलें) नहीं बल्कि मादूम (अप्राप्त) हैं । बहुत सी बातें ऐसी हैं जिनका ज़िक्र करना हज़ूर और सौह्बत पर मुनहसिर है इसलिए मुनासिब हाल और वक्त जानकर सिर्फ़ इस क़दर तहरीर पर किफ़ायत करता हूँ (केवल इतना ही लिखता हूँ) । आइन्दा बशर्ते फ़ुरसत और मौक़ा अगर ईश्वर मुझको तौफ़ीक़ देगा और आपकी हिम्मत इस क़िस्म की तक़रीर और तहरीर मुतहम्मिल (सहन योग्य) और आरज़ूमन्द (आकांक्षा) होगी तो चन्द सत्तरें लिखने की ज़ुर्रत (साहस) करूंगा । यह चन्द सत्तरें आप ख़ुद मुलाहिज़ा करें और अपने भाइयों के वास्ते निगाह रखें। मुमकिन है उनको फ़ायदा हो और इस आसी को दुआये मौहब्बत से याद रखें।

दुआगो ,

रामचंद्र

मेरे भाई और दोस्तों को जो वहाँ मौज़ूद हों सलाम व दुआ के साथ मालूम हो कि नेक सौहबत का ख़्याल अगर उनमें तरक़्क़ी करता रहा है तो परमात्मा की ख़ास इनायत (कृपा) उन पर है ।

इस ख़त को आप चंद दफ़े बक्फा दे देकर पढ़ें और ईश्वर से प्रार्थना करें कि अपनी रहमत ख़ास (विशेष कृपा) से आपके दिलों को नेकी की तरफ़ फेर दे। आमीन

---

(१०)

१९ नवम्बर सन १९१९

अज़ीज़ेमन श्रीकृष्ण जी दुआ,

तरक़्क़ी दरज़ात के वाज़े हो कि मौहब्बत का भरा हुआ ख़त पहुँचा । प्रार्थना है कि आं अज़ीज़ को राहे-मुस्तक़ीम (सदमार्ग) पर साबित और क़ायम रखे और तुम्हारी हस्ती को जिस वाक़ई काम के लिए पैदा किया है, लगाए। मुरीद और मुराद में फ़र्क़ होता है। तुम मुरीद नहीं बल्कि मुराद हो। पहले ही दिन तुम्हारा इन्तख़ाब उन लोगों के जुम्रे (गिरोह) में कर लिया था जिनसे काम लेना है। परमात्मा वह दिन दिखावे जिस

रोज़ तुम इसके क़ाबिल बनकर काम के लिए मुस्तैद हो जावो। हीरे में बज़ातहू (प्राकृतिक) वह सिफ़ात (गुण) जो उसमें रखे गए हैं मौज़ूद होते हैं, लेकिन उसको काम में तब लाते हैं जब उसकी तराश-ख़राश करके उसको सुडौल बना लेते हैं। प्रेम और जज़्बा तुम में है , उस परमात्मा की ज़ात से उम्मेदक़वी (आशा) है कि यह प्रेम तुम्हारा उस तरफ़ मुन्तक़िल हो जाय (फिर जाय) जहाँ प्रेम का भण्डार है और यह जज़्बा (खिंचाव) तुम्हारा जाज़िबे-हक़ीक़ी (परमात्मा) की जानिब मायल हो। जब वक्त आता है तब सब काम बन जाते हैं।

मैने पहले ख़त में तुमको भाई के ख़िताब से मुमकिन है याद किया हो। तात के मायने में भाई का लफ़्ज़ लाना कुछ हर्ज़ नहीं है। इलावा इसके अगर दूसरे ख़्याल से इस्तेमाल किया है तब भी बेजा नहीं हैं। तुम्हारी बैत हज़रत क़िबला के हाथ पर है न कि इस आसी के हाथ पर जोकि बिलकुल इसके क़ाबिल नहीं और न ऐसी बड़ी ज़िम्मेदारी और बोझ बर्दाश्त करने के क़ाबिल है। और यह तरीक़ा अगर मैने बरता तो इस लिहाज़ से कि बेअदबी न हो। इलावा बेअदबी के इस क़ानून के ख़िलाफ़ भी है जो बाप और बेटे के दरम्यान ताल्लुक़ है । दुनियाँ के मामले में अगर ग़ौर करो तो एक मिसाल सौदागरों और तिज़ारत पेशा लोगों में पाओगे कि वे अपनी फ़र्म यानी दुकान का नाम जोड़े के नाम से रखते हैं। मसलन , भवानीदास उग्रसेन, भवानीदास बाप का नाम और उग्रसेन लड़के का नाम, मुन्नालाल दीपचंद मुन्नालाल बाप का नाम दीपचंद लड़के का नाम। मक़सद यह है कि अपनी ज़ात के साथ वालिद की ज़ात पोशीदा हो और गुम न हो जाय और यह सिलसिला क़ायम और दायम (हमेशा) चला जाता है ।

उस ज़ात पाक ने अपनी ज़ात से अपने ज़िल (साया) को तुम्हारे अन्दर रख कर अपने को पोशीदा और तुमको ज़ाहिर कर दिया है । तुम्हारा यह फ़र्ज़ है कि अपनी ज़ात को पोशीदा करके उसकी ज़ात का इज़हार (प्रकट) कर दें। बाप का नाम बेटे से रोशन (उजल) होता है और इसी उम्मीद पर औलाद की ख्वाहिश इंसान को अज़बस है। पस, औलाद हो और नाम रोशन करने वाली, लेकिन नेक-नामी के साथ। सल्वी औलाद में मुशाबहत जिस्मानी, इख़लाक़ी तौर तरीक़ और हरक़ात और शकनात के लिहाज़ से अगर पायी जाती है तो आम लोगों को बेइन्तहा सहूलियत होती है कि बिला हस्ब नस्ब दरियाफ़्त किये हुए यह पहचान लें कि यह लड़का फलां शख्स का है और फिर हर हालत में अपने बाप के क़दम -ब-क़दम है। पस, क्या ही अच्छा है कि तुमने अपने वाल्दैन की मर्ज़ी के मुताबिक चलने और कोशिश करने के लिए मज़बूत ख़्याल क़ायम कर लिया है। मैं बहुत खुश हुआ। ईश्वर ऐसी हिम्मत-आली तुमको अता फ़रमाये कि तुम अपनी रूहानी पैदायश और रूहानी वाल्दैन के क़दम-ब -क़दम चलो। अगले लोगों ने इस मामले में इतना मुबालिगा किया है कि अपनी पोशीश (पहनावा) तरीक़-गुफ़्तगू (बातचीत का ढंग) चाल-ढाल में भी अपने हादी (गुरु) की मुताबिक़त (अनुकरण)

करने में एहतमाम बलीग़ किया है। मैं अपनी निस्बत क्या कहूँ कि एक समा भी हज़रत (अपने गुरु) के एहकाम (आज्ञा) की पाबन्दी में कोशिश न की। हाँ , अगर दूमदाद गबी और मदद खुदाबन्द तुम लोगों में से किसी को ऐसी हिम्मत अता फ़रमाये तो उसका हज़ार एहसान है। मुझे बड़ी शर्म आती है कि जो साहब इस मौज़ूदा हालत का इत्तवाह करने के लिए तैयार होंगे वो कहीं गढ्ढे में न जा गिरें क्योंकि यह मेरी जिस्मानियत (शरीर) इख़लाक़ियत (सदाचार) और रूहानियत (ब्रह्म विद्या) बिलकुल नाक़िस और नामुकम्मिल है। पस, मुनासिब यह समझता हूँ कि आप सब साहिबान को मुक़्क़मिल वजूद और रूहानियत (परमात्मा) के रूबरू (सामने) कर दूँ। उसका ज़रिया, उनके हालात और तरीक़ -ज़िंदगी (रहन-सहन) है। उनको आं अज़ीज़ हस्ब-तौफ़ीक़ (according to capacity) मुलाहिज़ा करें और किताबें देखें। मैं ऐसी किताबें बता दूंगा। तरीक़-ज़िन्दगी (रहनी सहनी) पुराने बुज़ुर्गों की लेनी चाहिए। आजकल के लोग नाक़िस (कमज़ोर) और नामुक़्क़मिल हैं। ईश्वर तुम्हारी और सब भाइयों की मदद करे।

मैं इस तातील में ज़रूर आने की कोशिश करता मगर इसमें कुछ काम सरकारी दावत वगैरह का सुपुर्द है। इसलिए नहीं आ सकता। फिर कभी आकर देख लूँगा। अगर सब अज़ीज़ों का इरादा इस तालीम में तकलीफ करने का है तो निहायत मुनासिब है। दो एक रोज़ मिल बैठने से उस जाज़िबे-हक़ीक़ी (परमात्मा) की मौज़ ज़्यादती के साथ हो जाया करती है जिसमें मेरा और तुम्हारा दोनों का फ़ायदा है। लेकिन उनके वाल्दैन की राय बवजह इख़राजात (खर्च) के न हों तो मैं उनकी मर्ज़ी को अपनी राय पर मुक़द्द्म समझता हूँ।

बन्दा,

रामचंद्र

अगर बाक़ई मौहब्बत तुमको किसी से है और उसकी सिफ़ारिश पर कमरबस्ता (पूर्ण रूप से चाहना) हो तो मैं जूस ईश्वर के दरबार में दुआ करूंगा कि उसके मामलात दुरुस्त हों और इख़लाक़ सुधर जावे। उसकी ज़ात रहीम (दयालु) है, वह सब कुछ कर सकता है।

सब साहिबान इस ख़त को अपने ख़त का जबाब ख्याल करेंगे। आपके वालिद साहब का ख़त सम्भाल कर रख लिया है। जब आओगे हवाले कर दूँगा। भारी होने के ख़ैफ़ से नहीं भेजता हूँ। इस खत को मेरे और अपने वालिद की तरफ़ से तसल्ली बख्श ख़याल कीजिये।

अज़ीज़म मद्दे उम्रहू , दुआ

पहले खतों का जबाब भेज चूका हूँ। ३१ जनवरी सन ३१ को तुमने लिखा है कि हैरत के मुक़ाम से गुज़रा। हैरत की दो क़िस्म होती हैं। एक हैरत महमूद (अच्छे क़िस्म की हैरत) जिसको तुमने ख़ुद लिखा है कि हज़ूर हर वक़्त रहने लगा और एक हालत अख़्तयार कर ली जो बयान में नहीं आ सकती। दुनियाँ के तमाम काम वगैर जरा भी ख्याल किये हुए हो जाते थे लेकिन मुझको ख़बर नहीं थी लेकिन सकून के साथ न कि परेशानी के साथ। ज़्यादातर वक़्त सोजोतड़प (प्रेमावेश) में गुज़रता था। आँख खोले हुए और बंद किये हुए एक अजीब सा आनंद मालूम होता था। समाधि अख़्तयार कर लेना अपने हाथ में मालूम होती थी। यह हैरत महमूद है। दूसरी इसके बरख़िलाफ़ हैरत मज़मूम (बुरी क़िस्म की हैरत) होती है जिसमें और बातें तो हैरत महमूद की ही तरह होती हैं लेकिन किसी क़िस्म का आनंद और हर हालत की अपने आप की ख़बर नहीं होती न दुनियाँ का कोई काम अक़्लमंदी के साथ होता है। लोग उस शख्स को दीवाना समझने लगते हैं।

एक दम रौशनी नमूदार होकर एक जिस्म इन्सानी सामने खड़ा हुआ दिखाई देना जिसमें लाल रंग की लकीरें थीं और बदन साफ़ होता जा रहा था। यह अपना सूक्ष्म शरीर था जो मरने से पहले जागती हुई हालत में इस स्थूल जिस्म से निकलकर बाहर आ खड़ा हुआ। अगर इसकी अख़त्यारी तौर पर मश्क़ हो जाय कि जब चाहे यह हालत पैदा कर ले तो निहायत अच्छा। बल्कि मरने से पहले मरना यही है। मुर्शिद लोग तवज्जह जब देते हैं तब यह अमल दानिस्ता (जान बूझकर) या ग़ैर-दानिस्ता (अनजाने में unconsciously) हो जाता है। वरना दूसरों पर कोई असर नहीं हो सकता।

उस कुएँ पर जाने और बैठने से जो हालत हो गयी, नाक़िस थी। हर जगह बिला तहक़ीक़ात इस तरह नहीं जाना चाहिए। तुम्हारा दिल नरवस (nervous) है इसलिए बमुक़ाबले और लोगों के तुम पर ऐसे मामलात ज़्यादा असर करते हैं। ज़िक्र दिमाग़ी और जिस्मानी वग़ैरह ऐसी हालत में जारी रहते हैं लेकिन निस्बत में वह लतायफ़ (कोमलता) बाक़ी नहीं रहती जो तुमने साफ़ महसूस की है। इसलिए किसी शख़्स के वह लतीफ़े (चक्र) जो सत्संग में ज़ारी हो जाते हैं जब वह आना जाना सत्संग का छोड़ देता है और बदएतक़ाद हो जाता है या कोई गुनाह उससे सरज़द हो जाता है तो चूंकि तमाम लतीफ़े (चक्र) ज़ाकिर (जाग्रत)रहते हैं वह समझने लगता है कि मेरा काम ज़ारी है। मगर नहीं, उसकी लतीफ़ निस्बत जो ऐतक़ादी होती है वह गुम हो जाती है। मिसाल से इसे इस तरह समझ लो कि कोई मशीन बराबर जारी

है ,अर्से से साफ़ नहीं की गयी और न उसको lubricate किया गया है , पस यह इज़हार उसका वैसा नहीं है जैसा कि साफ़ की हुई तेल लगाई मशीन का।

सात फ़रवरी के ख़त में तुमने लिखा है कि महाराज नारायन उर्फ़ गुट्ठी को ख्वाव में देखा।गुट्ठी के बाबत जो तुमने महसूस किया है मुमकिन है कि कोई वक्त ऐसा आ जाय जो उसकी पलट धार हो जाय और वह पलटा खा जाय। मगर इस वक्त तो कोई शक्ल नज़र नहीं आती। तुमको उससे मुनासिबत ज़्यादा है इसलिए भी तुमको ऐसा महसूस हुआ और होता है।

समुन्द्र के फलांग जाने की मिसाल - वहां भी गुट्ठी तुम्हारे साथ मौज़ूद पाया गया। पस फिर साबित होता है कि तुमको उससे निस्बत क़ल्बी (हार्दिक लगाव) है जो मौज़ूदा हालत में ज़ाहिरी तौर पर वह तुमसे बरख़िलाफ़ मालूम होता हो। समुन्द्र फलांग जाने की ताक़त उस वक़्त आती है जब मुर्शिद में फ़नाइयत तमाम (पूर्ण लय) हो जाय यानी दो चीज़ें मिलकर एक हो जायें। मगर यह भक्ति हनुमान जी की भक्ति के मानिन्द होनी चाहिए। जिसमें नफ़्स और अहंकार का कोई जुज़ (लेशमात्र) भी बाक़ी न रहे और अपनी ताक़त का भी ख़्याल भूल जाय। जैसा कि हनुमान जी महाराज में इस क़दर ज़्यादा बेख़ुदी और आधीनता की क़ैफ़ीयत थी कि जब उनको उनकी ताक़त की याद दिलाई जाती थी तब उनको याद आती थी और ताक़त का उस वक़्त इस्तेमाल करते थे। रामायण में समुन्द्र फलाँग जाने का क़िस्सा तुमको मालूम है।

जनाब क़िबला मौलाना साहब का प्यार फ़रमाना सही है। बाप से ज़्यादा दादा को मौहब्बत हुआ करती है। यह क़ायदा है। बरख़ुदगार ब्रजमोहन का आना और कहना कि हम तुम दोनों एक साथ सफ़र करेंगे। सफ़र करना सलूक के मुक़ामात का भी सफ़र करना है और ज़ाहिर यह है कि मुमकिन है इस हमारे मिशन को लेकर तुम दोनों सफ़र करो और मिशन को पूरा कर दिखाओ , जैसा कि मेरा इरादा इस क़िस्म की तज़बीज़ करने का अर्से से हो रहा है। दो-दो आदमियों को एक साथ एक एक जानिब तैनात करने का इरादा है। यह तज़बीज़ इस साल के जलसे में अगर मौक़ा हुआ तो सामने रखूँगा।

पुल पर लड़के का साथ होना एक ख्वाव यह है कि यह पुल पुले-सरात है। दोनों तरफ़ समुन्द्र है , पुल सतोगुणी दरम्यानी रास्ता है और पुल पर लड़का अपनी आत्मा और नफ़्स है जो अलहदा नहीं हो सकता है , मगर शुक्र है कि वह किसी तरह पार हो गया जो आख़िरी मंज़िल है। ईश्वर का शुक्र है।

परमात्मा के नूर से किरणों का निकलना और तुमको घेर लेना और बाद अज़ां चारोंतरफ फैल जाना निहायत अच्छी अलामत है।

फ़क़ीरों के पास दरअसल इब्तदाई हालत में जाना ख़राबी पैदा करता है। बाक़फ़ियत भला दूसरे आदमियों से क्या हो सकती है। अलबत्ता रुसबाई और ज़िल्लत हाथ आती है। मेरा तो अब तक का यही तज़र्बा है। अलबत्ता अगर सामने आ जावे तो मुज़ायक़ा नहीं और तलाश की ज़रूरत नहीं। अपने पीरों और मुर्शिदों से ज़्यादा कोई शफ़ीक़ (महरबानी करने वाला) नहीं हो सकता भला दूसरों को क्या गरज़ पड़ी जो हमदर्दी करें। और यह भी मुमकिन है कि उनके ख़्याल में हमदर्दी है लेकिन हमारी हालत मौज़ूदा के मुताबिक़ वही हमदर्दी बाज़ वक्त खिलाफ़ असर दिखा जाती है।

जहाँ तुम गए हो और वहाँ साफ़ जगह और बंगला बना हुआ देखा वह हरीबाबा के तप का मुक़ाम और रहने की जगह होगी। उनकी निस्बत सीज़ो -गुदाज़ (प्रेमावेश) की है और तुम्हारी निस्बत आजकल दूसरी क़िस्म की है। लिहाज़ा दो बरख़िलाफ़ कैफ़ियतें एक जगह जमा हो गयीं। इलावा इसके मैं पहले कह चुका हूँ कि तुममे असली माद्दा ज़्यादा है दूसरों का माद्दा फ़ौरन क़बूल कर लेते हो। इसलिए हर जगह पर जाना अभी मुनासिब नहीं है।

दूसरी जगह खाना खा लेने का असर भी तुम पर ज़्यादा होता है और होगा। इसलिए परहेज़ किया करो। जिस्म पर भी इसका असर पड़ना यह ज़्यादा लतायफ़ का बाइस है। वरना हर शख्स के जिस्म का असर नहीं पड़ता। सिर्फ़ दिल पर असर पड़ कर रह जाता है।

संध्या में तवज्जह का रुख़ किसी दूसरी जानिब चला जाना मालूम होता है। हाँ , यह हो सकता है। बाज़ मर्तबा आलमे-अरवाह (पितृ लोक) में से कोई रूह तवज्जो लेने को आ जाती है और बाज़ मर्तवा कोई बुज़ुर्ग तवज्जो देने को आ जाते हैं। संध्या में बुज़ुर्गान और पीराने-उज्ज़ाम (वंश के महापुरुषों) ने तुमको यकेबाद-दीगरे (एक के बाद दूसरे) बैत किया है यानी अपने-अपने सिलसिले में क़बूल किया है। यह मुबारिक है , इसकी नैमतें पर शुक्र बाज़िब है।

बाज़ वक़्त हज़ूरी का पैदा हो जाना और बाज़ वक़्त ग़ायब हो जाना , यह कोई नई बात नहीं है। यह हमेशा होता रहता है। यह नीचे का गिर जाना ऊपर चढ़ने के वास्ते होता है। क़दमों पर पड़े रहने का वक़्त निकल गया।अब दूसरा मौक़ा है। मेरा ज़ाहिरी साथ छोड़ना नहीं है लेकिन हाँ शक्ल बदल गयी है। पुश्त

(पीठ) की तरफ़ आ जाना पुश्तपनाही कहलाता है। दर्शन का न होना ज़्यादा कुर्बत (सामीप्यता) की दलील है। और इसी वजह से बेक़रारी होती है। जिस्मानी ताल्लुक़ के बाद रूहानी ताल्लुक़ तो होना ही चाहिए।

दुनियावी परेशानियाँ निहायत मौज़ूँ और मुबारिक होती हैं। नहीं मालूम क्या-क्या भेद इसमें पोशीदा होते हैं। बहुत से कमालात वातिनी (आत्मा का कमाल) इन्ही पर मुनहसिर होते हैं। हज़रत शेख़ अहमद मुजद्दिदी अलफिसानी ने क़िले ग्वालियर में क़ैद हो जाने पर अपने मुरीदों से यह इरशाद फ़रमाया कि एक ख़ास रूहानी मरहला (पहेली) और मंज़िल इस जेलख़ाने जाने पर मुनहसिर थी। दुनियावी परेशानियाँ कम से कम नफ़्स को सीधा करने में मदद देती हैं। भाई, जहाँ तक गले गले तक पानी रहे उस वक्त तक बर्दाश्त कर लेना वाजिव है और जब पानी सर तक आ जावे उस वक़्त लिहाज़ छोड़ देना चाहिए। यानी ---फ़रायज़ ख़ानेदारी (गृहस्थी) का अंजाम देना उस वक़्त तक बर्दाश्त कर लिया जाता है जब तक कि गृहस्थी के अमल में गुनाह की बातें शामिल न होने लगें और जब ऐसे मामले दरपेश आ जावें कि जिनसे गुनाह की नौबत आ जाय तो फिर गृहस्थी के धर्म से भी जाता रहा। सिर्फ़ खाना खाने की गरज़ से अगर कर्ज़ा हो गया हो तो ईश्वर मदद करता है और उसका निबटारा भी हो जाता है। लेकिन दीगर ऐशोआराम (luxury) वग़ैरह में जो कर्ज़ा हो जाय तो वह नाज़ायज़ है और वगैर अदा किये हुए उसका बोझ हल्का नहीं होगा। अज़ीज़ ----- क्यों कर्ज़ा नहीं लेता और अपनी तनख्वाह ही के अन्दर रहता है। मैं यह कहता हूँ कि तुम्हारे---- कहते हैं कि तुम्हारा खून सफ़ेद हो गया है। जब वह अपने लड़के को इस मुसीबत में मुब्तिला देखते हैं और उनको हमदर्दी नहीं आती। मैने तुमको याद होगा, पहले ही कहा था कि नौकरी तलाश करो, दुकान खोलना कुछ ज़्यादे अच्छा नहीं है। मगर खैर ,जो हो गया वह ठीक हो गया। अब अपनी ताक़त भर निभाओ। फिर जो कुछ होगा देखा जायेगा। जब वह लोग कुछ ख्याल नहीं करते तो क्या किया जावे। कुनवा अलबत्ता ज़्यादा है। इख़राजात (खर्च) भी मुनासिब तरीक़े के साथ नहीं होते। तरीक़ा खर्च करने का किसी को मालूम नहीं। मुझको तो अज़ीज़ ------की निस्बत बहुत ख्याल है कि उस बेचारे की कहीं रोज़ी लग जावे और जल्द लग जावे। ईश्वर कृपा करेंगे। यहाँ सब ख़ैरियत है। मेरी तबियत दाँतों की वजह से ख़राब रहती है। बाद सालाना जलसे के उनको निकलवा दूँगा। बच्चों को दुआ और प्यार , और सबको सलाम।

राक़िम

रामचंद्र

(१२)

अज़ फतहगढ़

१३ मार्च सन १०३१

अज़ीज़म श्रीकृष्ण लाल, मद्दउम्रहू,

माया बड़ी ज़बरदस्त है। बार-बार नए रूप में आकर अपनी तरफ़ लिए चलती है, इसका भेद ब्रह्मा, विष्णु और महेश ने भी नहीं पाया। हमारी तुच्छ बुद्धि इसका रूप क्यों कर समझ सके। मायावी ख़्याल माया से बाज़ रहना चाहता है। यह किस तरह हो सकता है। इसका भेद आजतक किसने पाया है। किस गोरख-धंधे में फंस गए ? अपना काम करो। इन बातों में क्या रखा है। यह रास्ते की रुकावट है। ऐसा कौन शख़्स है जो इन बातों से महफ़ूज़ रहा हो। जिसकी बात खुल गयी और जिसने ख़्याल पैदा कर लिया उसने मालूम कर लिया कि मैने जान लिया। और जिसको न ज़ाहिर हुआ वह बेइल्म है। और जान करके फिर तुम क्या कर सकते हो। एक माया से निकले, दूसरी माया दूसरी शक्ल में मौजूद है, इससे भागकर कहीं नहीं जा सकते। इसलिए अपना रास्ता क्यों खोता करते हो। अपनी धुन में लगे रहो और इन सब बातों को पसेपुश्त डाल दो।

अपने अज़ीज़ों और मौहब्बत वालों को भला कौन ऐसा शख़्स है जो नहीं चाहता है। लेकिन कारसाज़ वही परमात्मा है। तुम्हारा काम प्रार्थना का है। ईश्वर मालिक है, वह सब अच्छा करेगा।

---

(१३)

अज़ीज़म बाबू श्रीकृष्ण जी मद्देउम्रहू दुआ ख्वाबंद।

ख़त मुफस्सिल आया। हालात मालूम हुए। बिलफ़ैल कोई ज़्यादे ज़रूरत फ़िक्र करने की नहीं है। यहाँ फ़िक्र कर ली गयी है। तुमने अपनी कमी के बाबत हालात लिखे हैं। आदमी तो कमज़ोर है लेकिन बकौल आंके

जमाले हम नशीं दरमन असर कर्द

वगरना मां हुआं खाक़म कि हस्तम

अर्थ - मेरे प्रीतम के जमाल ने मुझमें असर कर दिया वरना मैं तो वही खाक़ का पुतला जो पहले था वह अब भी हूँ।

पीराने उज्ज़ाम का साया चाहिए। वही सब काम करते हैं। लेकिन हाँ , अपना इख़लाक़ जब तक दुरुस्त न हो जावे उस वक़्त तक उम्दा असर लोगों पर नहीं पड़ता है। इसके बनाने की अलबत्ता हर वक़्त कोशिश करनी चाहिए। परमात्मा तुमको हिम्मत अता फ़रमावे । बाक़ी सब ख़ैरियत है। सबको सलाम ।

रामचंद्र---

---

(१४)

अज़ीज़म बाबू श्रीकृष्ण जी , दुआ।

ख़त आया हाल मालूम हुए । अपने अज़ीज़ों और मौहब्बत वालों का भला , कौन ऐसा शख़्स है जो नहीं चाहता । लेकिन कारसाज वही परमात्मा है । हमारा काम प्रार्थना का है, ईश्वर मालिक है वह सब अच्छा करेगा। क़ौम और मुल्क़ की ख़िदमत के वास्ते अब आइन्दा उम्दा फील्ड आने वाला है । अगर यह तबियत को ख़ातिर नहीं तो मज़बूरन हालात के मुताबिक अमल दरामद करना होगा। क्यों घबराहट है , मैं रात-दिन इन इन मामलात में सरगर्दां रहता हूँ। इस वक़्त सब भाइयों का जमा होना मुनासिब नहीं ख़्याल किया गया है । ग़ालिबन तामील ईस्टर पर मुलतवी हो गया है । वकील साहब के कानपुर में इक्का पलट जाने के हाथ में ज़र्ब आ गयी है । उनको बहुत तक़लीफ़ है लेकिन तातील के पहले हफ़्ते में आने के वास्ते लिखा है । ईश्वर उनको सेहत अता करें । बाकी सब ख़ैरियत है। सब भाइयों को दुआ ।

---

(१५)

अज़ीज़म बाबू श्रीकृष्ण जी , दुआ ख्वावंद ।

कार्ड आया हाल मालूम हुए। दुआ तो हमेशा दिल में थी मगर ताहम आज से पीराने उज्ज़ाम के वसीले से दुआ खास तौर पर मांगना शुरू की है । इन्शा अल्लाह फ़ज़्ल होगा । (ईश्वर कृपा करेगा) अज़ीज़ जगमोहन की शादी २० अप्रेल सन २३ करार पायी है और २८ या २९ को सब भाइयों को जमा करने का इरादा है । बाबू चतर्भुज सहाय का एटे से ख़त आया है कि उनके भतीजे की ३० अप्रेल को शादी है । इससे मालूम होता है कि वे शरीक न हो सकेंगे । पस जो ख़ास हिस्सा लेने वाले असहाब हैं वे शरीक न हो सकेंगे । पस जो ख़ास हिस्सा लेने वाले असहाब हैं वे शरीक न हो सकेंगे तो कैसे काम होगा । इसलिए फ़ौरन लिख कर भेजिए कि सब लोग कब आ सकोगे। अगर २० अप्रेल शामिल शादी होंगे तो ग़ालिबन जलसे में न आ सकोगे, चूँकि पढ़ने का हर्ज़ होगा

और बे-इत्मिनानी और परेशानी दिल की होगी। इलावा इसके २९ को भागना पड़ेगा और डाक्टर साहब भी नहीं आ सकते। पस तज़वीज़ करके लिखो कब कि तारीख़ तज़वीज़ करनी चाहिए। आज डाक्टर साहब को भी खत लिख रहा हूँ कि फ़ौरन जबाब दें। बिला तुम्हारे मैं कोई काम नहीं कर सकता हूँ। पस जिस तारीख़ में तुम्हारा हर्ज़ न हो वह तारीख़ मुक़र्रिर करना चाहिए। २३-२४ को बारात वापस आ जावेगी। बाक़ी ख़ैरियत है।

दुआगो - रामचंद्र -

---

(१६)

ख़त आया, हाल मालूम हुआ। ताज्जुब है कि आ अज़ीज़ को उस ज़ाते-पाक (ईश्वर) पर भरोसा नहीं है। वह मालिक है और सब कुछ कर सकता है। उस पर भरोसा रखो। अपना certificate -पेश कर दो और उसकी क़ुदरत का तमाशा देखो।

दुआगो - रामचंद्र

---

(१७)

(डाक्टर श्रीकृष्ण लाल जी के लिए)

ये बात तस्लीम की (मानी) हुई है कि दुनियाँ की चाल यकसाँ (एकसी) नहीं है। इसका रंग हमेशा बदलता रहता है। इसकी गर्म और सर्द हवा के झकोले जब लगातार इन्सान बर्दाश्त कर लेता है तब पक्का और तजुरबेकार बन जाता है और फिर यह कहने लग जाता है कि -

देह धरे का दंड है, सब काहू को होय

ज्ञानी भोगे ज्ञान से, और मूरख भोगे रोय

मेरे एक अज़ीज़ को शायद पहला मौक़ा है कि उनको दुनियाँ के तल्ख़ तजुरबे से गुज़रना पड़ा है। वह एक ख़त के ज़रिये से मायूसाना ख़्याल को इस तरह ज़ाहिर करते हैं कि ख़त का मज़मून ज़ाहिरी लिबास से तो वैराग का अच्छा खासा ढांचा है मगर अन्दर की तरफ़ से ज्ञान की एक मुजस्सिम और झलकती हुई तसबीर नज़र आती है। ख़्यालात का फ़ोटो हस्ब -ज़ैल (निम्न लिखित) तहरीर से मालूम होता है।

मेरा ख़्याल है कि लफ्ज़ मतलब को गलत मायने पहिनाकर मौहब्बत के नाम से मौसूम कर लेते हैं वर्ण लफ्ज़ मौहब्बत तो हुमा की मानिंद सिर्फ़ इस्तेमाल ही के लिए रह गया है। (१) वाल्दैन को मौहब्बत अपने आराम के ख़्याल से (२) यार अहबाब को मौहब्बत अपने मददगार के ख़्याल से (३) घरवाली को मौहब्बत अपनी ख्वाहिशात के पूरा करने और आशाईश के सामान मोहइया करने वाले के ख़्याल से। (४) औलाद को मौहब्बत हर किस्म के आराम पहुंचाने वाले के ख़्याल से (५) रूहानी वाल्देन यानी गुरु को मौहब्बत आगे नाम चलाने वाले के ख़्याल से ((६) परमात्मा को मौहब्बत उसकी याद करने वाले और उसके हुक्मों पर चलने वाले के ख़्याल से। मौहब्बत जिसकी ख़ासियत बेग़र्ज़ाना (निस्वार्थ) होती है , कहाँ है ? (१) लड़का नालायक निकल गया वाल्दैन बेज़ार हैं। (२) रुपया पास नहीं , दोस्त ग़ायब (३) नादारी, बीमारी ने घर कर लिया, घरवाली नालां और तंग कर रही है। (४) औलाद से सख्ती से पेश आओ, शक्ल से भागती है। (५) शागिर्द नालायक़ और अपने गुरु का नाम बदनाम करने वाला है, गुरु महाराज मुतनफ़्फ़िर (घृणा करने लगे) (६) उसकी याद से फ़रामोशी और नाफ़र्माबरदारी, बुराइयों पर चलने वाला, दोजख़ तैयार। जानना चाहता हूँ कि सीधा रास्ता कौन सा और बुरा कौन सा, लेकिन लाचार।

क़ब्ल (पहले) इसके कि ख़त के जबाब में अपने नुक़्ते ख़्याल से तफ़सील के साथ रौशनी डाली जावे, यह कह देना मुनासिब होगा कि तस्बीर खींचने वाले ने ख़्यालात का सिर्फ़ एक पहलू लिया है और एकरुखा ख़ाक़ा खींचा है। आओ, हम पहले इस अक्स को उलट कर दिखाएँ। (१) औलाद को अपने वाल्देन से मौहब्बत अपनी परवरिश और आराम के ख़्याल से (२) यार और अहबाब की गरज़ यके-बाद -दीगरे (एक के बाद दूसरे) शामिल है। (३) खाविन्द (पति) को अपनी घरवाली से मौहब्बत नफ़सानी ख़्वाहिशात (वासना की तृप्ति) की गरज़ से और गृहस्थी के कारोबार में इमदाद मिलने की गरज़ से (५) चेले को गुरु से मौहब्बत दीन और दुनियाँ और जुम्ला नुक़्सों को दूर करने और हमेशा की ज़िंदगी, पूर्ण ज्ञान और हमेशा-हमेशा का आनन्द हासिल करने के ख़्याल से। इसके बाद ----- उपनिषद में याज्ञवल्क जी महाराज और उनकी स्त्री मैतरयी जी के संवाद में इन्हीं उसूलों पर जो मसला ज़ेर -बहस आया उसपर भी एक नज़र डालनी चाहिए।

याज्ञवल्क जी महाराज अपने ख्यालात को इस तरह ज़ाहिर फ़रमाते हैं (१) औरत की निगाह में उसका शौहर बहैसियत शौहर अज़ीज़ नहीं है बल्कि आत्मा की वजह से शौहर अज़ीज़ है। (२) शौहर की निगाह में उनकी बीबी बहैसियत बीबी अज़ीज़ नहीं बल्कि आत्मा की वजह से बीबी अज़ीज़ है। (३) माँ-बाप की निगाह

में उनके लड़के बहैसियत लड़के अज़ीज़ नहीं है बल्कि आत्मा की वजह से लड़के अज़ीज़ हैं। (४) ब्रह्म बहैसियत ब्रह्म अज़ीज़ नहीं हैं बल्कि आत्मा की वजह से ब्रह्म अज़ीज़ हैं , वगैरह -वगैरह।

अब ग़ौर करना चाहिए - क्या शरीर आत्मा है) क्या यह प्राण आत्मा है ? क्या यह बुद्धि आत्मा है ? यही शरीर अगर आत्मा मान लिया जाय तो बीज की शक्ल में बाप के जिस्म का निचोड़ है - बेटा बाप के जिस्म का माद्दा और बाप बाबा के जिस्म का माद्दा है। यह सिलसिला अनादि है और क़दीम से होता चला आया है। इच्छा , द्वेष, सुख, दुःख, यत्न और ज्ञान से सब उसी आत्मा के गुण मालूम होते हैं और मरने के पीछे ये बेजान हो जाते हैं।

जौहर में कुल इन्सान एक है बल्कि तमाम सृष्टि एक मालूम होती है। संजोग और कर्म ने उनकी भिन्न-भिन्न सूरतें पैदा कर दीं हैं। इसी असलियत पर विचार करते हुए अक्सर लोगों ने तरह तरह के ख़्यालात पैदा कर लिए। बस , जिसको आत्मा की माहियत नहीं मालूम उसको ब्रह्म क़बूल नहीं करता। इसलिए कि जब अपनी हस्ती के साथ जो आत्मा है अपने आप से उसको तमीज़ नहीं कर सकता तो अच्छा या बुरा रास्ता किस तरह मालूम कर सके।

ऊपर लिखी हुई हालतों और अलहदा-अलहदा जिस्मों में जो एक चीज़ एक ही सूरत में सब शामिल है (बाप, भाई, लड़का, बीबी, गुरु, दोस्त) वह सिर्फ़ एक ही है। माद्दा और प्रकृति के लिहाज़ से अलहदा-अलहदा ज़रूरियात , आदत , कर्म , और स्वभाव हैं और अलग-अलग सूरतें नज़र आती हैं। लड़का, बाप, गुरु, चेला वग़ैरह वग़ैरह में एक चीज़ है जो मुतहर्रिक है (हरकत कर रही है)। यह हरकत क्या है ? कहीं पर इसकी शक्ल बिजली की है और कहीं पर इसकी शक्ल ग़रीज़ी (vitality) की है। कहीं ये आग़ है , कहीं ये रौशनी है और किसी जगह यह प्राण वायु है, कहीं क़ुव्वते कहरुवाई (पैदा करने की शक्ति) है, कहीं ख़्यालात की धार, संकल्प-विकल्प, मन की वृत्तियाँ, कहीं अक़्ल के करिश्मे, कहीं ज्ञान और विज्ञानं, कहीं मारफ़त , कहीं हक़ीक़त के नुक़्ते , कहीं सूरज की रौशनी, कहीं रंगो-रूप , कहीं प्रेम, कहीं मौहब्बत, कहीं इश्क़ ,कहीं आत्मा और कहीं तीनों गुण, कहीं ब्रह्मा और कहीं पारब्रह्म। गर्जे कि माद्दा मुक़ाम ज़र्फ़ (देश, काल, वस्तु) और प्रकृति के साथ सम्बन्ध से यही मौहब्बत जो ऐन आत्मा है गर्ज़ बन जाती है और जहाँ गर्ज़ आई हुनर छुप जाता है। ख़ुदा मौहब्बत है जो अपनी ऐन आत्मा है। यह मौहब्बत ग़र्ज़ में शामिल होने से ऐब में शामिल हो जाती है लेकिन ग़र्ज़ क़ुदरत का लाज़िमा (ज़रूरी) है। जो बेग़र्ज़ नहीं है , यह ग़र्ज़ ड्यूटी और फ़र्ज़ है। इसी का दूसरा नाम धर्म

है। इसी धर्म को बिला ख़्याल मुआवज़ा (बदले की भावना) पालते रहना असली धर्म है। ये ही निष्काम कर्म कहलाता है। हरेक धर्म महज़ अपनी आत्मा के लिए किया जाता है अपनी आत्मा और सबकी आत्मा एक है। इसीलिए बाहम लेन-देन कि सिलसिला बराबर जारी है। अगर हम किसी चीज़ को किसी को देते हैं तो यह ज़रूर है कि उसी क़िस्म की या दूसरे क़िस्म की चीज़ को दूसरे से, जाने हुए या बिना जाने हुए, लेते रहते हैं। मसबत और मनफ़ी (positive and negative) दोनों धारें अपना अपना काम बराबर किये जा रहीं हैं, चाहे हम ख़बर रखते हों या न रखते हों। लेने और देने का सिलसिला बन्द नहीं होता। बस, फिर इसमें अहसान क्या है ? क़ुदरत ज़बरदस्ती ऐसा करने कराने को मज़बूर करती हैं। यह हमारा अज्ञान है जो सब को तो सामने रख लेते हैं और अपने आपको, जो ऐन आत्मा है, भूल जाते हैं। अगर यह बात समझ में न आती हो तो एक कहानी जो नतीजाख़ेज है, सुनो -

चंद लोग एक जमायत बनाकर किसी काम के लिए सफ़र को चले। रास्ते में दरिया पड़ा। नाव मौज़ूद थी या नहीं थी, गर्जे कि सब पार होकर जब दूसरे किनारे पहुँचे तो आपस में मशबरा हुआ कि आओ हम सब लोग अपनी पड़ताल कर लें कि सब उसी तादाद में, जो घर से चले थे, मौजूद हैं कोई हममे से डूब गया। हर शख़्स ने सबको शुमार करना शुरू किया लेकिन शुमार करते वक़्त अपने आप को भूल जाता था इसलिए एक की कमी पड़ती थी। जब सबने इस तरह शुमार कर लिया और कमी पूरी नहीं हुई तो सब चिल्ला-चिल्लाकर रोने लगे। लोगों ने रोने का सबब दरियाफ़्त किया, मगर कोई यह मामला तय नहीं कर पाया। आख़िरकार एक तज़ुर्बेकार साधू ने आकर इस तरह उनको उनकी तसल्ली की कि सबको सामने खड़ा करके एक से कहा -' अब मेरे सामने शुमार करो।' उन्होंने पहले ही तरीक़े से शुमार किया। तब साधू ने कहा कि तुम अपने आपको क्यों नहीं शुमार करते।? और हमेशा शुमार करने में हर शख़्स अपने आपको भूल जाता है। इस ज्ञान से सबको इल्म हो गया कि हमारी ग़लती थी और सब मुतमय्यन (होकर) अपने रस्ते चले गए और साधू ने अपना रास्ता लिया।

अब मज़मून साफ़ है , खूब समझ लेना चाहिए कि हर शख़्स में कर्म इन्द्रियाँ, ज्ञान इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, चित्त, अहङ्कार व आत्मा मौज़ूद हैं। कर्म करने में सबको सामने रख कर शुमार करता है लेकिन अपने आपको, जो ऐन आत्मा है और ऐन मौहब्बत है, भूल जाया करता है। दुनियाँ के सब लोग इस गुल्थी को सुलझाने से आज़िज़ (तंग) हैं लेकिन एक साधू आता है और गुरु रूप बनकर आत्मा का बोध यानी तमीज़ कराकर और शांति देकर अपना रास्ता लेता है जो बिला मुआवज़ा है और उसका महज़ यही काम है। जहाँ जीव का उद्धार हो गया फिर उसको क्या मतलब?

जब मैं था तब गुरु नहीं , अब गुरु है मैं नाहिं।

प्रेम गली अति साँकरी , या में दो न समाहि

जब तक चेले मैं कमी है, ज्ञान नहीं हुआ, गुरु अपना काम जो धर्म है, करता है। जब चेला पूरा हो गया तो गुरु को गुरु क्या सिखाएगा और फिर क्या ताल्लुक़। काम हो लिया और अपने अपने रास्ते दोनों चले जाते हैं। यहीं ग़र्ज़ और बेग़र्ज़ी की शान है। अगर यही शान और शान की झलक सब भाई, बन्धु , रिश्तेदार अहबाब में आने लग जाये तब हर काम धर्म (ड्यूटी) बेग़र्ज़ाना हो जाएगी और मौहब्बत जिसका नाम है अपनी असली सूरत में नामूदार हो जाएगी। हम नाहक़ अपने आपको और दूसरों को ख़्वामख़्वाह मुल्ज़िम क्यों करार दें। न कोई इल्ज़ाम है , न कोई मुल्ज़िम, सिर्फ़ समझ का फेर है। इसलिए भाई अपना काम किये जागो और जो हो सके करते जाओ। परमात्मा सच्चा ज्ञान दे।

दुआगो – रामचन्द्र

==========

पत्र जो ज़मीमे से लिए गए

खत नम्बर १

सबाल

इन चक्रों में उनके रंग, उनके हरफ़ (अक्षर), उनके बाहन, उनकी देवियाँ जिनका कि बयान पहले हो चूका है, उनसे ज़ाहिर होता है कि यह सब गुच्छे खून के रंग, हवा के मेल से और अलग-अलग तत्वों के मिलाप से रगों की चाल और तत्वों की जुदा जुदा शक्तियाँ हैं। फिर इनकी साकार मूर्तियां बनाकर ध्यान करने की ज़रूरत क्यों बयान की जाती है ?

जबाब

तमाम किस्म की सूक्ष्म विद्यायें (अलूमे बातिन) जिनको अंतःकरण (बातिन) से सम्बन्ध यानी ताल्लुक़ है, बिला साकार मूरत के यानी ज़ाहिरी शकल के बनाये, साधकों को नहीं बताई जा सकतीं। अव्वल तो साधकों को ज्यूँ की त्यूँ उनकी मूरत के बनाने की निहायत ज़रूरत है, जैसे अक्षर यानी हरफ़, अदद, बिंदु, रेखा, राग, सुर, प्राण, आत्म -विद्या ये सब सूक्ष्म हैं। मूरत के ज़रिये से साधकों को सहल-तरीक़े से बताई जा सकती हैं। भली भाँति विचार करके देखिये कि अ, क,ख,ग वग़ैरा महज़ धुन (ध्वनि) मात्र हैं। ज़बान से निकलती होती हैं लेकिन उस वक्त उनका कोई स्वरुप नहीं। परन्तु मख्तलिफ मुल्कों के विद्वानों ने आपस में लिखने-पढ़ने, शिक्षा देने के वास्ते इन अक्षरों की साकार मूर्तियाँ अपनी अपनी शक्ल की माफ़िक़ बना लीं। अगर यह मूर्तियाँ न होतीं तो हम लोग एक दूसरे के मन की बात ठीक तौर से क़तई नहीं जान सकते थे। यह साकार मूर्ती की ही महिमा है कि हज़ारों कोस दूर बैठे हुए भी एक दो अंगुल के कागज़ पर इन हरुफ़ (अक्षर) की मूर्तियों को बना कर डाक और तार के ज़रिये फ़ौरन अपने दिल की बात ज़ाहिर कर देते हैं। इस वास्ते योगियों ने योग विद्या साधन के लिए तमाम सूक्ष्म ताक़तों की साकार मूर्तियाँ बना ली हैं जिनके महज़ ध्यान करने से चित्त की वृत्तियाँ निरोध होकर (सिमट कर) समाधि की कैफ़ियत हो जाती है और वर्णमाला की साकार मूर्तियों के ज़रिये से एक दूसरे से आपस में हज़ारों हज़ारों कोस दूर बैठे बातचीत कर लेते हैं।

नासाग्र ध्यान

सबाल

मेरे एक भाई ने मुझ से ख़त के ज़रिये यह दरियाफ़्त किया है कि जनाब हज़रत क़िबला ने यानी मेरे गुरु महाराज ने किसी वक़्त तुमको यह हिदायत फ़रमाई थी कि दोनों अबरुओं (भोंहों) के बीच में नाक के आख़िरी हिस्से पर देखा करो।

जबाब

ग़ालिबन यह बहुत अर्से की बात है। मुमकिन है जो अल्फ़ाज़ उन्होंने फ़रमाये थे, वह बजिनसही (जैसे के तैसे) याददाश्त से उतर गए हों या उस वक़्त ही इस तरह समझ में आये हों। बहरहाल सुनने और समझने में ग़लती हुई है या इस ख़त लिखते वक़्त इबारत में ग़लती हो गयी हो। सही तालीम और तरीक़ा इस तरह पर है

कि यह दो किस्म के शग़ल हैं। एक को नासाग्र ध्यान (शग़ल नसीरा) कहते हैं और दूसरे को त्रिकुटी ध्यान (शग़ल -महमूदा) कहते हैं। लेकिन मैं कहता हूँ कि यह त्रिकुटी ध्यान नहीं है बल्कि भृकुटि ध्यान है क्योंकि दोनों अबरुओं (भोंहों) के दर्मियान की जगह दरअसल त्रिकुटी की नहीं है बल्कि दो दल कँवल, आज्ञा-चक्र , तीसरे तिल, शिव नेत्र , शिव की तीसरी आँख , नुक़्तए सवदा , प्रतिबन्ध की जगह है। अगर यह दोनों शग़ल आँखे खोली हुई रख कर किया जाय तो इसको त्राटक ध्यान भी कहते हैं।

नासाग्र ध्यान यह है कि नाक की हद यानी नोक पर आधी आँखें खुली हुई रखी जावें और पुतलियाँ आँखों के किसी कोने की तरफ़ न खिसकने पायें, बल्कि आँख के ढेले के बीच में सधी हुई रहें, और नज़र न आसमान की तरफ़ हो और न ज़मीन की तरफ़ हो। आँख से नाक के सिरे को न देखा जाय बल्कि दिल और ख़्याल से देखा जाय। इसके ये मायने हैं कि आँखों को आधा खुला हुआ इस तरह रखा जाय जिस तरह कि नशा पिए हुए आदमी की आँखें पूरी तरह नहीं खुलती और यह ख़्याल किया जाय कि नाक की नोंक को देख रहे हैं और इन्तज़ार प्रकाश का है या मालिक का। जितनी देर तक पलक न झपें उतनी देर तक यह साधन करना चाहिए। एक दम से इस से इस क़दर शग़ल न करें कि आँखों से पानी बहने लग जाए या दर्द महसूस हो बल्कि आहिस्ता आहिस्ता रोज़ाना थोड़ा थोड़ा बढ़ायें।

लोग बड़ी ग़लती इस शग़ल में यह करते हैं कि नज़र से नाक के सिरे को देखा करते हैं और ख़्याल से कुछ ताल्लुक़ नहीं रखते। इससे नज़र को नुक़सान पहुँचता है। आँखें भेंगी और टेढ़ी पड़ जाती हैं और दिल के शामिल न होने कि वजह से असली फ़ायदा नहीं पहुँचता।

दूसरा शगल (भृकुटी ध्यान)

यहाँ पर दोनों भोंहों के बीच तीसरे तिल पर ध्यान जमाते हैं और तारे की शकल का ध्यान करते हैं। आँखों को बंद करके भी यह ध्यान किया जाता है और खोलकर भी। आँखें ज़रा ज़्यादा खुली हुई रखते हैं इस तौर पर कि सामने की कोई चीज़ नज़र नहीं आती, और ध्यान यह किया जाता है कि इन आँखों से हम उस तिल या नुक़्तये-सवैदा को देख रहे हैं। लेकिन आँखें बन्द करके अच्छा होता है। यह मुक़ाम जाग्रत अवस्था में जीवात्मा की बैठक का है, या यों कहना चाहिए कि नफ़्सनातका के रहने का मुक़ाम है। नख्शबन्दी मुजद्दिदी पहले क़ल्ब पर इस क़दर ध्यान पुख़्ता कराते हैं कि उसके अभ्यास से फ़ौरन एक दिन यह लतीफ़ा (चक्र) खुल जाता है।इस लतीफ़े के खुल जाने की निशानी यह है कि ज़ाहिरा तौर पर दोनों अबरुओं (भोंहो) की जगह भारी भारी हो जाती है या चींटी के रेंगने की सी हरकत मालूम होती है। बाज़ को गुदगुदी और बाज़ को दर्द

महसूस होता है। अन्दर की तरफ़ तारा चमकता हुआ नज़र आता है जिसके कि चारों तरफ़ शुआयें (किरणें) बड़ी तेज़ रौशनी सी निकलती हुई और चारों तरफ़ फैलती हुई नज़र आती हैं। इसके इलावा बहुत सी और निशानियाँ और हालतें हैं। मुख्तलिफ अभ्यासियों को मुख्तलिफ हालतें नज़र आती हैं।

एक अभ्यासी को मैने देखा था कि उसकी पुतलियाँ आँखों के ढेले से बिलकुल ऊपर को चढ़ जाया करती थीं और इस क़दर ऊपर को हो जाती थीं कि काली पुतली बिलकुल नज़र नहीं आती थी और अभ्यासी की शकल निहायत डरावनी हो जाती थी। उनसे पूछने पर मालूम हुआ कि उनको इस अभ्यास से कोई फ़ायदा नहीं हुआ। आँखों को खुला रखकर नज़र से यह कोशिश नहीं करना चाहिए कि भोंहों के दरम्यान इस ज़ाहिरी नज़र से देख रहे हैं, ख़्वाह आँख बंद करके या खोल कर। जिन साहिबान को यह अभ्यास बतलाया जावे वही करें। इस तहरीर को देखकर ख़ुद-ब-ख़ुद बिना किसी से दरियाफ़्त किये न करें, वर्ना फ़ायदे के बजाय नुक़सान हो जायेगा। हर शख़्स को पात्र देखकर उसको तालीम दी जाती है। किताब देखकर अभ्यास करना निहायत ख़तरनाक़ है।

ख़त नम्बर २

सबाल

एक साधक ने अपनी यह हालत लिखी है कि दो महीने से मेरी अजीब हालत है। दिसम्बर के महीने में शायद किसी दिन शाम को संध्या करते हुए मुझे ऐसा मालूम हुआ कि जेसे दूर से घण्टे की आवाज़ आ रही है। मैने उस तरफ ज़्यादा ख़्याल नहीं किया लेकिन उस दिन से यह हालत हो गयी है कि शाम को तक़रीबन आठ बजे रात के जब मैं अकेला बैठता था, यह आवाज़ होने लगती थी, चाहे मैं उस तरफ ख़्याल करूँ या न करूँ। यह आवाज़ दायें कान की तरफ़ मालूम होती है। मैं नहीं समझ सका कि इसका क्या सबब है। थोड़े दिन यह ख़्याल किया कि गर्द वग़ैरा से, फिर यह ख़्याल आया कि शायद मेरे हर वक़्त परेशान रहने से दिमाग़ की किसी कोठरी (cell) पर कोई ख़ास असर हुआ है। साथ ही यह भी ख़्याल था कि ख़ुश्की का सबब न हो। ग़रज़, कि इस तरफ़ कोई ख़ास ख़्याल न करते हुए जितने वक़्त संध्या किया करता था करता रहा। चुनाचे अब भी वही हालत है गो उतनी तेज़ी के साथ नहीं। जब उठता हूँ तब यह आवाज़ मालूम होती है। पहले से नींद भी बहुत कम है। अब सिर्फ़ तक़लीफ़ यह है कि जब मैं ध्यान में बैठता हूँ तन यह आवाज़ मालूम होती है, चरणों के ध्यान में फ़र्क़ आ जाता है।

जबाब

तुमको सत्संग करते वक़्त इस क़िस्म की बातें सुनने का इत्तफ़ाक़ बहुत कम हुआ है। इस वजह से ये हालतें, उनका मुक़ाम, इनकी सूरतें पहले से मालूम नहीं हैं, और न इस क़िस्म की कोई किताब देखी होगी जिससे पता लग जाता। यह मालिक की देन है और ख़ुशख़बरी है कि बिला कानों में ऊँगली लगाए या डाट लगाए दिमाग़ी शब्द सुनाई ददेने लग गया। यह सुरत-शब्द-योग कहलाता है। मालिक की दया और कृपा से ख़ुद-ब-ख़ुद दिमाग़ी लतीफ़ा (चक्र) खुल गया। गो यह शुरू का शब्द है मगर उसकी महर होगी तो इसी तरह और भी आगे के शब्द सुनाई देने लगेंगे। इस वक़्त इनके नामों, जगह और सूरतों की तफ़सील लिखना मुनासिब नहीं ख़्याल किया जाता। तबियत को इस आवाज़ से हटाने की ज़रूरत नहीं है। अगर ख़ुद सुनाई देती है तो सुनते जाओ मगर यह मक़सद नहीं है और न असल चीज़ है। रास्ते में आने वाली बातें हैं जिनसे पता लग जाता है की मन्ज़िल की तरफ़ जा रहे हैं।

कस न दानिस्त कि मन्ज़िल दहे माशूक़ कुजात

ई क़दर हस्त कि बाँगे जर्स मी आयद

(किसी ने यह नहीं जान पाया कि उस यार के रहने की जगह कहाँ है लेकिन इस क़दर पता लगा कि घण्टे की आवाज़ सुनाई देती है।)

इसकी तफ़सील तो संत-मत के शब्दों और किताबों में बहुत विस्तार के साथ लिखी हुई है मगर यह बातें पहले से जान लेना बाज मर्तबा फ़ायदा देती हैं लेकिन बाज सूरतों में नुक़सान देती हैं। मसलन, सुनी सुनाई हुई बातें या किताब में देखी हुई बातें दिमाग़ के क़ुब्बते हाफ़िज़ा (स्मरण शक्ति) में महफ़ूज़ रहती हैं। कभी अभ्यास की हालत में वही बातें दिमाग़ के महफ़ूज़ हिस्सों से निकलकर सामने आ जाती हैं और ऐसा मालूम होता है कि वाक़ई सही हैं और सचमुच यह कैफ़ियत हम पर तारी हो गयी हैं, हालाँकि यह महज़ क़ुब्बते बहमिया (मनन शक्ति) की एक मुजस्सिम शक़ल (सामने कड़ी हुई शकल) थी जो असली नहीं है, न अभ्यास का नतीज़ा है और न मालिक की महर से है, और यह महज़ धोके की बात है। हालाँकि यह क़ुब्बते ज़हनियाँ की शकल अरसे तक क़ायम नहीं रहती और ज़रा से धक्के से ग़ायब हो जाती हैं और असली ग़ायब नहीं होती। लेकिन अब अभ्यासी ऐसे ज़हीन (प्रखर बुद्धि) नहीं हो सकते कि इन दोनों हालतों के दरम्यान फ़र्क़ मालूम कर सकें। पस, वहम और

शुबहे के शिकार होकर ख्वामख़ा अहंकारी बन जाते हैं। जो क़ैफ़ियत के बिला सुने और देखे हुए अभ्यासी की सुरत में पड़ जाय तो शक और शुबहे को दख़ल नहीं होता। इसलिए हम लोग ऐसा ही मुनासिब समझते हैं कि हालात को पहले से ज़ाहिर नहीं करते और इन्तज़ार करते हैं कि साधकों के सामने असली कैफ़ियतें और हालतें इस तौर पर साफ़ उनके सामने आ जावें कि वे ख़ुद उनका इक़रार कर लें और वहम और शुबहे की गुंजाइश बाक़ी न रहे। ईश्वर अपने महर और दया करे।

खत नम्बर ३

सवाल

एक प्रेमी अपने हाल से इस तरह पर पुत्तला करते हैं की जब से आपके पास से आया तबियत अच्छी रही और बराबर लगी रहती है। तीन दिन तक दायें बायें सीने पर सुइयाँ चुभीं और उसके बाद मुख़्तलिफ़ मुक़ामात पर पहुँचा। उसमें पेशानी (माथा) के ऊपर के हिस्से और सिर के पिछली तरफ़ और बायें हाथ की हथेली के दरम्यान ख़ास क़ाबिले ज़िक्र है, और दाहिने कान के अन्दर चाँद बार कई दिन बड़े ज़ोर से फड़कन हुई और कोई चीज़ अन्दर तड़तड़ की सी आवाज़ करती हुई मालूम हुई। इसके इलावा पूजा पर और सोते समय मुतवातिर रोज़ाना कभी ज़्यादा, कभी कम शब्द सुनाई देता है और सीटी या एक क़िस्म की तेज़ सनसनाहट मालूम देती है।

जबाब

सीना या ह्रदय चक्र की जगह रुद्र का स्थान है और नीचे से ऊपर की तरफ़ मंज़िल में चौथी जगह यानी मिटटी, पानी और आग तीनों मुक़ामात के बाद और नीचे की स्थूल प्रकृति के बाद यह हवाई तवक़्क़ा है जो इन तीनों से सूक्ष्म और लतीफ़ है। इन तीनों का ख़ुलासा और जौहर सीने में है इसलिए पिण्ड शरीर में यह सीना दरम्यानी (बीच का) मुक़ाम है। यहाँ रूहे-हैवानी और रूहे-इन्सानी के मिलान की जगह है। इसलिए यह बड़ा ज़रूरी मुक़ाम ख्याल किया जाता है। तीन दिन तक मुतवातिर दायें और बायें जानिव सीने में सुइयाँ चुभना सा मालूम हुआ - इससे यह मुराद (आशय) है कि स्थूल तत्व के जौहरों के मुक़ामात पर जो सीने में बतौर जौहर रखे हुए हैं हरारत और नई ज़िन्दगी पैदा हुई यानी वह मुक़ामात जो सोये हुए थे जाग उठे और ऊपर से सत की धार ने आकर धक्का लगाया और हरारत पैदा कर दी जो चक्रों के जाग जाने की अलामत है। इन दरम्यानी मुक़ामात के जौहरों को ब्रह्माण्डी अमृत की धार ने सैराब कर दिया और ख़ास ख़ास मुक़ामात में झटका लगाया। अब सीने के मुक़ामात ही को धक्का लगाकर नहीं छोड़ा गया बल्कि दिमाग़ी चक्रों (लतायफ़) और मुक़ामात को भी असर पहुँचाया गया जैसा कि आपके ख़त में पेशानी के ऊपर सहसदल कँवल को खोले जाने

का हाल लिखा हुआ है। शब्द का सुनाई देना भी लिखा है। इसकी बाबत खत नम्बर दूसरे में जबाब लिखा है, काफी है। मुक़ामात की तफ़सील (ब्यौरा) सीने की और दिमाग़ की फिर अपने मौक़े पर दिखाई जावेगी। इस वक्त तो ईश्वर की महर और दया (फ़ज़्लो-करम) का शुक्रिये के तौर पर यह इबारत लिखी गयी है। उसके फ़ज़्ल से उम्मेद है कि अगर अभी यह मुक़ामात अक्सी तौर पर खोले गए हैं तो उसकी दया और महर के भण्डार से कभी असल मामलात में दाख़िला नसीब हो जायेगा। तब फ़ज़्ल और करम की उम्मीदें रखना उसी की ज़ात के सहारे है। गुरु महाराज दया करें।

दुआगो - रामचंद्र

---

(१८)

तस्सवर शेख़ (गुरु का ध्यान)

मुर्शिद और गुरु की मिसाली शक्ल, उसकी हरकात सकनात (रहनी सहनी) इख़लाक़ और आदतों की तरफ़ दिल में नज़र रखना, याददाश्त (यादगारी) क़ायम रखना, उसका ध्यान बाँधना सूफियों और संत-मत के शागिलों (अभ्यासियों) और साधकों के यहाँ रायज़ (रिवाज़) है। इसको शग़ल राब्ता (गुरु का ध्यान) भी कहते हैं और वरज़ख़ (बीच का) पीर भी इसका इस्तलाही (पारिभाषिक) नाम है। चित को एकाग्र करने के लिए यह अमल ऐसा पुरतासीर (शक्ति से भरा हुआ) है कि जादू की तरह अपना करिश्मा दिखता है बल्कि और रास्तों से यह रास्ता क़रीब और काम को सहल कर देता है। लेकिन शर्त यह है कि जिस मुर्शिद का ख़्याल बाँधा जावे वह मुकम्मिल हो और संत-मत में गुरु की हैसियत रखता हो, जिसके बातिन (आंतरिक ह्रदय) का तज़किया (शुद्ध) और तज़किये नफ़्स (इन्द्रियों और इच्छाओं से शुद्ध) हो चुका हो और माया की हद के पार पहुंचा हो, वर्ना फिर साधक माया जाल का बंधुआ होकर और भी जकड़ बंद हो जायेगा। इसलिए निहायत अहतियात लाज़िमी है कि हर शख्स का ध्यान न बाँधा जाय। बाज़ लोगों ने इसीलिए इसकी क़तई मुमानियत (मनाही) कर दी है।

संत-मत में शुरू शुरू में सत्संग के वक्त मुर्शिद के चेहरे पर दोनों भोंहों के दरम्यान नज़र जमाने को इशारा किया जाता है। यह बाहरी शकल जमाली की तरफ़ इशारा है। लेकिन अन्दर की तरफ़ अभ्यास करने के लिए मुक़ाम और जगह और ख़ास हिदायत बताई जाती है जो ज़रूरत के वक़्त और मौक़े के साथ उसकी तरकीब साधक को बतलायी जाती है। आम तौर पर खुले हुए तरीक़े से बताने की मुमानियत है। वजह मुमानियत की साफ़ ज़ाहिर है कि बेसमझ लोग शौक़ में आकर बिना मौक़ा और मुनासिबत के इस अमल का

बेजा इस्तेमाल न कर डालें। ख़ुद मुसीबत में फंसे और दूसरों को आफ़त में डालें। बाज़ तरीक़े के लोग इस शग़ल राब्ते का उस वक़्त तक हुक्म नहीं देते जब तक यह नहीं देख लेते कि साधक में प्रेम का चश्मा उबाल पड़ा है या मौहब्बत का जज़्बा भड़क उठा है, उसको ऐसी उमंग आयी हुई है कि बिना कहे और सुने ख़्वामख़ाह वह शक्ल को सामने रखने लगा है। अगर ऐसा गलवा (घेरा) मौहब्बत का हो जाय कि शक़्ल दूर करने से भी न हटे तो यह क़ुदरत का तक़ाज़ा है और लहर का रुख बहाव की तरफ़ है वर्ना ज़बरदस्ती क़ायम एक तरह की हठ है जो मूर्ति -पूजन की हद में आजाता है। इस हठ और ज़बरदस्ती शग़ल करने का नतीज़ा होता है जैसा कि अक्सर तरीकों में अनहद शब्द सुनने के लिए कानों में उँगलियाँ लगाना। इस तरह से नतीज़ा यह होता है कि शब्द तो सुनाई दे जाता है मगर आरज़ी (थोड़ी देर को)। इसमें बीमारी का भी डर है। इस शग़ल का असली मतलब और फ़िलसफ़ा निहायत बारीक और गहरा है जिसका इस वक़्त दलील से साबित करना तबालत से ख़ाली नहीं है। लेकिन मुख़्तसिर और इशारों के तौर पर इतना कहना इस वक़्त काफी है कि ' बरज़ख़ ' कहते हैं दरमियानी चीज़ को जो एक चीज़ को दूसरे के साथ जोड़ देने में ज़रिया या वास्ता हो। पीर या गुरु दरम्यानी या मीडियम (medium) है जीव को परमात्मा से जोड़ने का। अगर यह समझ में न आये तो इस तरह ख़्याल करना चाहिए कि शीशा है ज़रिया अपनी शक्ल देखने का किताब ज़रिया है इल्म का, उस्ताद वास्ता है किसी हुनर के हासिल करने का, परमात्मा की धातु की या पत्थर की मूर्ति एक खास ज़रिया है परमात्मा की याद दिलाने का, इसी तरह ज़िन्दा गुरु और मुक़्क़मिल हस्ती ज़रिया है उस ब्रह्म से नज़दीकी हासिल करने का। बिला शुबहा गुरु की मिसाली शक्ल साधक और ब्रह्म के दरम्यान एक जीता जगता वास्ता है। उसकी आदत, इख़लाक़ , तर्जेअमल , दुनियावी व्यवहार और रूहानियत का प्रभाव साधक में बिजली की तरह उसके दिल और दिमाग़ में दाख़िल होकर सराहत करता है और हरदम ताज़ा रूह फूंकता रहता है। यह अमल रास्ते की मुश्किलें दूर करने के लिए या दूसरे अभ्यासियों की रूखी फींकी रुकावटों को आसान बना देने में बड़े काम की चीज़ है। लेकिन जिस साधक को यह ख़्याल ख़ुद -ब-ख़ुद पैदा हो जाय और सामने से न हटे और दूर करने पर भी अलहदा न हो तो वाक़ई इस क़दर जल्द रास्ता आसानी से तय हो जाता है कि अपने को और दूसरे देखने वालों को हालत की तब्दीली देखकर ताज्जुब होता है।

सबाल

एक साधक से यह इत्तला मिली है कि चलती हुई शक्ल का ध्यान निहायत आसानी से हो जाता है, बैठी हुई शक्ल का ज़रा ग़ौर से होता है और लेती हुई शक्ल का बहुत मुश्किल से होता है। इसका क्या भेद है ?

जबाब

इसका भेद साफ़ है -

१) चलती हुई शक्ल जीती जागती हुई कर्म-योगी के आदर्श और उसके रूप को दिखाती है।

२) बैठी हुई हालत यह इशारा करती है कि उस शक्ल में कर्म की शान की झलक तो है और कर्म करने को मुस्तैद है मगर कर्म करने को खड़ा नहीं हो पाया है। मुमकिन है कि आगे चलकर मुस्तैद और कर्मवीर हो जाये।

३) लेटी हुई शक्ल महज़ ठोस ज़िन्दगी की मूरत है जिसमें हरकत नहीं। यह क़ैफ़ियत तामसिक अवस्था है, यह सुषुप्ति, अन्धकार, अज्ञान की हालत है।

अब साधक की तरफ़ से इन हालातों को लीजिये, नतीज़ा निकालिये कि साधक ने तामसिक क़ैफ़ियत से तरक़्क़ी की है और बीच की हालत, यानी बैठी हुई हालत को पार करके आख़िरी हालत मुस्तैद और ज्ञान की हालत पर आना शुरू किया है। शाग़िल (अभ्यासी) की धारणा न अब न तामसिक है न राजसिक। चलती फिरती हुई चीज़ में ध्यान लग जाना धारणा की तेज़ मश्शाक़ी (अभ्यास) का सबूत है। मिसाल से इसे इस तरह समझना चाहिए कि चित्त की धारणा ठहरी हुई चीज़ पर भी न जम सके। लेकिन अभ्यास के अमल के सिलसिले में आहिस्ता -आहिस्ता घूमती हुई चीज़ पर ठहरने लग जावे और फिर आख़िरकार निहायत तेज़ी के साथ घूमते हुए चक्कर या हल्क़े पर जमने लगे और तवज्जह ऐसी ठहर जावे कि चलती हुई शक्ल पर आसानी से ध्यान जमने लगे तो अब फिर क्या नतीज़ा निकालना चाहिए ? चलती फिरती हुई शक्ल कर्मयोगी और कर्मवीर ज्ञानी की मूर्ति है और ज़िन्दा तस्बीर है जिस पर आसानी के साथ नज़र का ठहराव हो जाना इस बात की दलील है कि अभ्यासी की नज़र इस असर के क़बूल करने को तैयार है और गुनासिबत काफ़ी की इस्तेदाद को क़बूल कर लिया है। उपनिषद यही सदा देती है -- उठो, जागो, चलो और चले चलो, और कभी ठहरने का नाम न लो।

सबाल और जबाब

मेरे एक सत्संगी भाई ने एक से अनेक और अनेक से एक का शग़ल (अभ्यास) दरियाफ़्त किया है। दरअसल उनकी समझ में यह मुअम्मा (पहेली) नहीं आया । यह दो तरह के मराकबे हैं । एक साहब ने यह दरियाफ़्त किया है कि उनकी नादानिश्ता (अनजाने में) यह हालत मुख्तलिफ़ (विभिन्न) औक़ात में मुख्तलिफ़ सूरतों में हो चुकी है जिनकी मुझको याद है लेकिन वे भूल गए हैं या उन पर यह हालत साफ़ तौर पर ज़ाहिर नहीं हुई है । या यूँ कहना चाहिए कि तफ़सीली तौर पर (विस्तार से) नहीं खुली बल्कि अजमाली शक्ल में वाक़ात और वारदातों का ज़हूर हुआ है। और यह भी बहुत मुमकिन है कि जो अनुभव उनको हुए हैं वह तसव्वुफ़ (फ़क़ीरी, ब्रह्म विद्या) की इस्तलाहात (techniques) की अदम -वाक़फ़ियत (ना-जानकारी) अपनी तरफ उनको मन्सूब कर सकी। अगर इन दो इस्तलाहों की तफ़सील इल्मी की तरफ़ रजू न भी किया जाय तो रोज़ाना के तर्जेअमल से आगाह करके उनकी तसल्ली इस तरह की जाती है। किस मिसाल की तरफ़ ग़ौर कीजिये ।

सत्संग के वक़्त या जब हल्का होना है तो तवज्जो देने वाला एक जगह बैठ कर अपने सामने के बैठने वालों की तरफ़ मुतवज्जह (आकर्षित) होता है। अब एक शख़्स तवज्जह में कोई कोई ख़्याल वाहिद एक से ज़्यादा लोगों के मजमे में एक ही वक्त में और एक ही साथ दाख़िल करता है और क़बूल करने वालों की तादाद उस वाहिद (एक) ख़्याल को अलग अलग क़बूल करती है तो अब इस अमल दुतरफ़ा पर ग़ौर की निगाह से देखना चाहिए। एक वाहिद शख्स ने एक वाहिद ख़्याल को मुतआद्दिद (एक से अधिक) लोगों पर तक़सीम किया। और मुतआद्दिद और मुखतलिफ़ लोगों ने अपनी अपनी तवज्जह अलग अलग एक ख़ास नुख़्ते या मरकज़ की तरफ़ मायल की। एक वाहिद शख़्स एक से अनेक हो गया - यानी उसकी एक ही ज़ाती तवज्जह मुख़्तलिफ़ लोगों में पैवस्त हो गयी और दूसरी तरफ़ पच्चीस या हज़ार आदमियों की जुदा जुदा तवज्जह एक मरकज़ यानी केंद्र पर आकर जमा हो गयी और मिल-मिलाकर एक शक्ल को क़बूल कर लिया । यह भेद है संगठन का और यह अमल ख़ास और सबसे ज़्यादा अमल करने वाला है। लेकिन क्या कहें, अब दुनियाँ में क्या क्या नई नई ऊपरी तरकीबें इस्तेमाल कर रहे हैं यानी एक जगह कार्यवाई करने के बजाय अलहदा अलहदा कार्यवाई करते हैं। मुमकिन है इससे फ़ायदा हो जाय , मगर जो फ़ायदा असली है वह नहीं होगा। ख़ैर, हमारा असली मक़सद एक और अनेक के मसले की तरफ़ है न कि झगड़ों की तरफ़ ।

महात्मा गौतम बुद्ध ने जो पाँच मराक़बे (ध्यान) अपने शिष्यों को तालीम फ़रमाये हैं वह नीचे लिखता हूँ। उनको पढ़कर सत्संगी भाई ख़ालसा इन मराक़बों को समझ लें। मतलब तो नियत, फ़ेल (कर्म) और ख़्यालात में अपनी और दुनियाँ की भलाई के लिए, न कि कोई ख़ास सूरत मराक़बे के जरिये ऐसी क़ायम करना है जो कि सिर्फ़ बातचीत की हद तक ही क़ायम रहे और वैसी रहनी न बने। बाज़ अभ्यासियों को ऐसे मराक़बों से सिर्फ़ एक हालत और क़ैफ़ियत पैदा हो जाती है जो चन्द दिन के सिर्फ़ एक ज़ौकी क़ैफ़ियत पैदा हो जाती है और ज़ाहिरी अमली पहलू कभी अख्त्यार नहीं किया जाता। मसलन हर ज़र्रे में उसी का ज़लबा नज़र आता है या अपने आपको सब ज़र्रात और मख़लूक़ यहाँ तक कि छोटे से छोटे ज़र्रे में देखता है । बल्कि तमाम मख़लूक़ को अपने में देखता है। वग़ैरा, वग़ैरा। लेकिन ये सब बातें तस्सलीबख़्श नहीं हैं तावक़्ते कि उस हालत के मुताबिक़, जाने या अनजाने, इरादे या बिला इरादे, काम न होने लग जाय। मसलन, आप सड़क से गुज़र रहे हैं और एक चार बरस का बच्चा सर्दी की वजह से काँप रहा है और उसके पास कपड़ा नहीं है इसलिए वह रो रहा है। आपके पास दो रूपये भी जेब में मौज़ूद हैं और थोड़ी देर में आप उन रुपयों से दिवाली के दिन बाज़ार से एक तस्बीर खरीदना चाहते हैं । अब इस मुक़ाम पर अगर आपकी मसनूई या ज़ौक़ी क़ैफ़ियत इज़ाज़त न दे कि बच्चे को कपड़ा खरीद कर दिया जाय और तस्बीर को खरीद ही लिया जावे तो मेरे ख़्याल में मराक़बे से या अभ्यास से या किताबी इल्म से हासिल की हुई क़ैफ़ियत कोई हस्ती नहीं रखती। यह एक मिसाल है। इस क़िस्म की हज़ारों मिसालें मौज़ूद हैं। खुलासा और नतीज़ा यह निकला कि इल्म, ज्ञान, और क़ैफ़ियत और हालत से ऐसी आदत बन जानी चाहिए कि हर कर्म बिला इरादे उसी आदत के मुताबिक़ होने लग जावे।

ग़ैर क़ौमों पर आजकल यह इलज़ाम है कि वह बिलकुल रूहानियत से ख़ाली हैं। लेकिन मैं देखता हूँ कि जो बात उनको मालूम हो गयी है उसको वह कहते नहीं हैं। न उनकी इस्तलाहात की शरह (व्याख्या) करने, न उनको साबित करने को लेक्चर देते हैं, बल्कि उनके कर्म, आदत उसी के मुताबिक़ हो गए हैं। फ़तेहगढ़ के मिशन शफ़ाख़ाने में एक मिस साहिबा डाक्टर थीं। उन्होंने अपने दिल और जान को दूसरों की भलाई के लिए सरासर वक़्फ़ (न्योछावर) कर दिया था। तमाम दिन और रात जिस्म से और दिल से जनता की ख़िदमत किया करती थीं और यह सब ख़िदमात बिला मुआवज़े और बिला गरज़ थी। मुमकिन है कि निष्काम कर्म इसी का नाम हो। लोग कहते हैं कि इसकी तह में कोई गरज़ (स्वार्थ) शामिल थी। अगर कोई गरज़ भी हो तो उनकी गरज़ उनके दिल में होगी। ख़िदमत तो तुम्हारी बिला मुआवज़े की जाती रही है। क्या सरकारी शफ़ाख़ानों में नौकरी और तनख्वाह की गरज़ नहीं है ? तनख्वाह भी मिलती है, हर मरीज़ अपनी हैसियत के मुताबिक ख़िदमत भी करता है, खुशामद भी करता है और हम एक ही मुल्क के रहने वाले भी हैं, लेकिन जो हमदर्दी (या

बेरुखी ?) के नज़्ज़ारे मुल्क के शफ़ाख़ानों में दिखलाई देते हैं वह आपका दिल जानता है। इससे आप इल्म और अमल की असलियत की जांच कर लें। मुमकिन है कि निष्काम कर्म इसी का नाम हो। लोग कहते हैं कि इसकी तह में कोई गरज़ (स्वार्थ) शामिल थी। अगर कोई गरज़ भी हो तो उनकी गरज़ उनके दिल में होगी। ख़िदमत तो तुम्हारी बिला मुआवज़े की जाती रही है। क्या सरकारी शफ़ाख़ानों में नौकरी और तनख्वाह की गरज़ नहीं है ? तनख्वाह भी मिलती है, हर मरीज़ अपनी हैसियत के मुताबिक ख़िदमत भी करता है, खुशामद भी करता है और हम एक ही मुल्क के रहने वाले भी हैं, लेकिन जो हमदर्दी (या बेरुखी ?) के नज़्ज़ारे मुल्क के शफ़ाख़ानों में दिखलाई देते हैं वह आपका दिल जानता है। इससे आप इल्म और अमल की असलियत की जांच कर लें।

पाँच मराक़बे

अब आप महात्मा बुद्ध के पाँच मराक़बों (अभ्यास) और उनके फतूहात (अनुभव कर लेना) की तरफ गौर कीजिये। बुद्ध भगवान का कौल है - जो शख्स ख़ुदपरस्ती में फंसा रहता है और मराकबे में मशगूल नहीं होता और दुनियाँ के असल मंशा को भूल गया है।

(१) पहला मराक़बा - मोहब्बत और प्रेम का ध्यान: इस ध्यान में अभ्यासी अपने दिल को इस तरह साधता है कि मैं तमाम मख़लूक़ात (जीव मात्र) की बहबूदी (भलाई) यहां तक कि अपने दुश्मनों की भी भलाई चाहता हूँ। इसको सर्व-मैत्री कहते हैं। इसमें यह प्रार्थना की जाती है कि ईश्वर सबका भला करें।

(२) दूसरा मराक़बा - रहम, करुणा या दया का ध्यान : इसमें यह ख्याल किया जाता है कि तमाम मख़लूक़ात (जीव-मात्र) मुसीबत में हैं और अपनी ख़्याली ताक़त (इच्छा-शक्ति) के ज़रिये से उनके रंज और ग़म की तस्बीर अपने दिल के सफ़े पर खेंची जाती है। यह इसलिए कि हमारी रूह को मख़लूफ़ की हालते-ज़ात पर बहुत कुछ रहम और तरस आये और कुछ मदद मांगने की मंशा पैदा हो।

(३) तीसरा मराकबा - ख़ुशी का ध्यान : इसमें हम दूसरों की भलाई का ध्यान करते हैं और उनकी ख़ुशी में तहेदिल से शामिल होते हैं और खुद भी ख़ुशी मनाते हैं।

(४) चौथा मराक़बा - कसाफ़त , नापाकी (अपवित्रता) का ध्यान : इसमें हम बुराई के बुरे नतीज़े और गुनाह (पाप) और बीमारियों के अन्ज़ामों (नतीज़ों) पर गौर करते हैं। इन नापाक हरकतों (पाप या अपवित्र कर्मों) से हासिल ख़ुशी अक्सर आरज़ी (थोड़ी देर की) होती है और उसके नतीज़े बहुत खतरनाक होते हैं।

(५) पाँचवाँ मराक़बा - शुकराना अदा करने का ध्यान : इसमें हम मौहब्बत और नफ़रत, जुल्म और या ज़बरदस्ती, दौलत और कंगाली, किसी चीज़ की परवाह नहीं करते और अपनी हालत पर शाकिर(कृतज्ञ) होकर, हर हालत में ईश्वर का शुक्रिया अदा करते हैं।

ऊपर लिखे हुए मराकबों में मसरूफ (तल्लीन) होकर बुद्ध भगवान के चेलों ने इल्म ब्रह्म विद्या हासिल की। दरअसल इनमें हक़ीक़ी (सत्य) की तलाश है। अब सबाल यह रह जाता है कि अमल किस तरह किया जाए?। मालूम होना चाहिए कि मराकबे की निस्बत जनता की वाक़फ़ियत के लिए तफ़सील का पता देना तो नामुमकिन है लेकिन अमल और शग़ल (अभ्यास) के वास्ते अधिकार, क़ुव्वते -बर्दाश्त (सहन-शक्ति) और क़ुव्वते क़बूल (ग्रहण-शक्ति) वग़ैरा की ज़रूरत देखी जाती है क्योंकि हर शख्स एक ही तरह की क़ाबलियत नहीं रखता और हर अभ्यासी की एक ही तरह की तालीम नहीं होती। मुख़्तलिफ़ तबीयतों के अभ्यासी होते हैं। हरेक की क़ाबलियत की जांच -पड़ताल करके उनके शौक का मुआफ़िक (रूचि के अनुसार) तालीम का दर्ज़ा क़ायम किया जा सकता है।

अगर मराकबों के अमल की ख़ास तरकीब और इज़ाज़त आम बातिनी क़ैफ़ियत के उसूलों पर दे दी जाये तो मेरा तज़ुर्बा यह है कि बजाये फायदे के नुकसान ज़्यादा होगा और वक्त बेकार जाएगा। मेरा मतलब ज़ाहिर न करने में तंगदिली का नहीं है बल्कि असूल का सही मंशा लेकर चलना ज़रूरी है। अगर आँख बनाने में आपरेशन के लिए उस वक्त का इंतज़ार न किया जावे जो उसके पकने और तैयार होने में लगता है और आपरेशन कर दिया जाए तो क्या यह आपरेशन क़ामयाब कहलायेगा ? बल्कि मेरे ख्याल में तमाम उम्र के लिए मरीज़ को मायूस होकर बैठा रहना पड़ेगा।

आंतरिक अभ्यास करने वाले हल्कों में भाग लेने वाले जानते हैं कि गुरु लोग जब किसी मराकबे का ख़ास फ़ायदा और असर अपने किसी दोस्त को पहुँचाना चाहते हैं तो उसके लिए एक ख़ास इंतज़ाम करते हैं और इस ख़ास इंतज़ाम के करने में अलावा ज़ाहिर ज़रूरी बातों के एक ख़ास रूहानी हिम्मत और फ़ैज़ का होना ज़रूरी होता है। महज़ इकतरफ़ा हिम्मत बाज़ वक्त बेफ़ायदा ,बल्कि ख़तरनाक साबित होती है। इसलिए हरेक से, ख़ासकर अपने हल्क़े के भाइयों से, यह नसीहत करने के क़ाबिल बात है कि किसी ख़ास

मराकबे या किसी ख़ास कैफ़ियत के असर को अपने अंदर पैदा करना हो तो ख़ास इंतज़ाम के साथ तवज्जह और हिम्मत को इस्तेमाल में लाएं। परमात्मा चाहेगा, फायदा होगा।

---

(२१)

फ़तेहगढ़, १९ अप्रेल, १९२९

आपका ख़त मिला, परमात्मा आपको सत की तरफ़ जाने की प्रेरणा करें। मैं बहुत ख़ुश हूँगा जब आप मिलेंगे। मेस्मेरेज़म मैं बिलकुल नहीं जानता और यह मार्ग अंधकार की तरफ़ ले जाने वाला है। अगर महज़ मेस्मेरेज़म की आपको ख़्वाहिश है , तो आपको तक़लीफ़ उठाने की ज़रूरत नहीं। मैं तो केवल नाम आधार हूँ और ईश्वर की तरफ़ निगाह किये हुए हूँ। इसके सिवा और कुछ नहीं जानता। अगर आत्मा सम्बन्धी ख़्वाहिश है, तो यह फ़क़ीर हर वक्त मुन्तज़िर (प्रतीक्षा में) है।

---

(२२)

आप लिखते हैं कि जबाब के न पहुँचने से दिल में तफ़क्कुर (चिन्ता) हुआ। जबाब हरूफ़ों और लफ़्ज़ों की शक्लों में कागज़ पर लिखा हुआ मिलता है, उससे एक क़िस्म की तस्सली हो जाती है। इससे यह साबित होता है कि प्रकृति और दुनियावी पदार्थों से भी शांति और सुख मिला करता है चाहे वह आरज़ी और थोड़ी देर ही का क्यों न हो।

असल बात यह है कि जो बात आप और हर शख़्स को दरकार है वह सबके अन्दर मौज़ूद है, सिर्फ़ ख़्याल की हरकत मिलने की ज़रूरत होती है। और यह ख़्याल की हरकत मिलने का गुर सत्संग में है। सत्संग हमजिन्स का होना चाहिए। हमजिन्स इन्सान को कहते हैं। इन्सान को इन्सान-कामिल का सत्संग जब मिलता है, तब ख़्याल को हरकत। तक़बियत, शांति प्राप्त होती है। और इसी क़दर जिज्ञासु की ज़रूरत पूरा करने को काफ़ी है। इन्सान-कामिल शरीर और आत्मा दोनों की मिलावट का पुतला है। और इसी तरह इन्सान और नाक़िस इन्सान भी शरीर और आत्मा दोनों से मिलकर बना है। आत्मा हर जगह फैली हुई है और ग़ैर-महदूद है।

इस आत्मा को फ़ायदा और नुक़सान दूर और नज़दीक से भी पहुँचता है, लेकिन चूँकि शरीर महदूद और स्थूल है इसको नज़दीक से ही नुक़सान और फ़ायदा पहुँचता है। दूर से ऐसा अच्छा नहीं पहुँचता जैसा कि नज़दीक से। मतलब यह है कि शरीर और आत्मा का बड़ा घना सम्बन्ध है। इसलिए दोनों के लिए पहले पहले

नज़दीक और आमने सामने सत्संग की ज़रूरत पड़ती है। बिला इसके शुरू में जैसा फ़ायदा होना चाहिए नहीं पहुँचता है। अगर किसी शख़्स में ऐसी क़ाबलियत मौज़ूद है कि वह दूर से ख़्याल के ज़रिये फ़ायदा और हिदायत हासिल कर सकता है, तो फिर उसको हिदायत हासिल करने की, और फिर किसी ख़ास शख़्स से हिदायत की ज़्यादा ज़रूरत ही नहीं है। वह ख़ुद क़ाबिल है। क़ाबिल को क्यों तलाश होना चाहिए। अगर ऐसी क़ाबलियत मौज़ूद नहीं है तो नज़दीक आने की ज़रूरत है, बिला इसके काम नहीं चल सकता है।

आप ख़तों के ज़रिये से ज़बानी और तहरीरी हिदायत चाहते हैं, यह हो सकती है और होती है। लेकिन वह उसी दर्ज़े की है जो उसकी हैसियत है। जो बात होना चाहिए वह नहीं हो सकती। इसलिए कोशिश करके एक मर्तबा मिल जाइये या मुझको जब मौक़ा होगा मिलूँगा।

---

(२३)

फ़तेहगढ़ - २३ अगस्त १९३०

ख़त मौसूल हुआ। हालात मालूम हुए। यहाँ सब ख़ैरियत है। मैं बमुक़ाम सिकन्द्राबाद, जिला बुलन्दशहर, पंद्रह- सोलह रोज़ तक रहा और लड़की का इलाज कराता रहा। लेकिन कुछ फ़ायदा नहीं हुआ और आख़िरकार वह सत-लोक को सिधार गयी। पारसाल शादी की थी। अमानत जिसकी थी वह वापस हो गयी।

------- का ख़त अक्सर आता है और इस ग़रीब को बहुत मौहब्बत है। मैं भी बहुत खुश हूँ। मैं तो हमेशा ग़रीबों से मौहब्बत रखता हूँ। और वजह यह है कि यह लोग मुझको चाहते हैं और रूपये वाले अपने रूपये के नशे में मस्त हैं। मेरी समझ में असली लगन इस शख़्स को लगी है।

---

(२४)

फ़तेहगढ़, २५ अक्टूबर १९२९

ईश्वर की तरफ़ से जिस शख़्स को जो प्रेरणा होती है, वही वह करने लगता है। किसी मख़लूक़ को इसमें कुछ अख्त्यार नहीं है। इसलिए वह जब वक़्त आयेगा और ईश्वर का हुक्म होगा, करने लगेंगे।

---

(२५)

फ़तेहगढ़,

३१ दिसम्बर १९३०

तरक़्क़ी होने का हाल मालूम होकर निहायत ख़ुशी हुई। मुझे तो उसकी ज़ात से इससे भी ज़्यादा तरक़्क़ी की उम्मीद हैं ।

जो ख़ुद बिगड़े हुए हैं और दूसरों का भी सत्यानाश करते हैं ईश्वर उनको हिदायत देवें और उन पर रहम फ़रमावें।

सवाई माधोपुर से एक ख़त आज मुझको जनाब अब्दुलगनी साहब का मिला है। तबियत को निहायत ख़ुशी हुई। आप बड़े ख़ानदान से ताल्लुक़ रखते हैं और पीर-ज़ादह हैं। आपका हक़ तो मौरूसी है। यह ख़ाकसार तो तुफ़ैलियों (आशीर्वाद पाने वालों) में है।भला जो ख़िदमत मुझसे उनकी निस्बत हो सके उसका मुझे बड़ा फ़क्र होगा। मैं उनके ख़त का जबाब कल भेजूंगा।

---

(२६)

फ़तेहगढ़,

४ फरवरी १९३१।

भाई ! दो तरह की ख्वाहिशें अहल-गरज़ को होती है। एक तो यह है कि असल मुद्दआ तो उनका ईश्वर को पाना और अपने आपको उनका सच्चा सेवक बनाना होता है। और उस मक़सद को लेकर वह साधु महात्माओं से मिलने की ख्वाहिशें करते हैं और उनके पास जाते हैं और उनके तुफ़ैल में उनकी दुनियान्वी ख्वाहिशें भी मौक़े मौक़े से ईश्वर भगवान पूरी करते जाते हैं। लेकिन अगर ईश्वर की भक्ति और तलाश के साथ साथ उनकी दुनियां की ख़्वाहिशें पूरी नहीं होतीं तो उनको कुछ रंज नहीं होता और न कुछ उनको परवाह इस बात की होती है कि उनकी ख़्वाहिश उनके दिल के मुआफ़िक पूरी नहीं हुई क्योंकि उनका असली मक़सद तो ईश्वर ही था न कि दुनियाँ की लज़्ज़तें। ऐसे आदमी हज़ारों में दो एक होते हैं लेकिन दूसरी तरह के लोग बहुत तादाद में मिलते हैं, वह यह है कि ईश्वर की भक्ति अपने दुनियाँ के मतलब के वास्ते करते हैं। असली ग़रज़ उनकी दुनियाँ होती है। लेकिन रास्ते में साधु -महात्माओं के सत्संग और उपदेश से उनका संस्कार जाग पड़ता है तो ईश्वर प्राप्ति हो

जाती है और दुनियाँ के मतलब कभी तो उनके ख़्याल के मुताबिक़ पूरे हो जाते हैं और कभी नहीं। अगर दुनियाँ का मतलब उनका पूरा नहीं होता तो वह निराश होकर बद-अक़ीदा हो जाते हैं और साधु-महात्माओं में उनकी कोई श्रद्धा बाक़ी नहीं रहती और आख़िरकार न दुनियाँ उनको मिलती है और न ईश्वर का रास्ता।

अफ़सोस है कि इस क़िस्म के लोग हर तरफ़ नज़र आते हैं और मालिक का रास्ता दरियाफ़्त करने वाला कोई नहीं मिलता।

जो साहबान कि मेरे मुन्तज़िर हों उनके वास्ते ऐसा इन्तज़ाम कर दीजिये कि एक जगह पर जहाँ तक हो सके मुझसे मिल लें। और आगे एक जगह न हो सके जगह आप तज़बीज़ कर लीजिये। लेकिन बिला आपके रुख़सत के यह काम बहुत मुश्क़िल होगा। जब आपको मौक़ा हो तब तहरीर करके मुझको लिख दीजिये।

---

(२७)

बुलन्दशहर,

२३ मई १९३१

मेरी हालत बीमारी और कमज़ोरी की है। मैं बिलफेल आ नहीं सकता और उन लोगों की तौफ़ीक़ (स्थिति) आने की नहीं है। क्या किया जाय ? ज़बानी बातों से तो कुछ काम नहीं चल सकता। इन्सान बिला क़ुरबानी किये क्या हासिल कर सकता है ?

---

(२८)

ख़त आमदा (प्राप्त पत्र)

फतेहगढ़

२ जून १९३१

श्रीमान, सतगुरु, प्राण-आधार , दया सिंधु , रामचन्द्र जी सहाय की ख़िदमत में नाचीज़, खाकसार , गुनाहगार बन्दे की दण्डवत मालूम हो और क़दम-बोसी मालूम हो।

हुज़ूर का नाबाज़िश -नामा , बाद जलसा सत्संग तारीख़ २८ मई सं ३१ को बाद काफ़ी बेक़रारी के नसीब हुआ मगर जिस वजह से बेक़रारी है वह रफा न हुई क्योंकि हुज़ूर की तबियत नासाज़ (ठीक नहीं) है।

हे स्वामी ! हम सेवकों की तो तो आप फौरन सुधि लेते हैं और उनका सब दुःख दूर करते हैं मगर हुज़ूर की तबियत नासाज़ है। इसका ख़ाकसार को बहुत दुःख है। इसलिए हे करुणा सागर ! कृपा करके इस चरण-सेवक को इतनी शक्ति अता फ़रमावें कि सिर्फ हुज़ूर वालशाह की तक़लीफ़ों को अपने शरीर में ले सकूँ। और बहुत हर्ष के साथ उनको अपने शरीर में जगह दूँ और भोगूं।

हे स्वामी ! मुन्दर्जा ज़ैल हालात अर्ज़ करना ख़ाकसार मुनासिब नहीं ख्याल करता था मगर मज़बूरन इस वजह से अर्ज़ की जाती है कि ख़ाक़सार उसमें नाकामयाब रहा, सो क्यों ? इसकी सेहत क़रमा दी जावे ताकि आइन्दा कामयाब होकर अपने आपको खुशनसीब समझूँ।

बन्दा नवाज़ ! वह अर्ज़ यह है कि हुज़ूर ने फतेहगढ़ में फ़रमाया था कि जिस वक़्त हमारी तबियत ठीक न हो और बीमार हों, तो ध्यान में आकर हमारे पास नहीं बैठ जाना चाहिए क्योंकि उस वक़्त बजाय फ़ायदे के नुक़सान हो जाता है और हमारी बीमारी उसके शरीर में चली जाती है।

यह बात सुनकर खाकसार को बड़ी ख़ुशी हुई थी, गोया कंगाल को खज़ाना मिल गया और यह उम्मीद क़वी हो गयी कि अब हुज़ूरवाला बीमार न रहेंगे और दोनों वक़्त इन्हीं ख़्यालात को लेकर बैठता रहा कि सतगुरु की तकलीफ़ें इस शरीर में आ जावें। मगर अफ़सोस, कि ऐसा नहीं हुआ। शायद इसी वजह से नहीं हुआ कि मैं नालायक़ हूँ। सच्चा प्रेम जैसा होना चाहिए नहीं रखता।

अगर उसमें कमी है तो हे स्वामी ! उसके देने वाले आप ही हैं। कृपा करके मुन्दर्जा अव्वल शक्ति अता फ़रमाई जावे। इसमें ताम्मुल न फ़रमायें क्योंकि यह शरीर भी हुज़ूर का ही है। जितना कुछ है सब आप ही का है। हुज़ूर के चरणों में सच्चा प्रेम अता फ़रमावें। इस दीन की आरज़ू है।

हुज़ूर के प्रताप से यहां सब आनन्द है।

---

(२९)

फ़तेहगढ़

३० जून १९३९

आपका हमदर्दी से भरा हुआ खत मिला, तक़वियत हुई।

(३०)

फ़तेहगढ़

२ फरवरी १९२८

ज़रिये अज़ीज़ ---------- जी मुरसिला (भेजा हुआ पत्र) पहुंच गया। आपका दान बहुत अच्छी जगह भेज दिया जाता है। मेरे गुरु महाराज के साहबज़ादे अब तक नौकरी से अलहदा थे लिहाज़ा उनको पहुँचाता रहा। अब उनकी साहबज़ादी साहबा को कुछ ज़रूरत है लिहाज़ा वहाँ भेजूंगा और भेजा गया है।

ईश्वर आपको माली इमदाद फ़रमाये और बाइज़्ज़त व बाआबरू रखे। अपने हालात से मुत्तला फ़रमाते (सूचित करते) रहिये।

---

(३१)

फ़तेहगढ़

१५ जुलाई १९२८

ईश्वर पर भरोसा रखकर प्रार्थना कीजिये। आजकल बहुत नाज़ूक ज़माना है। अगर कुछ असलियत आपकी जानिब है तो इन्साफ होगा। आप खामोश होकर और किसी की ज़बानी शिक़ायत के हरूफ न निकालकर ईश्वर पर रहिये , वह मदद करेगा। बच्चे की अलालत (रोग) और उसके मुआलिज (वैद्य) की निस्बत आपको ज़रिये कार्ड लिख चुका हूँ।

मैं ख़्याल करता हूँ कि दवा वग़ैरा और तीमारदारी में कुछ बेउनवानी (बेक़ायदगी) ज़रूर हो जाती है इसका इल्म नहीं होता है

(३२)

फतेहगढ़ सत्संग

५ अक्टूबर १९२८

मुफ़स्सील हालत मालूम हुए। जो अपने लिखा है वह ठीक है। कोशिस भी ज़रूरी है और परमात्मा भी मदद करेगा। आप कोशिश फ़रमाइए, ईश्वर मालिक है। मैं टब-बाथ ले रहा हूँ। फ़ायदा खूब है और उम्मीद है कि और भी फ़ायदा होगा।

---

(३३)

फ़तेहगढ़

१४ सितम्बर १९२८

आपके मामलात में मेरी राय यह है की जो कुछ होगा वह मौज़ के सहारे पर छोड़ दीजिये। हमारे और आपके मामलात को ईश्वर ही बेहतर जनता है। जो ख़ुद-ब-ख़ुद हो जावे वह ही मसलहत होगा। मैं ईश्वर से प्रार्थना करूँगा कि जो बेहतर सूरत आपके हक़ में हो उसमें मदद फ़रमावें। लड़की को भाषा की तालीम ख़ूब

है और संस्कृत में स्वयं शिक्षक पहली ज़िल्द पण्डित सातवलेकर जी की पढ़वा दी है। इसके बाद कोई पण्डित दस्तयाव (मिलना) न हो सका और बंदोबस्त न कर सका। लेकिन वह लड़की निहायत तेज़फहम (तीव्र बुद्धि) और ज़हीन (बुद्धिमान) ही। पढ़ने का अज़हद (अत्यंत) शौक है। अगर अब भी पढ़ाई जावे तो ख़ूब पढ़े। तन्दुरुदती और शक्ल आपके यहां से देख चुकी है।

बेहतर होगा कि अगर और मामलात तैं हो जावें तो फिर वह ख़ुद देख लें। मैं पसन्द करता हूँ कि पहले की सफ़ाई अच्छी है। बाद को लड़की को तक़लीफ़ मिले तो वह अच्छा नहीं।

आजकल एंट्रेंस पास वालों की जो ज़बान हिंदी है उससे वह कहीं ज़्यादा रब्त रखती है और सैकड़ों मैगज़ीन और किताबें देख चुकी है। ||||||||||||||||| ने भी ग़ालिबन मुरादाबाद से ख़त भेजा होगा। बाक़ी सब ख़ैरियत है। बरख़ुरदार बृजमोहन की शादी फ़तेहगढ़ में ३० अप्रैल या १० मई को क़रार पाई है।

(३४)

फ़तेहगढ़

५ जुलाई १९२८

हालत मालूम हुए। हमेशा एक सा ज़माना नहीं होता। कभी यह और कभी वह। जो ख़ुदा चाहेगा वह होगा। इन्सान मज़बूर है। अलबत्ता दुआ करनी चाहिए। नतीज़ा उसके अख़्त्यार में है। जब तक कि असल मुतहर्रिक (छेड़ना वाला), जिनकी कि कार्यवाही है, आपके सामने से रफ़ा न हो उस वक्त तक शायद उनका असर रहे। जहाँ रफ़ा हुए फिर चन्द दिन के बाद आयी-गयी हो जावेगी। अलबत्ता कहीं इंदराज़ इस मामले का न होना चाहिए। मुमकिन है कि ख़ुफ़िया तहरीर हो गयी हो, पर हाल हमेशा ऐसा नहीं रहेगा।

अपने बचाव की सूरत में यह इलज़ाम आप पर क़ायम किया गया है। क्या कहें आजकल ऐसी ही शरारतें ज़माने के हर फ़िरक़े और सोसाइटी से नज़र आ रही हैं।

मुमकिन है कि कुछ पोशीदा फ़ायदा हो और ज़ाहिर में नुक़सान मालूम होता हो। जो कुछ कि ईश्वर की तरफ़ से होता है वह अच्छा ही होता है। ज़ाहिर तो यह है कि ||||||||||||||के जल्से में ख़राबी मल्लों होती है लेकिन मसलहत ईश्वर की कुछ और होगी।

---

(३५)

फ़तेहगढ़

हमेशा वक्त एकसां नहीं रहता। अगर आप हमेशा रिज़र्व (reserve) रहते हैं तो उसका यही नतीज़ा होता है। साधारण रिज़र्व (reserve) रहना बुरा नहीं। ऐसी हालत से लोग ज़्यादा ख़ुश नहीं होते। लेकिन उसमें ज़रा सा भी अहंकार और ख़ुदी शामिल रहती है तो लोग ज़रूर महसूस करते हैं और नफ़रत पैदा हो जाती है। अब क्या मालूम आपकी गोशा-नशीनी (अकेले रहना) किस क़िस्म की रही होगी। ख़ैर, यह अम्र अब बहस तलब नहीं है।

होता वह है जो कुछ होना है। हाँ, अगर आप मिलते रहे होते तो हिम्मत दूसरों के पास जाने की होती। ईश्वर पर भरोसा कीजिये और प्रार्थना करते रहिये और जहाँ कहीं मौक़ा बे-लाग सिफ़ारिश का हो वहाँ कोशिश कर लीजिये। दौरे में साथ न ले जाना आप शरम की बात ख़्याल करते होंगे। मैं तो कुछ इसमें शरम नहीं समझता। जहाँ तैनाती हो काम करना चाहिए।

हमेशा एक सा वक्त होना मुश्क़िल है। मेरी राय यह है कि ज़्यादा कुरेद आप न करें। ख़ामोशी के साथ अपने बचाव की फ़िक्र करते रहें। ज़्यादा क्या लिखूँ , मैं भी ईश्वर से प्रार्थना करूंगा।

---

(३६)

फ़तेहगढ़

तुम्हारा ख़त आया, बहुत ख़ुशी हुई। मैं हमेशा दुआ करता हूँ कि तुम्हारी तन्दुरुस्ती अच्छी रहे और परमात्मा में तुम्हारी प्रीति हो। यह आदमी का स्वभाव है कि कभी उसकी हालत किसी तरह की होती है और कभी दूसरी तरह की होती है।

इसकी चिन्ता नहीं करना चाहिए। दोनों हालतें उसकी हैं। इसलिए हर हालत में उसकी याद रखनी चाहिए, किसी हालत का असर न होगा। अगर आदमी याद से ख़ाली होगा तो अच्छा या बुरा असर होगा।

---

(३७)

फ़तेहगढ़

१७ अप्रैल, १९१८

ईश्वर का करम चाहिए। वह हमेशा अपना रहम करता है। जो कुछ हुआ वह सब उसकी मसलहत है। निहायत शांति से हर मामले को बरदाश्त करना चाहिए। मैं प्रार्थना करता हूँ कि तुम्हारे सब काम दुरुस्त हों और ईश्वर का भक्ति-भाव तुम में रोज़ ज़्यादा रहे। अपनी हालात मुताला (देखना, समझना) करते रहिये।

(३८)

फ़तेहगढ़

२८ सितम्बर १९१७

आजकल लोग निहायत कम आते जाते हैं, बल्कि बिलकुल बन्द से हैं। यह सोरिश (झगड़ा) के ज़माने और इन्क़लाब का असर है कि दिल पर पड़ रहा है।

---

(३९)

फ़तेहगढ़

१० नवम्बर १९१६

कार्ड पहुँचा और फ़ौरन ही जबाब लिख रहा हूँ। यह ख़ूब तरक़ीब तुमने सोची, फ़ौरन जबाब देने पर मैं मज़बूर हो गया वरना मैं सख़्त काहिल हूँ और एक क़िस्म का इख़लाक़ी गुनाह करता रहता हूँ। सब लोग अच्छी तरह पर हैं।

---

(४०)

फ़तेहगढ़

जब ईश्वर चाहेगा तब वैसा होगा। अब जो हालत है वह ग़नीमत है। उसी का ध्यान रखो और उसी के प्रेम में मगन रहो।

(४१)

फ़तेहगढ़

२८ मार्च १९१८

कार्ड पहुँचा। मैने लड़कों से कह दिया था कि रसीद भेज देना। उन्होंने नहीं भेजी। मिठाई जो भेजी थी वह निहायत अच्छी थी और ख़ास कर उसमें प्रेम की शीरानी (मिठास) ज़्यादा थी।

---

(४२)

फ़तेहगढ़

१० अप्रैल १९२७

दुआ करता हूँ, ईश्वर कृपा करें कि आपके मामलात साफ़ हो जावें। मेरी नौकरी का टाइम इस वक्त तक तो ऐसा रहा है कि अफ़सरान कुछ करते रहें और मुझसे कुछ ताल्लुक़ न हो तो दरम्यान में कूदने से क्या ग़रज़। अपना काम किया और बस। लिहाज़ा अब मेरी राय है कि अगर क़सूर भी न हो तो पीछा छुड़ाने के लिए माफ़ी मांग लेना चाहिए। इसमें कोई बेइज़्ज़ती न होगी बशर्ते कि माफ़ी मांगने में कोई ख़ास मदद जुर्म के सबूत में न पैदा हो। चूँकि मुझे पूरी वाक़फ़ियत (जानकारी) मामले से नहीं है और न उस वाक़ये की नज़ाक़त से वाक़िफ़ हूँ इसलिए उत्तम राय तो दे नहीं सकता, अलबत्ता सुलहकुन (ठीक) मसले का मुझको बारहा (बार-बार) तजुरबा है।

---

(४३)

फ़तेहगढ़

२ मई १९२७

रोशनी का न मालूम होना कोई नुक़्स नहीं। ख़्यालात कभी मुन्तशिर (परेशान) होते हैं कभी साकिन (स्थिर) होते हैं। यह कोई ख़ास बात नहीं है। रास्ता चलने में सब तरह के ख़्यालात वारिद होते हैं (आते हैं) अभी तालीम ही क्या हुई है, एक मर्तबा ज़रा देर की सुहबत (संगत) हो गयी थी।

(४४)

फ़तेहगढ़

१६ सितम्बर १९२७

रूहजदीदुलवारिद (नवजात शिशु) की उम्र में ईश्वर बरक़त करें। बुज़ुर्गान जो हमारे साथ हैं वह सब फ़िक्र रखते हैं, रफ़्ता-रफ़्ता इस्लाह इख़लाक़ (सभ्यता का सुधार) की हो रहेंगी। सब बातें ईश्वर के हाथ में हैं। आप फ़िक्र क्यों करें। वाक़ी सब ख़ैरियत है।

---

(४५)

फ़तेहगढ़

१० अप्रैल १९२७

अफ़सोस हुआ लेकिन यही होना था, मेरा दिल भी पहले से कुछ ऐसी ही गवाही देता था, क्योंकि कार्यवाई एकतरफ़ा और साज़िशी थी। तबादिले का होना अच्छा है, अमालनामा (कर्म-पत्र) बिला वजह ख़राब होता है। अगर मुअत्तिली के अय्याम (दिन) का फ़ैसला ठीक नहीं हुआ यानी सर्विस ब्रेक का ख़ौफ़ हुआ तो यह सज़ा बहुत ज़्यादा है, इसकी अपील ज़रूर करनी होगी। मैं ग़ालिबन २,३ मई तक मय बच्चों के उरई जाऊँगा लेकिन यह मामलात ईश्वर के अख़्त्यार में हैं। आजकल घर पर तनहा हूँ। बाक़ी ख़ैरियत है।

---

(४६)

फ़तेहगढ़

१० जनवरी १९२८

अभ्यास में तरह-तरह की सूरतों को देखना इस वजह से अक्सर हो जाता है कि तवज्जह का रुख़ अन्दर की तरफ़ उस हद्द तक जाता है जहाँ और जिसके तवक़े में पित्रों का या रूहों का बास है। चूँकि तवज़्जह के ठहराव में काफ़ी सुकून वहाँ नहीं होता जिससे कि नज़र आने वाली पूरी सूरत अपनी तवज़्जह के साथ सामने आ जावे इसलिए अधूरी चीज़ें नज़र आती हैं।

दूसरा सबब यह है कि क़ुब्बते मुतख़यय्ला (विचार शक्ति) के रूबरू (सामने) वह सूरतें आलमे-ख्वाब यानी स्वप्न के वक़्त में आती हैं जिनको कि देखकर क़ुब्बते हाफ़िज़ा (स्मरण शक्ति) ने महफ़ूज़ कर रखा है। अभ्यास के वक़्त तवज़्जह जाग्रत अवस्था से निकलकर स्वप्न अवस्था की तरफ़ मायल (झुकना) हो जाती हैं। तवज़्जह का ठहराव एक नुक़्ते पर न होने के बायस सूरतें तेज़ी से भागती हुई नज़र पड़ती हैं और अधूरी दिखलाई पड़ती हैं।

तीसरी वजह यह है कि उस तबक़े में जहाँ नई शकल हुबाबी (हल्की) या ख़्याली अख़्त्यार करती हैं वहाँ रूह इन्सानी का गुज़र कभी दानिस्ता या ग़ैर दानिस्ता हो जाता है जो स्वप्न अवस्था या आलमे बरज़ख़ से मुशावह (उदाहरण) है। दुनियाँ की पैदायश के सिलसिले में स्थूल शरीर बनने के क़ब्ल (पहले) ख़्याली, फिर हवाई और फिर लतीफ़ अनासिर (तत्व) के हुवावी (हल्के) अजसाम (शरीर) बन जाया करते हैं और जिन तबक़ात या मुक़ामात में यह सूरतें गढ़ी जा रही हैं वहाँ अक्सर अभ्यासी की सुरत पहुँच जाया करती है तो यह शक्लें नज़र आती हैं, वैगेरा-वैगेरा।

मुफ़स्सिल (साफ़ साफ़) हालात देखिये ज़ामीमा (परिशिष्ट) में। ख़्यालात वाहमा (वहम) के बहुत असवाव (कारण) हैं जो तफ़सील के मुहताज हैं। इंशाअल्लाह कभी लिखूँगा।

---

(४७)

१० जनवरी १९२८

मुफ़स्सिल ख़त मिला। हर एक की वालिदा को अपने बेटे की शादी के ख़्यालात रहते हैं, यह क़ुदरती है। वह माया के रूप होते हैं। इसलिए इसकी तरफ़ उसका ख़्याल ग़ालिब रहता है। उसको मौहब्बत के पदार्थों में से अपनी औलाद के लिए यह भी एक जुज़ है जिसकी वजह से उसको यह तमन्ना है। वह ख़्याल करती हैं कि तुमको तक़लीफ़ होती होगी।

अब आम उसूल को इस मामले के मुताल्लिक़ सामने रख कर फिर आपके हालात के मुवाफ़िक़ राय देना चाहता हूँ। शादी के मुताल्लिक़ कुल्लिय क़ायदा यह है कि असल गरज़ तो उसकी बाक़ायनस्ल इन्सान (सन्तानोतपत्ति) जिससे मनुष्य जाति क़ायम रहे) है लेकिन मुतअल्लिक़ गरज़ यह ही है कि इन्सान के नफ़्स्बई और हैवानी के जज़बात को ऐतदाल (समता) में रखे और ग़लबा शहबात नफ़सानिये (काम शक्ति का प्रभाव) का न होने दे, ताकि शारीरिक और मानसिक कोई गुनाह सरज़द न हो जावे। एक तरह पर यह तबीब है कि ख़िलवतहैवानी (काम शक्ति) का जब ग़लवा हो जाया करे तब यह मुआलिज (डाक्टर) का काम दे, उमूर

खानादारी (गृहस्थ) में हाथ बटावें बल्कि एक तरह पर परमार्थ के मानाज़िल (लक्ष्य) के उबूर करने में मावन (सहायक) व मददगार साबित हों।

अब बाक़यात मौज़ूदा और तजुरबात को सामने रखकर इस मामले को ग़ौर कीजिये कि आपकी उम्र क्या है तबियत की जान और रुजूइयत (झुकाव) का ग़लवा किस तरफ़ है। तंदुरुस्ती कैसी है। ईश्वर के फ़ज़ल से आपके लड़के और लड़की मौजूद हैं। इजराय नस्ल (सन्तानोतपत्ति) की अब ज़्यादा ज़रूरत नहीं। उन्हीं को ईश्वर अपनी कृपा से क़ायम और बरक़रार रखे और बस।

ग़लबात नफ़्सानी (काम शक्ति) को आप ख़ुद ही बेहतर जानते होंगे। हाँ , इस क़दर तजुरबा मुझको ज़रूर है कि आम तौर पर नफ़्स ४५ या ५० की उम्र तक तो क़ाबू में रहता है और किया जा सकता है लेकिन इसके बाद फिर जिस्म कमज़ोर होता जाता है और शहबात मुँहज़ोर (क़ाबू से बाहर) हो जाते हैं। यह मुमकिन है कि जिस्म काम न दे सके लेकिन अन्दरूनी हवास बेलगाम हो जाते हैं, और बुरी तरह से बेक़ाबू होकर इनसान को मज़बूर कर देते हैं। यह मुमकिन है कि वह दिल और हवाई ख़्यालात तक रहें, लेकिन मानसिक गुनाह तो होते रहते हैं। इसके बचाव के वास्ते बुज़ुर्गों ने शादी कर लेने को ज़रूरी करार दिया है। मगर जैसा कि आपने लिखा है कि अगर बदक़िस्मती से बद-मिज़ाज़ औरत से पाला पड़ जावे तो ख़्वामख़्वाह बैठे बिठलाये ज़िन्दगी मुसीबत में मुब्तिला हो जावे और तमाम घर को मुसीबत में डाल दे। वालदा साहबा को भी जान बचाना मुश्किल पड़ जावे और जवान बच्चों से अदावत पैदा हो जावे और मासूम बच्चे भी मुसीबत का शिकार हो जायें और यह भी मुमकिन है कि माया का इस क़दर जादू दिल पर मुहीत हो जावे कि तमाम भाइयों और बच्चों से अलहदगी करा दे। मेरे ख़्याल से तो मानसिक बुरे ख़्यालात कभी कभी हमला करते रहें तो इससे बदरजहा अच्छे हैं कि रात और दिन कोफ़्त का हलक़ा अपनी गरदन में दाल लिया जावे, जबकि असल मक़सद पूरा हो चुका है यानी औलाद मौजूद है। अब सिर्फ़ हवसरानी (इच्छा पूर्ति) और जज़बात के उभार की रोक-थाम करना है। मेरे अपने ख़्याल में तो नशेब व फ़राज़ अपने नफ़्स के मुतअल्लिक़ लगा लीजिये। क्या कभी-कभी नफ़्सानी ख़्वाहिशात की तरफ़ झुकाव हो जाता है और ऐसा झुकाव हो जाता है कि दिनों और घण्टों दफ़अ करने पर भी दूर नहीं होता। अगर ऐसा है तो कर लीजिये वरना कुछ ज़्यादा ज़रूरत नहीं है।

आप उस मासूमसिफ़्त मरहूमा (दिगन्त पत्नी) को ख़्याल से रूहानी और तसकीन की ग़िज़ा पहुँचा सकते हैं यानी आलम मराक़बा(अभ्यास, ध्यान) में उसकी सूरत मिसाली को सामने लाकर यह ख़्याल किया कीजिये

कि उसको शान्ति और सुकून रूहानी पहुँच रहा है और उसमें महव हो जाइये, लेकिन मेरी राय में मुनासिब यह है कि चन्द रोज़ और ठहर जाइये, तो क़ुब्बत-इरादी में ज़्यादा ज़ोर आ जायेगा।

---

(४८)

मुझे याद है कि ग़ालिबन मैंने मुफ़स्सिल तौर पर जबाब पहले लिख दिया है वह काफी होगा, अब इससे ज़्यादा क्या लिखूँ ? बहरहाल अगर तबियत जरा भी उस तरफ़ राग़िब हो तो शादी कर लेना चाहिए, वरना फिर ज़्यादा उम्र हो जाने पर शायद अच्छा सम्बन्ध न मिले। मेरी राय में तो पहले दोनों बहिनों की शादी किसी न किसी तरह हो जानी चाहिए, फिर इसकी बाबत ग़ौर करेंगे। मुझे ज़्यादातर ख़्याल बच्चों का है। ज़रूर है कि इन बच्चों को फिर कोफ़्त किसी न किसी तरह की हो जायेगी , यह अम्र आज़मूदा है।

---

(४९)

सबाल २७ फरवरी १९२८

अबकी बार ज़मीमे में जनाब ने इस बात पर ज़ोर दिया है कि हालात बराबर अर्ज़ किये जाएँ। मैं भी कुछ नहीं लिखता रहा। इसकी यह वजह तो नहीं थी कि मैं हालात छिपाना चाहता था या हूँ, बल्कि मुझे तो महसूस ही नहीं होता है और अगर हुआ भी हो तो भूल गया या मामूली बात समझ कर कभी अर्ज़ नहीं की गयी थी, मसलन जिस्म का फड़कना। कभी कभी कई दिन तक आँख और बाज़ू मुतवातिर फड़कते रहे।

एक मरतबा ऐसा हुआ कि आफ़ताब (सूर्य) रात को तेज़ी से चमकता हुआ मालूम हुआ। लेकिन मेरे यह अभ्यास शुरू करने से पहले की बात है, और फिर ऐसी तेज़ी दिखाई न दी। अब आजकल तो दिमाग़ी हालत ऐसी हो गयी है कि अभ्यास में बैठता हूँ तो मुख्तलिफ़ ख़्याल आते हैं। जब अभ्यास से उठता हूँ, सब भूल जाता हूँ। मुमकिन है कि रात को ख्वाव भी देखता हूँ लेकिन सुबह इतना भी याद नहीं रहता कि ख्वाव देखता था।

कल सुबह अभ्यास से उठ कर खड़ा हुआ तो यह मालूम हुआ कि बहुत से रोशन पतंगे चारों तरफ़ उड़ उड़ कर जैसे काटने को आते हैं और वापिस चले जाते हैं। पहले तो यह ख़्याल हुआ कि यह वाक़ई कोई जानवर हैं, लेकिन फिर ग़ायब हो गए।

जबाब

यह रौशनी है जो अभ्यास की हालत में शुरू में होती है, इसको मर्रीखी (मारीचिका) कहते हैं । – Material और मायावी है। इस पर कुछ ध्यान नहीं देना चाहिए। महाराजा ररामचन्द्र जी महाराज ने धोखे में आकर इस पर तवज्जह की और उसके पीछे गए और आख़िरकार इकरुख़ी और इकसुई का कुछ नुक़सान किया, यानी सीता को खोया लेकिन बराय चन्दे ।

सबाल

दाहिने कान में अरसा दूर पर बजती हुई शहनाई की आवाज़ सुनाई देती है और मैं इसको मर्ज़ या दिमाग़ की ख़राबी समझता रहा। यह आवाज़ मुतवातिर सुनाई दे रही है। कितना ही शोर-ग़ुल क्यों न हो ज़रा सी कान की तरफ़ तव्वजह गयी और आवाज़ मालूम हुई।

जबाब

दाहिने कान में दूर से शहनाई की आवाज़ मालूम होना निहायत अच्छी निशानी है, दिमाग़ का लतीफ़ा (चक्र) खुल रहा है।

सबाल

दिमाग़ जैसे सट गया हो और कुछ समझ में नहीं आता है और न ग़ौर कर सकता हूँ।

जबाब

दिमाग़ सट जाना इस अमर की अलामत है कि जज़्ब ने एक साथ उस पर अमल कर लिया है और यह शुरुआत है दिमाग़ पर जज़्ब का गल्वा होने की

(५०)

१२ अक्टूबर १९२८

जो ख़्यालात आपने लिखे हैं वह क़ाबिल इत्मीनान हैं। ख़्यालात का अज़दहाम (झुण्ड)कोई चीज़ नहीं है। अगर बाक़ायदा नशस्त (बैठक) में जी नहीं लगता तो कोई हर्ज़ नहीं ।मकरूह (बुरे) ख़्यालात आते हैं तो आने दीजिये।मुसहल (जुल्लाब) देना ज़ईफ़ी (बुढ़ापे) की हालत में अच्छा नहीं है।

---

(५१)

फ़तेहगढ़

४ जून १९२८

चूँकि इस वक्त आगरा के अहबाब (मित्र) यहाँ ठहरे हुए हैं इस वजह से और नीज़ (और भी) इस ख्याल से कि मरम्मत मकान की हो रही है कहीं बाहर नहीं जाऊँगा। जब तबियत हो आ जाइएगा और वालिदा साहिबा को अगर धूप और गर्मी बगैरा में तक़लीफ़ न हो तो हमराह लाना बेहतर है। आजकल मौसम निहायत ही गर्म और तक़लीफ़दह है और वह ज़ईफ़ और कमज़ोर हैं। बच्चों की तन्दरुस्ती के लिए दुआ करता हूँ। रुख़सत जो कानपुर वालों ने नहीं की यह निहायत दर्ज़ा तंगदिली (संकुचित विचार) का सबूत है। इसके आगे क्या कहूँ। दुनियाँ के ज़ाहिरी सामान अमीरों के यहां देखकर अटक जाते हैं, वरना लड़की को तो अक्सर ग़रीब और सादे दर्ज़े के लोगों में आराम मिलता है।

---

(५२)

जनवरी, १९२९

जो आदत पड़ गयी है अगर वह नागवार और तक़लीफ़दह नहीं है तो तबदील करने से क्या फ़ायदा, ऐसे ही चलने दीजिये। सन्ध्या में अगर इधर उधर के ख़्यालात आते हैं तो आँखें अधखुली रखिये या क़ुतुब (पुस्तकें) देखने में मश्ग़ूल हो जाइये। आँखें बंद न किया कीजिये। नीची नज़र रखा कीजिये।

---

(५३)

फ़तेहगढ़

१५ जून १९२९

मुफ़स्सिल ख़त मिला। जब इस क़दर कम फुरसती और परेशानी है तो तक़लीफ़ करने की ज़रूरत नहीं और न बरख़ुरदारान को परेशान करने की ज़रूरत है। काम करने वाले यहाँ मौज़ूद हैं। नौकरी के मामलात में जा और बेजा बरदाश्त करना होता है। जब तक नौकरी करना है तहम्मुल (सहन-शीलता) और बरदाश्त के देबता के ज़ेर असर काम करना पड़ेगा। ईश्वर से प्रार्थना करते रहो और अपना काम करना चाहिए। जहाँ तक मुमकिन हो सके फ़िज़ूलियात दूसरों के मामलात में दख़ल दरमाक़ूलात (बीच में बोलना या पड़ना) की ज़रूरत नहीं है। ऐसे बर्ताब करो गोया कि दुनियाँ से बेहोश हैं। ईश्वर इंतज़ाम करेंगे और बलाये बद को दफ़ा करेंगे। वह अपनी करतूतों की कहीं न कहीं ख़ुद सज़ा पायेंगे।

---

(५४)

२२ जुलाई १९२९

आपके नाना साहब के स्वर्गवास होने का हाल मालूम हुआ। ईश्वर उनकी रूह को शान्ति दें। अच्छे और पुराने ख़्याल के मज़बूत आदमी थे। उनकी बसीयत के मुताबिक़ ही काम करना चाहिए और उनका पसमादा (शेष धन) किसी जायज़ मद्द में सर्फ़ करना चाहिये। ग़ौर के बाद तसफ़िया किया जा सकेगा, फ़ौरन की ज़रूरत नहीं है। जिस क़िस्म की ख़ैरात और दान को वह तमाम उम्र पसन्द करते रहे हों (जो उनकी वक्तन-फवक़्तन बात-चीत से मालूम होता रहा होगा) उसी तरह पर दान करने से उनकी रूह को शान्ति होगी।

आपने जो ख़त देखने को भेजा था वह देखा गया। वाक़ई उनके जज़बात और उमंगें दुनियाँ के व्यवहार के मुताबिक़ हैं लेकिन रूपये का कमाना, खासकर नौकरी की हालत में तिज़ारत करके, बेइन्तहा (अत्यन्त) मखदूश (ख़तरनाक़) है। हर जगह ऐसे हालात हैं और चालाक कारोबारी आदमी दूसरे की रक़म से अपने कारोबार में इमदाद हासिल करना चाहते हैं और दूसरे नातज़ुर्बेक़ार आदमियों को बाढ़ पर रखकर आमदनी और मुनाफ़े की दिलकश (चित्ताकर्षक) उम्मीदों की सूरत दिखाकर इन बहानों से रुपया लगवा लेते हैं और फिर

दिवाला निकालकर अलग हो जाते हैं। यह काम उन लोगों का है जो आठों गाँठ मुस्तैद हैं और शुरू ज़िन्दगी से ऐसा काम (व्यापार) करते रहे हैं। इसलिए वह इन ज़राअ (ज़रिये) से पैदायश की उम्मीद को दख़ल न दें बल्कि अपनी ही मद्द से थोड़ी बहुत जायज़ रकम को हासिल करके उसके ज़ब्त के क़ायदों को बरतना सीखें और इख़राजात (खर्च) को कम करें, रफ्ता रफ्ता रक़म इकठ्ठा हो सकती है।

आजकल मेरे ख्यालात में मामूली तबदीली आ गयी है । यह मालून नहीं कि कब तक रहेगी । यह सब तजुरबात की बुनियाद पर हुई है। अब अलहदा और रिज़र्व (reserve) रहने की तबियत चाहती है। रूहानी मामलात का कोई ग्राहक नहीं है सिर्फ़ इसके बहाने से दुनियाँ की बातों की एक तबील

फ़हरिस्त पेश की जाती है जिसके लिए सिवाय अफ़सोस करने के और यह कह देने के कि दुआ करूँगा और कुछ मेरे पास नहीं है। लम्बी चौड़ी बातें करना मुझको नहीं आता, अलबत्ता सोशल (social) मामलात की तरफ़ कुछ तबियत रुजू होती है क्योंकि यह इंसानी फ़र्ज़ है। मगर इसमें दूसरे लोगों की दिलचस्पी की भी ख़ास ज़रूरत है, उसका वक्त, मालूम होता है कि मेरे ज़रिये से अभी नहीं आया है या शायद मेरी ज़िन्दगी में न आवे। इन साहब को यह चाहिए कि रुपया पैदा करना एक जायज़ जज़बा है उसको समझ-बूझकर किसी तजुरबेकार और हमदर्द शख्स की मदद से इस्तेमाल में लाया करें, अन्धाधुन्द चलना तो मखदूश (ख़तरनाक़) होगा। ख़ालिस रूहानियत के मामलात में अभी उनको दिलबस्तगी (अच्छा लगना) नहीं होगी, इसलिए बिलफ़ेल (इस समय) मैं इस तहरीक (काम) को रोक लेता हूँ ।

रुई का सट्टा और उसका कारोबार इस क़दर बारीक है कि बरसों हज़ारों रुपया ख़र्च करके अप्रेण्टस के तौर पर बम्बई वग़ैरा में तजुरबा और तालीम हासिल करते हैं तब काम शुरू करते हैं। एक रईस साहब के साहबज़ादे ने हज़ारों रुपया इसमें बरबाद करके अपने आपको मुफ़लिस बना लिया ।

---

(५५)

६ जनवरी १९२८

आपको याद होगा कि पिछली साल इस बारे में उनको इमदाद अज़बस करनी थी और अगर आप लोग उनके बरख़िलाफ़ करेंगे तो घर में मेम्बरान में नौवत रंजिश की पहुँच जाएगी। इसलिए रुपया दे दिया गया, मैने क़यास (ख्याल) से नहीं बल्कि मेरे दिल के यक़ीन ने यह कह दिया था कि इमदाद होती है तो हो जाय, फ़ायदा होता होगा तो हो जायेगा, और अगर यह रुपया जाता रहेगा तो सब्र कर लेना पड़ेगा। मगर ऐसे शख़्स

की अब संभाल ज़रा मुश्किल हो गयी है। यह निक्क्मापन अगर उनका न होता, इत्तफ़ाक़िया, दूसरी बात है मगर आदतन सहल इनकारी (आलस्य) के साथ बेकामैं जो जाना दूसरी बात है। अब अगर क़ुदरत ही इमदाद दे दे तो मुमकिन है कि उनकी हालत सम्भल जाय। उस वक़्त आपके भाई साहब पर मेरा कुछ हक़ कहने का नहीं रहता और अब भी ज़्यादा उन पर दबाब ||||||||||||||| का नहीं पड़ सकता है। वह ख़ुद अपना नफ़ा और नुक़सान ख़्याल करें तो करें। मेरी राय तो यह है कि उनके बाल बच्चों की इमदाद अपनी क़ुब्बत भर दूर से कर दी जाया करे तो कुछ हर्ज़ नहीं लेकिन ख़ास उनकी ज़ात को उनके कारोबार सँभालने के लिए इमदाद करना बिलकुल बेसूद है। ददल में ज़ोर लगाना अपने आपको उसमें और जाने देना है। जहाँ शादी क़रार पा रही है कोशिश करके तै कर लेना चाहिए। कहाँ तक सोच और विचार में वक़्त जाया किया जायेगा, एक न एक नुक़्स तो चाहे जिस क़दर तफ़्तीश(तलाश) की जावे निकल ही आता है। ईश्वर का भरोसा भी करना चाहिये। अपने हत्तुल्मक़दूर (जहाँ तक संभव है) देखभाल कर लेना चाहिये फिर ईश्वर मालिक है, ज़्यादा वहम की ज़रूरत नहीं है। मुझे इस बात को मालूम करके निहायत अफ़सोस हुआ कि कोई मसला ||||||||||||||| ने आपके रूबरू ऐसा रख दिया है जिससे कि बजाय रास्ता साफ़ होने के उलझन पैदा हो गयी है। उनकी नातजुरबेकारी और कम-अक़्ली से ऐसे अमूर हो जाते हैं जिनका दफय्या (ख़तम करना) बहुत मुश्किल हो जाता है। क्या करें बेचारे कम इल्म और फिर लकीर के फ़क़ीर हैं। पुरानी बातों को आजकल के लोगों में पैवस्त कर देना (थोप देना) चाहते हैं और वह भी क़ब्लअज़वक़्त और खिलाफ़ रिवाज़। दो एक और साहिबान को भी उन्होंने अपनी अक़्लमन्दी से चलते हुए रोक दिया और ऐसा मुज़महिल (disappointed) कर दिया कि ग़रीब हक्का-बक्का रह गए। मेहरबानी करके वह मसला मुझको जल्द लिख भेजिए ताकि आपको ख़्वामख़्वाह परेशानी न उठानी पड़े। मैं क़यास से यह जनता हूँ कि ज़रूर उन्होंने कोई जुम्ला मुरीदी और बैत (गुरु दीक्षा) वगैरा का चुस्त कर दिया होगा । अक़्ल के दुश्मन यह नहीं जानते कि किसी की शादी में अगर नाँद के अन्दर बिल्ली बंद हो गयी थी तो ज़रूरी है कि अब भी बिल्ली बंद की जाये और वही तरीक़ा पहले जो रायज (प्रचलित) था रखा जावे। क्या हाल का तरीक़ा काफ़ी नहीं है और क्या इस तरीक़े से तालीम नहीं हो सकती है। उनका ख़्याल है कि तकमील (परिपूर्णता) बिला बैत के न होगी । लेकिन बैत का ज़रिया सिर्फ़ वही तरीक़ा मानते हैं जो पुराने सूफ़ियों ने जारी कर रखा था। उनको यह मालूम नहीं कि दौर जदीद (वर्तमान काल)के सूफ़ियों ने अब तरीक़ा बदल दिया है और उनके साथ वक़्त भी बदल गया है। ख़ास-ख़ास तबियत और ख़ास-ख़ास अलामत के लिहाज़ से जुदा-जुदा तौर पर बैत जारी करते हैं। बैत महज़ एक तरीक़ा है जिसमें चन्द उसूलों की पाबन्दी के लिए वादा लिया

जाता है। अब ख़्याल किया जाना चाहिये कि पुराने तरीक़े की बैत में जो पाबन्दियाँ और अलफ़ाज़ क़ायम किये जाते हैं वह किस मुल्क़ और किस क़ौम और मिल्ल्त और किस तर्जमाशरत (पेट भरने का तरीक़ा, पेशा) के लोगों के लिए गढ़े गए थे। क्या वह अब इस मौज़ूदा सोसायटी के लोगों के लिए मुवाफ़िक़ क़रार दिए जा सकते हैं ? हरगिज़ नहीं। ख़ैर, इस वक़्त मैं पूरे तौर पर इसकी बाबत नहीं लिख सकता हूँ। अगर यही मसला आपके सामने हो तो उस वहम को दूर कीजियेगा। अगर कोई दूसरा हो तो फ़ौरन लिखिए।

---

(५६)

११ नवम्बर १९२९

ख़त मुफ़स्सिल मिला। जो हालात बीमारियों और परेशानियों के थे वह मालूम हुए, यह दुनियाँ का चक्कर है। हर शख़्स और हर घराने पर आता है, परेशान कर देता है। सिवाय प्रार्थना के और चारहकार नहीं होता, चन्द रोज़ अपना दौर ख़त्म करके चला जाता है। परमात्मा अपना फ़ज़्ल व करम करें यही प्रार्थना है। जल्द दिन आयेंगे जब तफ़क्कुरात (कड़ाई) के दिन राहत में बदल जायेंगे।

---

(५७)

१८ फरवरी १९३०

इस मर्तबा जो कुछ हो गया वह बहुत अच्छा और क़ाबिल -इत्मीनान हुआ, ईश्वर का फ़ज़्ल दरकार है। और वह ही सब कुछ है। बुज़ुर्गान मुतकद्दमीन (पुराने) की मौहब्बत तो साफ़ ज़ाहिर है कि इस अम्र को आपने क़ुबूल कर लिया जो निहायत ही नामुमकिन था।

दोनों भोंहों के दरम्यान फड़कन रूहानी तरक़्क़ी की अच्छी अलामत है। अब वहाँ पर जब ऐसा हो, ज़्यादा ख्याल रखना चाहिए। जब लगातार सत्संग आठ-दस रोज़ तक रहा और रहता है तो उसके बाद कमी महसूस हुआ करती है। और यह क़ायदे की बात है भी कि जो सत्संग में गर्मी और लगाव रहता है वह बाद उसके फिर चन्दे नहीं रहता (थोड़ी देर नहीं रहता) अव्वल तो दिमाग़ बर्दाश्त करते-करते थक जाता है। दूसरे, गर्मी अलहदा हो जाने के बाद सर्दी महसूस हुआ करती है। ख़ैर, ईश्वर अपना फ़ज़्ल आप सब पर करें

३० अप्रेल १९३०

मरहूमा की आत्मा की शान्ति के लिए प्रार्थना करता हूँ और नीज़ पसमाँदगान (survivors) के सब्र और तस्कीन क़ल्ब के वास्ते दुआ करता हूँ। परमात्मन शान्ति और क़रार देवें।

जब किसी मरीज़ को कहीं दर्द है तो तबीब (वैद्य) रफ़ादर्द (दर्द दूर करना) की कोशिश करेगा न कि नुख्से की अदवियात (दवाइयों) की माहियत (constituents) और तासीरात (प्रभाव) समझाने लगेगा या मर्ज़ के पैदा होने के असबाब और उसके फ़लसफ़ह के समझाने के लिए लैक्चर देगा, जे जाय कि मरीज़ सरसामी हालत में मुब्तता हो, उस वक्त तिब के नुक़ात और फ़न के मुतअल्लिक़ तबीब बहस पेश कर दे।

आपका क़ल्ब (ह्रदय) क़ुदरती और फ़ितरती तौर पर किसी सनसनी ख़ेज़ वाक़आत के मालूम होने पर जब्त रखने के क़ाबिल नहीं है। एक हलजान (परेशानी) और ह्योलानी कैफ़ियत (disturbed हालत) और रंग को क़ुबूल कर लेता है। इस हालत में अक़्ल सलीम और ज्ञान शक्ति में अगर कोई तग़य्युर (असंतुलन) पैदा हो जाये तो यह कुछ ताज़्ज़ुब की बात नहीं है जैसा कि आपके ख़त की इबारत और सबालात के अल्फ़ाज़ से प्रकट होता है कि इस वक्त क़ल्ब में इज़्तरार (परेशानी) इस दर्ज़ा सोरिश पर है कि सही वाक़यात को उनकी उनकी ज़ाती कैफ़ियात की शक्ल में क़ुबूल करने के लिए क़ल्ब और दिमाग़ में इस्तेदाद (क़ाबलियत) और क़ुबूल का माद्दा थोड़े अर्से के लिए ग़ैरहाज़िर सा हो गया हो तो ताज्जुब नहीं है। मुझको आपके इस तग़य्युर (तबदीली) पर हमदर्दी है।

आप लिख रहे हैं कि " अदब के ख़्याल से यह कह देना कि सब काम मिनजानिब ख़ुदा होते हैं और बिला उसके हुक्म के पत्ता भी नहीं हिलता। यह तो दूसरी बात है लेकिन सही क्या है ?" इन जुम्लों में जो मुतज़ात (विपरीत) ख़्याल है उन पर ग़ौर करना चाहिए। आप दरयाफ़्त करते हैं कि सही क्या है गोया कि अदब की वजह से जो ख़्याल क़ायम किया गया है वह ग़ैर सही है।

इस क़दर लिखने के बाद यह ख़्याल में आया कि इस वक़्त जो दलायल (तर्क) और समझाने के लिए बातें लिखी जावेंगी वह बेकार होंगी क्योंकि इस वक़्त ज़्यादती सदमे से क़ल्ब की हालत इस क़ाबिल नहीं रही है जिसमें कोई असलियत या कोई अक्स ठहर सके। इसलिए ऐसी हालत में दवा की ज़रूरत है और वह प्रार्थना है। ईश्वर आपको सब्र और शान्ति देवें और आपकी वाल्दा साहिबा को शान्ति और सुकून इनायत फ़रमावें।

जब जिस वक़्त मुलाक़ात होगी ज़बानी जबाब दिया जा सकेगा,

---

(५९)

९ अक्टूबर १९३०

मैं बफ़ज़लहू अब अच्छा हूँ और सब लोग और बच्चे अब अच्छी तरह पर हैं। बच्चों के साथ रहना अच्छा है, तनहाई इससे ज़्यादा बबाल जान हो सकती है। अगर इन्सान का मन साफ़ और शुद्ध है तो हर हालत में वह मुतमईन (सन्तुष्ट) रह सकता है और अगर नहीं तो कुछ नहीं। आपको ख़्यालात की लहरों के साथ बाबस्तगी (मिलना) हो गयी है और यह मानसिक बीमारी है जो निहायत दर्ज़ा हठी और ज़िद्दी होती है। ईश्वर इससे पनाह दें और अपना फ़ज़ल आप पर करें। अगर रफ़ा (दूर) न हो तो फिर मुझको इत्तिला दीजियेगा। अव्बल तो मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि आपसे यह बीमारी दूर हो जावे और ईश्वर कृपा करेंगे तो रफ़ा हो जाएगी। आपने यह मिसाल सुनी होगी कि ' नया मुसलमान प्याज़ ज़्यादा खाता है ' -- जो लोग इस क़दर तंगदिली (narrow mindedness) और पस्त ख़्यालात (तुच्छ-विचार) की बातें कर रहे हैं वह दरअसल मज़हब से बिलकुल नावाक़िफ़ हैं, चन्द रस्मी बातों का अदा करना मज़हब क़रार दे रखा है, हालाँकि मैं इस मज़हब को , ख़्वाह वह कोई फ़िक़रे का हो , मज़हब नहीं मानता। मज़हब, दरअसल फ़राख़ चश्मी (broadmindedness विशाल ह्रदयता) नेक सीरती (अच्छी आदत) ख़ुश इख़लाक़ी (अच्छा सदाचार) हमदर्दी, यकरुख़ी (एक ख़्याल) अपनी शनाख़्त (आत्मानुभव) और दुनियाँ के हर मख़लूक़ के साथ बसीअ (विशाल) और लामहदूद (अनन्त) हमआहंगी (एक सा बर्ताव) करने का अमल है न कि यह बेहूदा मरासिम (rites रस्म) की निस्बत क़ील व काल (वहम) करना और अपने आपको फ़क़ीर कहते और कहलवाते रहना। मुझको तो ख़ुद अपने ऊपर इस अपनी मौज़ूदा ज़िन्दगी पर निहायत शर्म आती है और अपने आपको हरगिज़ मुस्तहक़ (हक़दार, अधिकारी) नहीं करार देता कि लोगों के रूबरू अपने आपको बतौर राह बतलाने वाला पेश करूँ। मगर क्या करूँ, जो हो गया वह हो गया। जब तक कि मैं अपने आपको उस मैदान -अमल (कर्म-क्षेत्र) में खड़ा न देखूँ लोगों को धोखा देता हूँ । मैदान-अमल से मेरी मुराद ख़ुश इख़लाक़ी और मुकम्मिल इन्सानियत से है न कि आजकल की मौज़ूदा जद्दो जहद (झगड़ालू, बुरे) से ।

आपको चाहिए कि हिम्मत बाँधकर फ़ासिद (झगड़ालू, बुरे) ख़्यालात को हटा दीजिये। इंसान सब कुछ कर सकता है, अपने आप पर भरोसा करके हिम्मत बाँधकर काम कीजिये। इंशा अल्लाह नफ़ा होगा।

---

(६०)

पुराने अक़ायद और मज़हब को एक तरफ़ और नई रोशनी उसूलात, इल्म इख़लाक़, सियासत (political) तमददुन (economic), तिब (medical) वग़ैरा उसके मुक़ाबिल (आमने सामने) रखकर देखा जावे तो हर पहलू से ये बात पाये सबूत बल्कि ह्रदयकीन (मूल विश्वास) तक पहुँच चुकी है कि दुनिया में जो मौजूदात (वर्तमान) हैं, उनमें सबसे नीचे दर्ज़े की मख़लूक़ जमादात (कंकड़ पत्थर) और आला दर्ज़े का इन्सान, जिसको अशरफ़ुल मख़लूक़ात (सब जीव मात्र से ऊंचा) के नाम से ताबीर करते हैं, करार दी जा चुकी हैं।

इन्सान पर अशरफ़ुल मख़लूक़ात का इतलाक़ । (applied लाग) सिर्फ इस बात पर रखा गया है कि जुमला सिफ़ात इलाही (परमात्मा के गुण) जब ज़ात से अलहदा हुईं, तो हर मख़लूक़ में कोई न कोई सिफ़त क़दरे कम या ज़्यादा ज़रूरत के मुताबिक़ अता हुई। किसी को मज़मूम (शैतान, बुरी) और किसी को मलकूत (अच्छा स्वर्गीय) मगर इन्सान को जुम्ला सिफ़ात (गुणों) से आरास्ता किया (बख्शी गयी)। अलावा बरीं (इसके अलावा) इन सब पर एक ताक़त मौज़ूद की गयी कि मज़मूम सिफ़त (बुद्धि) का मलकूत से और इसी तरह एक से दूसरे में तमीज़ करे। इसका नाम क़ुब्बत ममीज़ा (conscience) है। ये ख़ास वजह है कि हज़रते इन्सान अशरफ़ुल मख़लूक़ात क़रार दिए गए।

मुमकिन है कि कोई सिफ़त बवजह सोसाइटी के इस क़दर ग़ालिब हो जावे, कि क़ुब्बत ममीज़ा (conscience) को दबा ले और किसी वक़्त तक मुअत्तिल कर दे। मगर हर वक़्त ऐसा नहीं है। हाँ, ऐसा हो सकता है कि ज़्यादा सुकून या जज़बात के भड़क जाने से बेकार भी हो जाये। मामूली इन्सान जिनको न इल्म है न सुहबत है, मुश्किल से ऐसी हालत से उहदाबरार (पदाधिकारी) हो सकते हैं, मगर इससे ज़्यादा एक दर्ज़ा और है, जिनकी अलावा इल्म और मौहब्बत के इमदाद ग़ैबी होती है या दीगर अल्फ़ाज़ में यों कहना चाहिए कि औलिया (सन्त) अल्लाह का साया होता है ताकि वह अपनी क़ुव्वत को हर वक़्त काम में ले सकें। और बिला थकान(without exhaustion) इस्तेमाल करें। ये इमदाद ग़ैबी इस क़दर रोशन और तेज़ होती है कि किसी क़िस्म की तारीकी (अंधकार) या कोई ख़्याल क़ुव्वत तमीज़ को परेशान नहीं करने देती। हर अमर को इस क़ुब्बत के रूबरू खड़ा कर देती है। यह वह लोग हैं जिनको बादशाह-वक़्त (गुरु) और बादशाह-दीन (ईश्वर)

कोई काम सुपुर्द करते हैं। उनके तहत में चन्द तादाद इन्सानों की होती है। किसी हिस्सा मुल्क या ज़मीन की निगरानी उनके सुपुर्द होती है। ये हाकिम और अफ़सर के नाम से ताबीर किये जाते हैं।

इस वक़्त तक जो मराआत (सुविधाएँ, इनायतें) और नज़र तवज्जहात इस हक़ीर (दीन, तुच्छ) की निस्बत जारी रखी हैं, वह बयान और तहरीर की हद में आ सकती हैं। कोई शख़्स अपना गन्दुम (गेहूं) बएवज़ भूंसी नहीं फ़रोख़्त कर सकता है और अपनी आज़ादी महज़ एक लमहा की और ज़लील सौहबत की एवज़ नहीं खो सकता। अपनी माली हैसियत को एक बेहूदा ख़्यालात के बायस मुअरिज़ ख़तरे (ख़तरे का अन्देशा) में नहीं डाल सकता और न उसूलन चन्द साला मेहनत शाक़्क़ा (सख़्त), जो एक ख़ास गरज़ से की गयी, मामूली झटके से ज़ाया हो सकती है।

मेरे दिन भर कचहरी में बन्द रहने और घर पर सिवाय ख़ुर्दनोश (खाने पीने) की ग़रज़ से जाने और शब को एक गोशे (एकांत) में बसर करने का यही बायस था कि कोई क़ुसूर बदमुआमलगी (तहज़ीब के ख़िलाफ़) या सलाह व मशविरा न आयद हो जावे। इस पर भी अगर कोई शुबह हो सकता है तो सिवाय ख़ुदा के और कोई नहीं जान सकता और अगर ख़ुदा की तरफ़ से भी हो तो उसमें किसी की दख़ल मुमकिन नहीं।

अलबत्ता एक क़ुसूर मुझ पर आयद हो सकता है। वह मज़बूरन है। किसी की इज़्ज़त व हमय्यत (self respect स्वाभिमान) का गिर जाना इख़लाक़न गवारा नहीं कर सकता। ज़बरदस्ती एक शख़्स जो दरवाज़े पर पड़ा है , ख़ुर्दनोश (खाने पीने) से न पूछा जाय। इस पर भी इशारतन कनायतन (इशारे से) कहा गया, मगर न माना और न समझ में आया कि क्या किया जाय। हर शख़्स के अफ़आल (कर्म) अपने साथ हैं अगर किसी बद्शख्स के अफ़आल ख़्याल में इमदाद और मुअविनत (सहायता) की जावे तो वाक़ई वह उसका सजाबार है। चूंकि उनकी (ख़ुर्दनोश की) इमदाद हुई, इसलिए इसकी सज़ा मुझको हो चुकी। माली हालत को कमज़ोर कर दिया। इसमें न केवल मेरा बल्कि क़रीब निस्फ़ बल्कि पूरे निस्फ़ दर्जन मासूम बच्चों का हिस्सा है। मैं सिर्फ ज़रिया उनकी खुरिश (भोजन) पहुँचाने का हूँ। रज़्ज़ाक़ (रोज़ी देने वाला) ख़ुदा है।

हर इन्सान को मज़बूरी में रूही तक़लीफ़ ज़रूर होती है, ख़ास कर मुझको।

(६१)

तुम्हारा यह फ़िक्रा कि मैं सख़्त दिल हूँ, मुझको बहुत अच्छा मालूम हुआ और ख़ास क़िस्म का लुफ़्त हासिल हुआ। यह एक प्यार से भरा हुआ जुमला था। बिना प्यार के ऐसी बात कोई किसी से नहीं कह सकता, दिल से दिल को राहत है। मैं तुमको प्यार करता हूँ और तुम मुझको प्यार करते हो। ज़रा सी बात में ख़फ़ा हो गए। तुम यही समझ लो कि यह मेरी एक अदा थी। मैं तुम्हारी तरफ़ से मुँह फेर लेता हूँ जब तुम मेरी तरफ़ देखते हो और जब तुमको देखता हूँ, तुम भाग जाते हो। अपने दिल से पूछ लेना कि अगर मैं तुमसे बेपरवाही करूँ तो तुम क्या मुझको छोड़ दोगे ? मैं श्रीकृष्ण व श्यामलाल से कभी बात भी नहीं करता और न कभी उनकी तरफ़ मुतवज्जह होता हूँ और न उनको ख़त लिखता हूँ। ||||से कभी बात भी नहीं करता। मैं जानता हूँ कि जो लोग ऐसे हैं जो मुझको कभी नहीं छोड़ सकते उनसे क़ुदरतन ऐसा ही बरताव होता है। |||||| को क़सदन मैनें आजतक तालीम नहीं दी। तुम्हारा काम है कि ज़बरदस्ती मेरे पास जो कुछ है छीन लो और चंद लोग ऐसे हैं कि उनसे हर वक्त खौफ़ रहता है कि कही भाग न जावें। मैं खुद चाहता हूँ कि वह मेरी तरफ़ आयें , वह नहीं चाहते। इसी से ख़्वामख़्वाह उनकी दिलजोही रखना होती है। अगर ज़रा सी बेपरवाही उनसे दिखलाई जावे, वह भाग जावेंगे और तुमको धक्का देकर भी निकला जावे तो न जाओगे। जो मेरी याद करते रहते हों या भूल रहे हों उनको सलाम व दुआ।

---

(६२)

फ़तेहगढ़

२ अगस्त १९२३।

||||||| ईश्वर मदद करेगा, सत्संग करना चाहिए। और जब कभी मुलाक़ात होगी और बातें भी बतलायी जावेंगी। सोसाइटी को दुरुस्त रखना चाहिए। इससे बहुत फ़ायदा होता है।

(६३)

फ़तेहगढ़

१६ जुलाई १९२८

अज़ीज़म श्रीकृष्ण लाल, दुआ।

।।।।।।।।।।।।।।।। भाई एक वक्त होता है और उसके ज़ेर असर मामलात हो जाते हैं। ईश्वर ने और बुज़ुर्गों ने पहले ही से तुमको अपनाया है। वह काहे को छोड़ देंगे। मेरा अख़्त्यार नहीं कि मैं छोड़ सकूं।क्योकि हाथ देने में वास्ता दूसरे का है और वह हाथ बड़ा मज़बूत और पक्का है। थोड़े दिन इधर उधर भटक जाना और बात है, लेकिन वह लोग अपने शख़्स को कहीं जाने नहीं देते । उम्मीद रखना चाहिए कि वह अंजाम बख़ैर करेगा, ऐसा ही हो ।

---

(६४)

फ़तेहगढ़

सत्संगी भाइयों और साधकों को यह बात मालूम होना ज़रूरी है कि साधु-समाज में प्रवेश होते वक्त चार बातों पर ध्यान देना और अमल में लाना निहायत ही ज़रूरी है। अगर इन चार बातों अमल करने को वह तैयार नहीं हैं, तो ख़ामख़्वाह नाम व नुमायश (दिखावे) के लिए यह काम बेफ़ायदा है।

प्रवेश होने के पहले दो बातें हैं - (१) श्रद्धा (२) विश्वास। बिला इन बातों के कोई अच्छा फ़ायदा नहीं होता।

ऐतक़ाद और यकीन सत्संग के ज़माने में श्रवण व मनन करने से पैदा किया जा सकता है। जब सौहबत में आकर बातों को सुनेगा और ग़ौर और फ़िक्र करेगा तो नतीज़े पर ख़्वामख़्वाह पहुँच सकेगा। जब तक दिल गवाही न दे उस वक्त तक अभ्यास के मैदान में नहीं आना चाहिए। जब आ गया है तब साधक के लिए दोनों सिद्धान्तोंको काम में लाना पड़ेगा। अगर पाबन्दी नहीं करेगा ख़ातिरख़्वाह फ़ायदे की उम्मीद करना फ़िज़ूल है।

पहली बात यह है कि अपने हालात व वाक़यात और वारदातों को अपने सिखलाने वालों के सामने हमेशा रखता रहे, कभी न छिपावे।

दूसरी बात यह है कि जो मुर्शिद (गुरु) हिदायत करे उसके मुताविक़ बाल-बाल तामील करने की कोशिश करे। अगर किसी मज़बूरी की वजह से ज्यों की त्यों तामील नहीं हो सकती तो यह दूसरी बात है और लाचारी है। मगर इरादतन (जान बूझ कर) कार्रवाई ख़िलाफ़ करते रहना और अपने मन और नफ़्स के ताबे (प्रभाव में) रहना सरासर बेउसूली है।

ज़्यादातर साधक ऐसे हैं जो वर्षों अपनी हालत की ख़बर नहीं देते, और जो ख़बर करते हैं वह सिर्फ़ इतना लिख देते हैं कि आप तो सब बातें दिलों की जानते ही हैं और आपसे क्या पोशीदा (छिपा) है, आप तो त्रिकालदर्शी हैं, हर वक़्त आपको सब बातें रोशन हैं। यह उनकी लाइल्मी (अज्ञान) है और अज्ञान की वजह से ऐसा ख़्याल बाँध रखा है, वरना क्या वह नहीं जानते कि यह बातें सिर्फ़ परमात्मा और ईश्वर की ही ज़ात से ताल्लुक़ रखती हैं। गुरु और मुर्शिद तो तुम जैसा इंसान है। सिद्ध, संत, वली-अल्लाह, महात्माओं की अक़्ल सलीम (बुद्धि जो एक हाल पर क़ायम है) तेज़ होती है। कभी-कभी वह आसमान की सैर करते हैं और कभी-कभी वे पाताल लोक में जा गिरते हैं। कोई वक़्त उन पर ऐसा होता है कि कोई परदा उनके लिए हायल (रुकावट) नहीं। कभी ऐसा होता है कि उनको अपने पैर की पुश्त भी दिखाई नहीं देती।

अलावा इसके अनुमान (क़यास) से हालात पर अन्दाज़ा लगाया जाता है। ख्वाबों, इरादों और ख़्यालात और फिर स्वभाव (तबई -हरकत) से आदमी की हालत को मालूम करते हैं इसलिए ज़रूरी है कि साधक और शाग़िल लोग अपने रोज़मर्रा का हाल नोट करते जायें।

(१) उनमें जो नये- नये इरादे पैदा हों।

(२) तरह तरह के जज़बात (भावनायें) उठें।

(३) ख़ास ख़ास घटनायें उनके मन के अन्दर उभरें।

(४) अजीब व गरीब निशानात अपनी ज़िन्दगी के कारबार में दिखाई दें।

(५) ख्वावों को देखें।

(६) अन्दर शब्द सुनाई दें

(७) इख़लाक़ (सदाचार) में एक ख़ास तब्दीली पैदा होती हुई महसूस करें।

(८) (बुज़ुर्गों की) रूहानियात (महापुरुषों की, दिगन्त आत्माओं की) से सोते व जागते मुलाक़ात हो या इशारे मालूम हों।

(९) आकाश-वाणी की क़िस्म से सुनाई पड़े।

(१०) दुनियाँ के बन्धन ढीले होते हुए मालूम हों, वग़ैरा -वग़ैरा

इन सबको रोज़मर्रा लिखते जावें और जो ज़रूरी बातें इत्तला के क़ाबिल हों उनको लिख कर भेज दिया करें। उनके जबाबात जब उनको मालूम हों, उनको ग़ौर किया करें और जो हिदायतें उनको मिलें उनको निहायत मज़बूती, इस्तक़लाल (लगन) और हिम्मत से पूरी तौर पर अंजाम देने की फ़िक्र रखा करें। मनमत न बनें और गुरुमत होने का उत्साह रखें, तो ज़रूर है और परमात्मा से उम्मीद है कि अपना फ़ज़ल करेंगे।

अब चंद भाइयों ने इस महीने में अपने जो हालात लिखे हैं उन पर कुछ रौशनी डालता हूँ, और जुमला भाइयों की वाक़फ़ियत और तजुरबे की गरज़ से लिख देता हूँ। उम्मीद है कि इस तरह जुमला साहिबान जाग्रति पैदा करके अपने अपने मुफ़स्सिल (विस्तृत) हालात से मुत्तला करते रहेंगे। जहाँ तक मौक़ा, वक़्त और फ़ुरसत ने मदद की वहाँ तक जबाब उनके पास पहुँचेगा, देर सबेर का ख़्याल न करें।

-(पाठक कृपया खत नंबर १,२,३ देखें)

(६५)

फ़तेहगढ़

१० अगस्त १९२८

मैं आपके वास्ते मुनासिब हाल यह समझता हूँ कि चढाव का अभ्यास बहालत मौज़ूदा आपके लिए काफ़ी हो गया है। इस वक़्त उसकी ज़रूरत ज़्यादा नहीं मालूम होती। लेकिन तावक़्ते कि इन्द्रियाँ मन और दीगर तत्व मग़लूब होकर तरतीब में न आ जायें उस वक़्त तक लतायफ़ (कोमलता) नहीं आती और न असली शान्ति क़ल्बी (दिल की) मिलती है और यह काम बिला तप किये हुए नहीं हासिल होता। आपके वास्ते जो तप लाज़िम है वह यह है कि जो आदत और जज़्बात ख़िलाफ़ अदब और तहजीब हो रहे हैं, वह ठीक हो जावें और तमाम लतायफ़ (चक्र) मुहज्जब होकर (तहजीब में आकर) तकमाल तक पहुँच जावें।

आपका अभ्यास और शग़ल यह होना चाहिए कि आप अपने हर एक बेजा उभार और जज़्वे को रोककर मातदिल (सम) हालत पैदा करें। एक जज़्बा और एक आदत को जिसके आप प्रभाव में मालूम होते हों, उसको अव्वल मराकबा (अभ्यास, ध्यान) में सामने रखिये और ख़ुदा से ख़ुलूस क़ल्ब (शुद्ध हृदय) के साथ रोज़ाना इस तरह दुआ कीजिये कि हालत रिक़्क़त तारी (रोना) हो जावे और उससे मदद चाहिए कि यह हालत मग़लूब हो जावे (छा जाए)। इंशाअल्लाह फ़ायदा होगा और काम बनेगा। सआदत इसी में है। ' हिम्मते मरदा मददे ख़ुदा।' हमेशा का मशहूर मकूला है और यह सही है। और यह भी मशहूर है कि ' ई सआदत बज़ोर बाज़ू नेस्त गर न बख़्शद ख़ुदाय बख़शन्दा । आपके लिए यह जबाब है कि हमारे और आप सब लोगों के सर पर बुज़ुर्गों का साया है और यह मदद काफ़ी है।

---

(६६)

फ़तेहगढ़

२२ अक्टूबर १९२५

।।।।। तजुरबे से मालूम होता है कि लाख बार पढ़ने पर भी तस्सली और ज्ञान नसीब नहीं होता है। यह तो किताब है अमली, और ख़ालिस सत्संग में भी जब तक वक़्त न आये मुकम्मिल ज्ञान प्राप्त नहीं होता। तुम्हारा ख़त मेरे नाम और दीगर ख़तूत जो ।।।।।।।।। के नाम आते रहे, इसके शाहिद (गवाह) हैं कि किसी ख़ास बात को तुम्हारा दिल ढूंढ रहा है, और किसी चीज़ के लिए क्या कुछ बेक़रारी है। पाने के लिए अब तक क्या २ किया और बहुत कुछ पा चुके और अब भी निहायत तड़प के साथ तलाश है, यह क्या है ? यह तलाश और बेक़रारी और बेचैनी मुबारक, मुबारक, मुबारक। अफ़सोस है उन पर जिनको ग़फ़लत की नींद ने बिलकुल बेहिस (जिसमें feeling न हो) बना दिया है और ख़ास कर सख़्त अफ़सोस उन पर जो बातिनी सत्संगी होकर तड़प और जुस्तजू (खोज , कोशिश) से बिलकुल बेबहरा (नावाक़िफ़) हैं। यह इस्तगना, बेपरवाही, लापरवाही क्या असली है ? हरगिज़ नहीं , हरगिज़ नहीं। यह झूंठी तसल्ली और इत्मीनान है, जो ज़हर क़ातिल है। तलाश और तड़प और बेचैनी की हालत क़ाबिल इत्मीनान है। यह उम्मीद दिलाती है कि ईश्वर की इमदाद से रास्ता खुला हुआ है और ज्यों-ज्यों रास्ता तैं हो रहा है, उतनी ही आगे के लिए तैयारी है।

भाई ! दुनियाँ के तजुरबात और मश्शाक़ी (अभ्यास) से असली उपराम और वैराग की हालत होकर परम पुरुषार्थ या ज्ञान हमआहंगी (मिलना, एकता) होगी, और इसके लिए वक़्त दरकार है। लेकिन इस वक़्त तुम्हारे लिए सिर्फ़ यह तदबीर और इलाज काफ़ी है कि ईश्वर की दयालुता और बुज़ुर्गों के कलाम (वचन) पर विश्वास रखकर बिला थकावट के चले चलो और भरोसा रखो कि बेड़ा एक दिन पार होगा, और ज्ञान की हालत नसीब होगी, सब भ्रम मिट जाएंगे। ॐ शान्ति, शान्ति, शान्ति ।

---

(६७)

फतेहगढ

११ फरवरी १९२६

ईश्वर हर आन (क्षण) आपकी रूहानी और दुनियावी तरक़्क़ी करें। ॥ सब मुतनफ़्फ़िस (जीवधारी) कर्म करने के लिए पैदा किये गए हैं और बाहम एक दूसरे की क़ुदरतन दानिस्ता और ग़ैर दानिस्ता (जाने अनजाने) इमदाद करते रहते हैं। लेकिन वह ऐसे ख़ास बन्दों से ख़ास काम कराते रहते हैं जिनको हुक्म होता ही, वह ही यह काम कर सकते हैं। यह मौहब्ब्त के ख़ास निशान हैं। ईश्वर सरापा (सर से पाँव तक) मौहब्ब्त है, सरापा ज्ञान है , सरापा आनन्द है। लेकिन ज्ञान और आनन्द में अगर मौहब्ब्त और प्रेम का रंग खुला हुआ झलक देता है, यह ख़ास लुत्फ़ उसके अल्ताफ़ (चक्रों) में से है। वह जज़्बा (खिंचाव) की रूह है, जज़्व से हम आये और जज़्व ही से हम एक दिन लय होकर अपने असली चश्मे में जाएंगे । पस जज़्व की जब रूह प्रेम ठहरी, तब इनका ख़ास और नुमायाँ अंग ख़ुदा का जीता जागता प्रकाश है ।

जो है बेदार (जागता, होश में) इन्सां में, वह गहरी नींद सोता है कहाँ । शजर में, फूल में, पत्थर में, हैवान में, सितारे में, यही रूह सिवाय इन्सान के सब मखलूक़ (सृष्टि) में सोती हुई है। सिर्फ़ इन्सान में जाग रही है। अब इन्सान में असली जागती हुई स्पिरिट (spirit) वह है दूसरों के लिए बिला ख़्याल मुआवज़ा (बिना बदले की भावना) और बेगरज़ाना (निस्वार्थ) काम करती है और इमदाद करने को मुस्तैद रहती है। क्या इससे ज़्यादा पहलू किसी ग़ैर मुस्तैद रूह का हो सकता है ? राम राम कहो। जो दूसरों के लिए मरते हैं, वह ज़िन्दा होंगे और जो अपने पेट पालते हैं यह तो जानवर भी करते हैं ।

फ़तेहगढ़

२६ अगस्त १९२७

।।।। आपने जो ख़ौफ़ और हैबत (डर) का तारी रहना लिखा है की ख़ौफ़ के वक़्त ख़ौफ़ नहीं लगता, पस इसकी माहियत (असलियत) दरियाफ़्त होना ज़रूरी है कि इस क़िस्म का ख़ौफ़ किस क़बील (वजह) से है। जहाँ तक क़ुब्बत इल्म (ज्ञान) दस्तरस (पहुँच) रखती है, यह अमर तहक़ीक़ होता है कि है ज़ाहिर का एक बातिन और हर बातिन के लिए एक ज़ाहिर है। ख़ौफ़ हक़ीक़ी (असल) के ह्यः लिए खौफ़ मजाज़ी (नकली) हालत क़ायम नहीं रहती।

यह हालत अगर ख़ौफ़ मजाज़ी की है, तो ख़ौफ़ के वक़्त ख़ौफ़ की हालत क़ायम रहनी चाहिए। बरख़िलाफ़ इसके ऐसे मौक़े पर कुछ ख़ौफ़ नहीं रहता। पस यह अकसी (छाया) या सायानुमा ख़ौफ़ जो ज़ाहिर का हुक्म रखता है, आपकी हालत से मुताल्लिक़ नहीं है। यह हैबत और ख़ौफ़ अज़ली (ईश्वरीय, सदा

से) है जो खुदाबन्दी (ईश्वर की और से) है। जो चीज़ें या मख़लूक़ (जीव धारी) आपको ज़ाहिर में दिखाई देते हैं,इन सब का बातिन (अन्दर) है। पस जो क़ुब्बत या क़ुब्बतें इन्सान में राखी गयी हैं, वह ख़्वाह नफ़्सानी हों या तबई (प्राकृतिक) हों वे तीन हालतों से ख़ाली नहीं हैं --

(१) या तो एक क़ुब्बत हद एतदाल (समता) से बढ़ी हुई है।

(२) या हद एतदाल से घटी हुई है।

(३) या एतदाल के अहाते के अन्दर (सम अवस्था balanced mind बढ़ी और घटी हुई दोनों हालतें अच्छी नहीं हैं। एतदाल की हर हालत हक़ीक़ी मुक़ाम के नज़दीकतर (निकटतम) है जो सत का हुक्म रखती है। एतदाल की हर हालत पर सत या ज़ात का परतौ (अक्स) पड़ता है जो तब्दील पिज़ोर (बदलने वाला नहीं है।)

क़ानून इलाही में या धर्मशास्त्र में जो दो बातें हैं, उनके दरम्यान जो तमीज़ी क़ुब्बत काम करती ही, उस क़ुब्बत तमीज़ी के उभार में जो अक़्स इन्सान के क़ल्ब पर पड़ता ही, उस अक़्स की हम यहाँ हैवत या ख़ौफ़ इलाही कह सकते हैं। मसलन हुक्म यह है कि ऐसा काम करना चाहिए, अब उसकी ज़िद्द भी सामने मोज़ूद है, फलाँ काम जायज़ नहीं है, तो इन दोनों हालतों की तमीज़ से एक हालत ख़ौफ़ की उस वक़्त पैदा हो जाती है।

यह बात निहायत नाज़ुक़ है कि हम उसको तहरीर (लिखावट) और तक़रीर (बयान) में नहीं ला सकते। अलबत्ता यह कह सकते हैं कि बाज़ सालिकों (पन्थाइयों) को ऐसे ख़ौफ़ और हैवत क्र तारी होते वक़्त यह तफ़सीलवार (ब्योरेवार) तमीज़ हो जाती है कि किस मंशा के ख़िलाफ़ हुक्म मुझसे क़सूर हुआ जिससे हैवत तारी हुई। और बाज़ सालिकों को हैवत और ख़ौफ़ तारी तो रहता है लेकिन तमीज़ किसी बात की नहीं होती कि क्यों ऐसा ख़ौफ़ तारी है।

अगर हर वक़्त और बिला सबब के ख़ास मुद्दत तक ऐसी हालत रहे जिसमें तफ़सील मालूम न हो, इस अमर की दलील कि परमात्मा की तरफ़ से एक क़ुब्बत असली ख़ौफ़ की उभर आयी है जो सिर्फ़ जायज़ बातों की तरफ़ मायल रखती है और नाज़ायज़ बातों की तरफ़ किसी न किसी तरह रुजू नहीं होने देती है। सालिक को मालूम यह होता है कि इमदाद ग़ैबी है, जिसकी वजह से मैं इस बुरे काम से बाज़ रहा, हालाँकि यह वही ख़ौफ़ की एतदाली हालत या क़ुब्बत है जो इमदाद ग़ैबी (ईश्वर की मदद) की शक्ल में काम देती

है। पस यह क़ुब्बत और हैबत आपके लिए एक नियामत ख़ुदाबन्दी है जो क़ाबिल शुक्र है। और अगर यह नहीं है तो ऐसी हैबत और ख़ौफ़ के मुन्तज़िर (इंतज़ार करना) रहना चाहिए।

।।।।। ज़िक्र (सुमिरन) और फिक्र (मनन) की बाबत मेरी राय यह है कि इस शैर पर अमल करो :

बनफीये खुद जिगर ख़स्तम व अस बातश कमरबस्तम

चु अज़मानी ख़बर गश्तम नउ आमद न मन रफ़्तम

जिस मुक़ाम पर कि आजकल गरमी और जोश सा रहता है, वह हालत क़ाबिल शुक्र है और इस पर मुतमईन (संतुष्ट) रहिये।

ज़्यादा तादाद की ज़रूरत ऐसी नहीं है, अलबत्ता ।।।।।।।। में दो तीन साहबान की हालत निहायत उम्मीद

अफ़ज़ा (आशावर्द्धक) है और यही काफ़ी है। एक शेर चाहिए, बहुत सी भेड़ों से मतलब नहीं। जब जब जो काम सामने सहल या मुश्किल आता है और आयेगा उसकी निस्बत यह ख्याल करो कि बुज़ुर्गान के तुफ़ैल (महापुरुषों की कृपा से) ईश्वर सब पूरे कर देगा। ; कारसाज़े मा ब फ़िक्रे कारेमा '।

फ़तेहगढ़

१८ अक्टूबर १९२७

||||||||||| पहले कार्ड में लिखा था कि तबियत नहीं लगती है, दो चार मिनट बैठ कर तबियत उचाट हो जाती है। बजिन्सहू यही हालत मेरी भी है। अगर आध घण्टा बराबर बैठा रहूँ तो फिर तबियत इस क़दर लगती है कि घण्टों का वक़्त ख़तम हो जावे। अलबत्ता अगर दूसरा शख्स फ़ायदा लेने की गरज़ से आ जावे, और फिर बैठूँ तो फौरन तबियत रुजू हो जाती ही। पस मैने तो यही तरीक़ा बेहतर और सहल अख़्त्यार कर लिया है कि दूसरों के साथ बैठ जाता हूँ। और अगर तनहा बैठने का इत्तिफ़ाक़ दस रोज़ तक हो जावे, तो तबियत ग़ायब रहेगी, लिहाज़ा तुम भी यही आज़माओ।

----- ऐसे शख़्स जो ख़ौफ़ और किसी बहाने को सामने रख कर फ़क़ीरी पर इलज़ाम लगते हैं उनके कहने का हम कुछ बुरा नहीं मानते क्योंकि वह दरअसल हुनर को नहीं देखते। उनको महज़ ऐब सुझाई देते हैं और यही उनका काम है। यह बात ज़रूरी है कि जिस क़दर सौहबत ज़्यादा रखोगे उसी क़दर आदतों और चाल-चलन का असर पड़ेगा, यह ज़ाहिर बात है। जब मौक़ा हो तब कभी-कभी ऐसा कर सकते हो, मुज़ायक़ा नहीं। मुतवक्कुल (भरोसा करना) और तायब(भयभीत) होने की हालत के लिए रफ़्ता-रफ़्ता मौक़ा आ जायेगा और यह मौक़ा ख़ुद-ब-ख़ुद आ जायेगा, यह मेरी आजमाई हुई बात है। इत्मीनान रखो, जो कुछ तुन पर आजकल मामलात गुज़र रहे हैं, मुमकिन है कि एक क़िस्म के तप हों, और बिला तप के चीज़ मुसफ़्फ़ा (शुद्ध) और साफ़ नहीं होती। ख़ुलासा यह है कि जो ख़ुद -ब-ख़ुद होता जावे उसको करते जाओ और देखते जाओ। अज़ख़ुद सब मामलात दुरुस्त हो जावेंगे, काविश (परेशानी) की ज़रूरत नहीं है,

फ़तेहगढ़

२८ मार्च १९२८

।।।।।।। क्या नौकरी और क्या रोज़गार तिज़ारत वगैरह, सब में एक एक क़िस्म का इज़तिराब (परेशानी) रहता है । और दिल शान्त है तो सब मामलात ठीक हैं। हरचन्द समझाया मगर इज़तिराबी (परेशानी) न गयी। इसलिए क़ुदरत ने तजुरबे का सामान किया। गुलिस्तां की एक हिक़ायत शायद आपको याद होगी कि एक बादशाह अपने अमीरों के साथ तफ़रीह के वास्ते नाव पर दरिया की सैर को गया और साथ में एक नौकर को नाव में सवार कर लिया। उसने नाव का सफ़र कभी नहीं किया था। रोने और चिल्लाने लगा । हर चन्द तदबीरें कीं, मगर कारगर नहीं हुईं। बादशाह का ऐश और तफ़रीह सब खाक़ में मिल गया। आख़िरकार एक वज़ीर ने एक तदबीर की, कि उसको दरिया में ढ़केल दिया। जब दो चार गोते उसको लग गए, तब बाहर निकाल लिया और तब वह निहायत शांति के साथ बैठा रहा।

यह वाक़यात सब ख़्वाब व ख़्याल की तरह हैं। क़ुदरत अपने तमाशे दिखलाती है। जबकि पीराने उज्ज़ाम तुम्हारे मुहाफ़िज़ (रक्षक), ख़ुदा मददगार, तो फिर आपको डर काहे का। लेकिन आप थे कि हर वक़्त शाकी (शिक़ायत करने वाले) और बेज़ार। भाई साहब ! इस दुनियाँ के तबक़े में रहकर कोई महफ़ूज़ रहा है ? बेलाग (अछूता) चले जाना एक किस्सा कहानी है :

शेर - *दरमियाने क़ार दरिया तख़्त बन्दम करदई*

बाज़ मी गोई कि दामन तर मकुन होशियार बाश

अर्थ - मुझको गहरी नदी में तख़्ते से बांधकर फेंक दिया है और हिदायत यह है कि कपड़े तर न होने पायें । यह कैसे हो ?

भला यह कब मुमकिन है कि हर वक़्त काजल की कोठरी में रहें और महफ़ूज़ (बचे) रहें । तमाम ।।।।। अच्छे ख़ासे डाके मारते रहते हैं, लेकिन तमाम उमर कोई भी ज़द (हानि) उनको नहीं पहुँचती बरख़िलाफ़ इसके जो निहायत एहतियात से ज़िन्दगी बसर करना चाहते हैं, उनको क़दम क़दम पर ठोकर !

ईश्वर पर भरोसा चाहिए, और अपने मक़दूर भर (भरसक) फ़रायज़ (ड्यूटी) को नेक-नियती और सरगर्मी से अंजाम देना चाहिए। इसके अलावा अगर कोई खिलाफ़ गुफ्तगू भी करे, तो आदत चुप रहने की और बहस मुबाहिसा न करने की डाल लेना चाहिए। अपना काम किये जाओ और किसी से कुछ मतलब न रखो।

---

(७१)

फ़तेहगढ़

४ अगस्त १९२८

।।।।।। यह भी एक दुनियाँ का तजुरबा है और एक तरह का तप है, अब जिस्म के तप की कोई ज़रूरत नहीं। इसमें सब बातें कट जाएँगी और जामा किताब (सब बातें) ठीक हो जायेगा। अपनी तबियत से और क़ुदरत से जो रास्ता सामने आ जाय, वह ही मुनासिब है। मेरा हमेशा तजुर्बा है राज़ी ब रज़ा रहना।, यह भी राह सलूक की एक मंज़िल है और आख़िरी मंज़िल है। अगर बन पड़े तो अच्छा है, वर्ना फिर अपना नफ़्स जो इज़ाज़त दें।

---

(७२)

फ़तेहगढ़

२९ अक्टूबर १९२८

।।।।।। आपने जो ख़्वाब देखा है, शुक्र है की पीर की दो उँगलियों में ही तक़लीफ़ है। बाक़ी तमाम जिस्म और रूह साफ़ है। ख़फ़ीफ़ सी तक़लीफ़ दुनियावी तफ़क्कुरात (फ़िक्र) की कभी कभी उठ आती है, वह भी शाज़ो नाज़िर (कभी कभी) वह सब ईश्वर दूर कर देते हैं , और बाक़ई मुझको आज तक कोई तक़लीफ़ नहीं हुई। जब ज़रूरत होती है, पहले से इन्तज़ाम हो जाता है। मेरा पहले से फ़िक्र करना बेकार होता है और यह तक़ाज़ाय बशरियत (इंसानियत का तक़ाज़ा) है, और मुमकिन है कि अब तक यह नुक़्स बाक़ी हो, जो आपने मुलाहिज़ा फ़रमाया है। मालूम हो कि आपको अहसास मौहब्बत का है और यह काफ़ी है। इस अहसास ही से सब काम ईश्वर परमात्मा तय कर देंगे।

||||| अगर तबियत रागिब नहीं होती है, तो मुज़ायका नहीं है। कभी कभी ऐसा मुझ पर भी हो जाता है। दूसरे वक़्त में ऐसा न होगा। हमेशा एक सी हालत नहीं रहती है। दूसरों को तवज्जोह देने में कब्ज़ नहीं रहता है, इसलिए ईश्वर के भरोसे पर तबज्जोह देने में पहलूतिही (कमी) न करो। अगर तबियत मुखातिब न होती हो तो किसी शख्स से गाना सुनो और उस वक़्त तबियत को रुज़ू करो। यह मतलब नहीं कि कोई गाने वाला ही हो बल्कि कोई न कोई ज़ोर ज़ोर से कुछ लहज़े का साथ पढता रहे। बाक़ी हालत बदस्तूर हैं।

---

(७३)

फ़तेहगढ़

१ मई १९२९

||||||| परमात्मा का शुक्र है कि इस क़दर ज़ल्द तरक़्क़ियात (तरक़्क़ी, उन्नति) हुई है। ईश्वर परमात्मन उनको इस्तक़लाल (मज़बूती) अता फ़रमावें । यह सब बातें अभी क़ाबिल एतबार नहीं हैं, सब हवाई हैं। ईश्वर इस्तक़लाल और मौहब्बत अता फ़रमावें । अगर |||| का सत्संग आजकल तब्दीली की हालत में है, तो यह कोई ताज़्ज़ुब की बात नहीं है। चूँकि अभी तक सब के मामलात अक्सी और माद्दी हैं और प्रकृति की तब्दील होने वाली हालत है, लिहाज़ा उसमें हर क्षण तब्दीली है । आज कुछ है कल कुछ। अगर यह मुस्तक़िल मामला हो जावे, तो क्या कहना है। इसके वास्ते अभी बहुत वक़्त दरकार है ।

अक्सर बैत (दीक्षा) के बाद लोगों को बहकते हुए देखा गया है । बहुत कम ऐसे हैं जो बैत के बाद न बहके हों, और पहले से ज़्यादा पुख़्ता हो गए हों। एक झटका ज़रूर लगता है । इसलिए मैं गुरेज़ करता था, ख़ैर । अलबत्ता, ताज्जुब तो इसका है कि निफ़ाक़ (झगड़ा) क्यों हो गया ? ऐसी ख़बर दूसरे मुक़ामात से भी आयी है, और इस मर्तवा भण्डारे के बाद ही ऐसी खबरें मिली हैं । अब की मर्तबा चन्द बिद्दतें (झगड़े, बुरी हरक़तें) हुईं, मसलन तस्बीर का फ़रोख़्त होना, चन्दे वग़ैरा का बुरे तरीक़ों से बसूल करना, वग़ैरा। मुमकिन है कि इसकी नहूसत (अपशकुन) हो । यह सब बातें हमारे तरीके के बरख़िलाफ़ हैं । क्या करें कि शैतान अपना अमल दख़ल करता ही है। दुआ कीजिये कि हम सब राहे-रास्त पर रहें ।

(७४)

फ़तेहगढ़

१७ अगस्त १९२९

।।।।। अगर तनहा बैठने को तबियत नहीं चाहती तो कोई हर्ज़ नहीं है, ख्याल तो बाक़ी रहता है। बज़ीफ़ा (जप) को अगर तबियत मायल (प्रवृत्त) नहीं होती, लेकिन उसको तो ज़बरदस्ती पढ़ लेना चाहिए। ईमान और इस्तगना (संतोष) अच्छा है, लेकिन आगे चलने का इरादा ज़रूर रखना चाहिए।

---

(७५)

फ़तेहगढ़

१२ नवम्बर १९२९

।।।।। आपने जो हालत अपनी लिखी है सैर नफ़्सी (मन की सैर) की है। इसमें फ़ना (लय), इज़्महलाल इस्तहलाक (मन, आपा और अहँकार का ढीला होना) , शिकस्तगी (प्रेम के बस टूटने वाला मन), नाबूदगी (अपने को कुछ न समझना) और नेस्ती (कुछ न होना) लतीफ़ा नफ़्स (आज्ञा चक्र) के मुताल्लिक़ है और हुज़ूर (सीधी, लगन) जमैयत (एकाग्रता), तौहीद वजूदी(एकैशवरवाद) शौक़, इज़्तिराब (परेशानी), सोजिश (प्रेम की आग) आनन्द वग़ैरा लतीफ़ा क़ल्ब (ह्रदय चक्र) में होती है। अलहम्दोलिल्लाह की सैर लतीफ़ा क़ल्ब ख़त्म हुई मालूम होती है। मौहब्बत का जज़्बा भी लतीफ़ा क़ल्ब का शोबह (शाख) होता है। नुक़्स से ख़ाली कोई बशर (आदमी) नहीं है। यह सिर्फ़ ज़ात वाहिद (सत्पुरुष) की है, जो मुनज़्ज़ह और मुबर्रा (पाक व साफ़) है।

अगर मेरे पास भी ज़्यादा रहने का इत्तिफ़ाक़ होता तो मुझमें दूसरे क़िस्म के नुक़्स निगाह में आ जाते। मगर असल मौहब्बत का जज़्बा तो यह है कि दोस्त के सब ऐब और नुक़्स हुनर ही नज़र आयें। यह भी हो सकता है कि जो ऐब नज़र आते हों, वह आपके लिए एक क़िस्म की हिदायत हों, क्योंकि अक्लमंद जो ऐब मालूम करें वह अपने आप में नहीं दाख़िल होने देते हैं।

यह भी हो सकता है कि मुर्शिद की तालीम इस तरह पर होती है कि जो ऐब दूसरों से छुड़वाने होते हैं उनको अपने ऊपर तारी करते हैं और ज़ाहिर में मुरीदैन (शिष्यों) को क़सदन (जान-बूझकर) दिखलाते हैं जिनसे उनको इबरत (सबक़) हासिल हो।

---

(७६)

फ़तेहगढ़

२७ नवम्बर १९२९

।।।।।।। आपको ग़ालिबन मालूम नहीं है कि दूसरों की बुराई उसी वक़्त नज़र आती है, जब वही बुराई अपने आप में मौज़ूद होती है ।पस उस उसूल से जब मालूम हो कि फलाँ शख़्स में इस क़िस्म की बुराई है, फ़ौरन ही वह बुराई अपनी तरफ़ मंसूब कर लेना (लगा लेना) वाज़िब है। इस अमल का तमाशा चन्द रोज़ के बाद देखिये कि क़ुदरत से क्या नक्शा बदलता है। ख़्वाब की ताबीर (व्याख्या) जो कुछ हो, मगर यह शुक्र है कि उससे न तक़लीफ़ हुई और न ख़ौफ़ मालूम हुआ। और यही दरकार (चाहिए) था ।

---

(७७)

फ़तेहगढ़

१३ जनवरी १९३०

।।।।।। आपने जिस क़दर लिखा है, वह सब वाक़यात दुनियाँ के हैं। लेकिन यह जुमला (वाक्य) कि मुझको ईश्वर पर कुछ विश्वास नहीं, बहुत खटका। अगर इसका यह मतलब है कि, ईश्वर कोई चीज़ नहीं है और न वह कुछ कर सकते हैं तो कुफ्र (जो ग़लत को सही मानें और सही को ग़लत) और अलहाद (नास्तिकता) की हद है। और अगर यह मतलब है कि आप में इस क़दर विश्वास की ताक़त नहीं हुई है,जिससे मालिक की मौज़ होने का विश्वास क़ायम हो जावे, तो अभी पुराने संस्कार दूर होने पर नहीं आये हैं। सत्संग और तालीम तो सबके वास्ते एक ही हैं। आपको बाबज़ूद कोशिश के जो बात दरकार है अगर पैदा न हो सके तो यह सब वक़्त के मातहत है। जब वक़्त आयेगा, ख़ुद हो जायेगा। इत्मीनान कीजिये ।

---

(७८)

फ़तेहगढ़

२२ सितम्बर १९३०

।।।।।। मैं हर हालत में ख़ुश हूँ और वाक़ई तौर पर ख़ुश हूँ। मजबूरी और लाचारी से ख़ुश होना दूसरी बात है। मुझको तो बतुफ़ैल पीराने- उज़्ज़ाम (गुरुओं की कृपा से) बफ़ज़्ल ख़ुदाबन्दी (ईश्वर की कृपा से) इस वक़्त

कोई तकलीफ़ सिवाय इसके कि जब जिस्म में कहीं कोई तक़लीफ़ और दर्द हो, कुछ व्यापता नहीं है। एक सुस्ती और लापरवाही की हालत है जिसका कि लाख लाख शुक्र है। ||||||||||| की फ़िक्र इस वक़्त जदीद (नई) नहीं है, उनको तो हमेशा और हर वक़्त एक न एक झगड़ा लगा ही रहता है और वह ख़ुद भी ज़बरदस्ती पैदा भी करते रहते हैं, यह उनकी प्रकृति है और इसमें चारा नहीं। ईश्वर अपना रहम उनपर फ़रमावें। उनके छोटे भाई निहायत ख़राब हालत उनकी लिखकर भेजते हैं।

---

(७९)

फ़तेहगढ़

५ अक्टूबर १९३०।

||||||| याद का क़ायम रहना काफ़ी है। यह हालत क़ाबिल शुक्र है, जो एक न्यामत है। अगर यह पैदा न हो तो फिर तरीक़त (सत्संग, अभ्यास, रास्ता) से फ़ायदा ही क्या हुआ ? इस हालत में उस परमपिता की याद भी अदब लिहाज़ से बाक़ी रह जाती है। दीगर तरीक़ों में यह अदब ग़ायब हो जाता है जो क़ुफ्राने-न्यामत (नियामतों को न मानना या उनका आदर न करना) और कुफ्र की हद तक पहुँचता है। परमात्मा इस बेअदबी से महफ़ूज़ रखें। जब हाजतों की चाह दिल से कम होगी और दुनियाँ, बल्कि दुनियाँ के लोगों की वक़त दिल से उठ जावेगी, तब बेख़ौफ़ी भी आ जावेगी। यह सब उसके हाथ में है। बतुफ़ैल पीराने-उज्ज़ाम किसी वक़्त यह भी हो जावेगा, इन्तज़ार रखना चाहिए। जोश का पैदा होना (प्रेमावेश) मुब्तदी (नौसिखिया) की हालत है, मगर उसका ज़ब्त रखना अच्छा है, क्योंकि अभी तो बहुत काम करना है। बिला जिस के काम नहीं हो सकता। जोश पैदा हो जाने का इरादा और ख़्याल रखिये और हिम्मत बांधने से इन्शाअल्लाह ||||||||||||हो जाता है।

---

(८०)

फ़तेहगढ़

९ दिसंबर १९३०

||||||||||||||||| जो मसलहत उसकी है, वह ही बेहतर है और बेहतर मौक़े को वह ही जानते हैं। कागज़ात कानपूर में आ गए होंगे। मैं तो यह चाहता हूँ कि जो कुछ पेट में है सब निकालकर बाहर रख दूँ। मगर हिम्मत ही हिम्मत है। असबाब (कारण) और हालात की तंगी से ख़्वाहिश के मुताबिक़ इज़ाज़त नहीं मिलती। जो कुछ

बन सकेगा वह लिखूँगा। थोड़ा हो, मगर कारआमद (काम में आने वाला) और मुफ़ीद हो तो काफ़ी है। समझदार के लिए इशारा काफ़ी होता है। आपकी ग़ैर मौज़ूदगी से जल्से की हालत अबतर होने (गिर जाने) का एहतिमाल (डर) है लिहाज़ा मैं बिरादरम ।।।।। को अपनी और बुज़ुर्गों की तरफ़ रुज करता हूँ कि वह इस काम को आपकी ग़ैर-मौज़ूदगी में अपने हाथ में ले लिया करें। परमात्मा बतुफ़ैल पीराने-उज्ज़ाम (गुरुओं की कृपा) उनको हिम्मत इस्तक़लाल (पुष्टता) अपनी दरगाह (दरबार) से मरहमत (कृपा) फ़रमायें। आ अज़ीज़ मज़कूर ग़ालिबन अब लड़कपन के उस थोड़े से हिस्से को जो अब उनमें बहुत थोड़ा बतक़ाजाय उमर (आयु के अनुसार) बाक़ी रह गया है निकालकर विक़ार (रौब) की हालत को क़ायम कर लेंगे। ईश्वर उनकी मदद करे। बिरादरम ।।।।।।। इस अम्र की तरफ़ मुस्तैदी और क़ाबिलियत ज़रूर रखते थे, मगर अफ़सोस कि उनके वालिद साहब की पाबन्दियों और दिल की तंगी और जगह की तंगी और खानगी पेचीदगियों (कुटुम्बी झगड़े) के बायस मेरी मसलहत ने मुझको बिलफ़ेल (अभी) यह इज़ाज़त नहीं दी कि यह भार उनके ज़िम्मे डाल देता। परमात्मा की ज़ात से उम्मीद है कि इससे ज़्यादा बेहतर सूरत से वह बहरावर होंगे (फ़ायदा उठायेंगे)।

---

(८१)

फ़तेहगढ़

२८ अप्रेल १९३१

।।।।।।।।।।।। बेहतरी इसी में है कि पीराने- उज़्ज़ाम की मौहब्बत रोज़ ब रोज़ ज़्यादती पर रहे और उनके इत्तबाय (अनुगमन) के लिए तबियत मुतवज्जह रहे, तो यह बरक़त का सबब होगा। बक़ीया (शेष) हालात और क़ैफ़ियत सब अपने अन्दाज़ लगाने के लिए है और बस। अब अगर इत्तबाय है तो सब कुछ वरना तमाम कैफ़ियत बेकार है। जो हालत आपने लिखी है वह सब फ़ना (लय) और फ़नाय फ़ना (लय की भी लय अर्थात लय को भी भूल जाना) पर दलालत करती है। उस पाक परवरदिगार का शुक्र वाजिब है। मेरी जिस्मानी हालत बहुत कमज़ोर और रोज़ बरोज़ कमज़ोर होती जाती है। लाज़िम है कि एक रोज़ सवारी का घोड़ा (शरीर) ज़ईफ़ (बृद्ध) होकर अपना काम मंसबी छोड़ दे। जो उसकी मंशा है उसी पर राज़ी रहना है। फ़िलहाल ४ मई को अगर ईश्वर ने चाहा तो सिकन्द्राबाद जा रहा हूँ और चन्द रोज़ आब-व-हवा तब्दील करूंगा लेकिन सब अमूर (काम) उनकी मर्ज़ी पर मुनहसिर हैं। बंदा आसी है।

(८२)

फ़तेहगढ़

९ जून १९३१

मिलने का इरादा करना भी लवाज़माते - मौहब्बत से है, दुनियाँ की पाबन्दियाँ इज़ाज़त दें या न दें।

---

(८३)

फ़तेहगढ़

२६ मई १९३१

।।।।।। ज़िक्र (शब्द का जारी होना) शुरू हो जाना एक अमर (अभ्यास) तो ज़रूर है, मगर जब यह मुक़द्द्मा इस्तक़ामत (पुष्टि) की शक्ल अख़्त्यार कर ले। और फिर अगर लताफ़त न हुई (आनंद न आवे) तो कुछ काम का नहीं, इस्तदराज होगा, और लताफ़त बिला शिर्क (अविश्वास) दूर हुए हो नहीं सकती।क़रीब क़रीब यही हाल सब लोगों का बल्कि ज़्यादा लोगों का है। गो लतायफ़ (चक्र) जारी हों मगर हक़ीक़ी धर्म पर न चलते हुए और शिर्क और कुफ्र की हद में क़याम करते हुए लताफ़त और असलियत कहाँ ?

---

(८४)

फ़तेहगढ़

१५ अप्रेल १९३१

मेरी तन्दरुस्ती की हालत जैसी कि तुमने जल्से के वक़्त देखी थी अब बेहतर है, ताक़त भी है और पेशाब आना भी मामूली है। मैं उस वक़्त रूहानी हिम्मत से काम कर रहा था और एक वक़्त भी काम से खाली नहीं था। इस सूरत में सिवाय इमदाद (मदद) पीराने -उज्ज़ाम (गुरुजनों) और खुदाबन्द के कोई ताक़त ऐसी नहीं थी जो इस तरह हर वक़्त काम कराती।

इंटरव्यू (interview) के लिए अचकन वगैरा की पोशाक में जाइये, आपका जिस्म हरगिज़ कोट पतलून के क़ाबिल नहीं है, बहुत बुरा मालूम होगा और हैट हरगिज़ न लगाईयेगा। बिस्मिल्लाह कह कर जाइये , वह मालिक है। उसकी जो मर्ज़ी होगी वह होगा और सब अच्छा ही होगा। उन्हीं की मर्ज़ी कामयावी है।

अगर इंग्लैण्ड जाना होगा तो जहाँ तक मुमकिन है यही लिबास रखना, वहाँ इसकी बड़ी इज़्ज़त है। और अंग्रेजी पोशाक को तो वहाँ कोई पूछता भी नहीं है। परमात्मा तुमको कामयाब करें, यही प्रार्थना और तमन्ना है।

---

(८५)

फ़तेहगढ़

८ मार्च १९३१

।।।।।। मेरी तबियत बवजह दर्द दाँत व सर ग़ालिबन एक माह से बराबर ख़राब है । हालाँकि सफ़र वग़ैरा में भी गया , हर जगह शिरकत भी की, मगर कराहियत (तकलीफ़, मजबूरी) के साथ ।

आपने जो लिखा है कि आपको ख़त डालने में झिझक है, उसकी हक़ीक़त यों है कि अपने आपको कोई ख़त लिखकर क्या भेजेगा और ख़ुद अपने आप से बातें क्या करेगा। यह किस क़दर फ़नाइयत (लय) का साया है । मगर कुल्ली (पूर्ण) तौर पर नहीं । अपने आपको कोई यह नहीं चाहता कि मेरे ख़िलाफ़ तबियत मुझ से और किसी दूसरे शख़्स से कोई अमर (काम) सरज़द हो (बन पड़े) । इसलिए तबियत का तक़ाज़ा यह होता है कि अदब का लिहाज़ होता रहे और यह अदब और हया अपने आप से है न कि दूसरे से। यह मज़मून बारीक़ है ।

जिस क़िस्म के क़लक़ का आप ज़िक्र करते हैं वह तक़ाज़ाय फ़र्ज़ (duty) निस्बती लिहाज़ से है। आज़ाय शिकनी (शरीर में दर्द) के वक़्त पैर दावने को चाहना और मेरा इनकार कर देना इसी वजह से नहीं है कि मैं ख़िदमत लेना नहीं चाहता। बल्कि असल यह है कि पैर दववाने से मुझको एक क़िस्म की उलझन होती है ।

बातिनी इमदाद (अन्दरूनी मदद) का आप पर या किसी दूसरे शख़्स पर पहुँचाना मेरे इरादे के साथ है, लेकिन पहुँचना अख़्त्यार में नहीं है। बल्कि वह एक ज़बरदस्त ताक़त के मातहत है। असल मुतहर्रिक (हरकत करने वाला) और प्रेरक ख़ुद ज़ात-वाहिद मुक़ददस (ईश्वर) है और जहाँ फ़ैज़ पहुँचता है वह भी एक दूसरे क़िस्म की कशिश क़ुब्बत है, जो अपनी मौहब्बत और जज़बात (भावनायें) ख़िदमत से इज़हार कशिश बातिनी करती (अन्दर को खेंचतीं) है । यह इज़हार (सेवा, प्रेम इत्यादि) दर्मियानी (बीच की) कशिश और जज़बात

(भावनाओं) को उभार देती है , जो अपने वक्त और मौक़े पर दानिस्ता (जान में) और कभी ग़ैर दानिस्ता (अनजाने में) और ग़ैर अख़्तियारी (जो अख़्त्यार में न हो) तौर पर असल सिलसिला या जंजीर की तरह मायल होकर कशिशे-रब्बानी (ईश्वर की आकर्षण शक्ति) को लाकर मुरीद (शिष्य) के ज़र्फ़ में डाल देती है, जिसको फ़ैज़ बातिनी (फ़ैज़ जो अन्दर से आता है।) कहते हैं। इस दर्मियानी कशिश (खिंचाव) को मुर्शिद (गुरु) कहते हैं। आलम ख़्याल (ख़्याली तौर पर) के तीन मदारिज (दर्ज़े –stages) हैं। एक दर्ज़े में इल्म, आलिम और मालूम तीनों रहते हैं। दूसरे दर्ज़े में तीनों में से एक ग़ायब। अब दो चीज़ें जब बाक़ी हैं, तब तीसरी चीज़ दरमियान में हायल (रुकावट) नहीं, इसलिए वस्ल (मिलाप) है। लेकिन वस्ल कामिल नहीं, इसलिए कि वस्ल के होते हुए भी अभी हिज़ाब और शर्म बाक़ी है। यह भी एक क़िस्म की फ़नाइयत (लय) है मगर कामिल नहीं। इसलिए बेहिजाबी भी है और हिजाब व शर्म भी। दर्मियानी चीज़ में क़ुदरतन दोनों तरह के असरात बाक़ी रहते हैं, लेकिन तीसरे दर्ज़े की फ़नाइयत (लय) कामिल (पूर्ण) है जहाँ हिजाब और शर्म का नाम नहीं है, लेकिन हिजाब व शर्म अगर ग़ायब और मुज़महल (मिट जाये) हो जाया करे तो इख़लाक़ का सीग़ा मुरत्तब नहीं हो सकता (सदाचार का न रहना) है। इसलिए हिजाब और शर्म इस जगह अदब का लिबास (वेष) पहन लेती है और अपने काम पर हाज़िर आती है। *" अदब ताज़ीस्त अज़ लुत्फे इलाही "*। क़लक़ एक आला जरिया है ख़्याल की धार का और काफ़ी घनी होने के वास्ते जाग्रत अवस्था में नूर की धार आँख ही से निकलती है। पीर का उठना नूर के मुवक्किल और फ़रिश्ते से मुराद है और जिस्म मामूली तौर पर पड़ा हुआ नज़र आये तो जिस्म में मामूली माद्दे का हिस्सा होगा जिसकी वजह से वह ऊपर को न चढ़ सका। तवज्जह की धार अगर आगे की तरफ़ जाती है तो उसको वापस लाने की ज़रूरत नहीं है, उसका उभार मारा जायेगा लेकिन नाजिन्स की तरफ़ से हटा लेना चाहिए। नाजिन्स वह है जो तवज्जह को क़बूल न करे। अगर कोई शख़्स ऊँघने लग जावे तो मालूम हुआ कि उसने तवज्जह को क़बूल कर लिया, लेकिन वह ऊँघने वाला शख़्स अगर महज़ ऊँघता समझता रहा और उसके अलावा कुछ न समझा तो तवज्जह का असर बेकार रहा। लेकिन अभी ऐसे ही कार्रवाई रखिये, और तवज्जह को निहायत अटल और पुख़्ता होने दीजिये, ताकि किसी नाजिन्स के ज़द या वार में आ जाने का ख़ौफ़ निकल जाय-

ख़्वाबात (स्वप्न)

१) चटियल मैदान और वीरान जगह से मुराद अहाते-ज़ाती (अपना फैलाब surroundings) है। जहाँ मुतज़ाद (विपरीत) बातों के जमा होते हुए भी किसी का भी ज्ञान नहीं होता और ज्ञान न होते हुए भी ज्ञान मौज़ूद रहता है, वहाँ आनन्द और ग़ैर-आनन्द की कुछ क़ैफ़ियत नहीं। अँधेरे से मुराद अदम (न होना) और नेस्ती (न होना) है जो फ़ना और लय की अवस्था है। इस ख़ास अहाते-ज़ाती में नफ़्स का शायबा (नफ़्स की हालत पता नहीं चलती) नहीं होता, इसलिए उस मुक़ाम में आपकी क़ाबलियत अभी नफ़्स के साथ रहते हुए मेरी ज़ात में फ़ना होने की क़ाबलियत नहीं रखती, इसलिए मेरा इन्तकाल हो गया। ।।।।।। की तरफ इशारा करना इस अमर की दलील है कि जो वकीया हिस्सा नफ़्स का तुम में शामिल और बाक़ी है वह उनकी तालीम से मुकम्मिल हो जाय। हैरानी और फिक्र नफ़्स के शमूल (साथ) में रहती है। ज़ात के मुक़ाम में ख़्वाहिशात का अदम वज़ूद बराबर होता है जो ख़्वामख़्वाह हैरानी और तफ़क्कुरात से आज़ादी का बायस हो रहता है।

२) मालदार और दबदबा वाला नौजवान - नफ़्स है जो हमेशा जवान ही रहता है। नफ़्स अम्मारा (तमोगुण) नफ़्स लव्वामा (रजोगुण), नफ़्स मुतमैयना(सतोगुण) इन तीनों धार वाले नेज़े को त्रिशूल कहते हैं - इन तीन तरह के नफ़्स वाले नौजवानों को ही इन हथियारों से मारा जाता है। यानी उन्हीं की ख़्वाहिशों से उनको मारना। नफ़्स का एकदम ग़ायब हो जाना मग़लूब हो जाने से मुराद है और माफ़ी मांगने से मुराद आजिज़ हो जाना है, जो तुमको नहीं मूड़ सका यह पीराने -उज़्ज़ाम के वसीले और बरकत की वजह से है।

दूसरा हिस्सा

कॉलिज तुम्हारा अभ्यास का शरीर है। जहाँ मुख़्तलिफ़ क़िस्म की बदइख़लाक़ियों और अहंकारों के दबाये जाने और तरतीब में लाये जाने की तालीम हो रही है। तुम इन सब पर ग़ालिब होने की हैसियत से नफ़्से कुल हो। लड़का बहैसियत तालीमी सूरत होने के एक नफ़्स सिफ़त है जो मासूमियत (बचपन) के इज़हार (शक्ल , रूप में) नज़र आती है, यानी आपका नफ़्स बवजह शुद्ध और मासूमियत की सिफ़त के बच्चे की सूरत में ज़ाहिर हुआ है। अगर दलीलबाजी और हुज़्ज़त की सिफ़त रखता तो जबान और ज़ईफ़ इंसान की सूरत में दिखलाई देता। गंगा की धार प्रेम का जज़बा है। आपकी अनानियत (ख़ुदी) ने प्रेम का सहारा ले लिया और मुर्शिद की अनानियत में अपनी अनानियत को गुम करने का एहतमाम (इंतज़ाम) किया है। डूब जाना उसका अपने को

गुम कर देना और फ़ना कर देना है। वह नफ़्स अब मुर्शिद की नज़र में ज़ेर तालीम है और मुर्शिद की तव्वजह और फैज़ तेज आँच है और उसकी सोहबत चिता है। नफ़्से-कुल मौजूद है और मातहती ख़्वाहिशात की भी मौज़ूदगी है। पस अब देखो, कि तवज्जह ने असर किया और लड़का ज़िन्दा हो गया। ख़्वाहिशात से मंसूब नफ़्स मुर्दा था अब ज़िन्दा हो गया, प्रेम के जज़्बे ने उसको अज़सरेनौ ज़िन्दा किया। ' हरगिज़ नमीरद आ कसे कि ज़िन्दा शुद व इश्क़ '। जज़्ब की तवज्जह से और हरारत से उसका दिल गर्म हो गया था और जज़्ब की हद अब ख़त्म हो चुकी है। अब सलूकी क़ैफ़ियत की ख़्वास्तगी (इच्चुक होना) है। यह उसका पानी माँगना है। हमारे यहां पहले जज़्बे की जेहद तमाम कराके फिर सुलूक की तरफ़ वापस लाते हैं। दूसरे लोग (ख़्वाहिशात) आपकी तरफ़ देखते रह गए और आप चल दिए यानी अपने असल की तरफ़ रुजू हो गए, नफ़्स मग़लूब (विजित) और शुद्ध हो गया।

२- मैं जज़्बे की जेहद तमाम करके सुलूक के तबक़े में मौज़ूद था, बाद ख़त्म जज़्ब तुम वहाँ आ गये, मुझको कामिल सुलूक के तबक़े में देखते रह गये। मैं दोनों ज़ज़्वा और सुलूक की जेहदें तमाम करके अपने असल नुक़्ते की तरफ़ इन्तक़ाल (मर जाना) कर गया। आपकी जब सुलूक की मन्ज़िल खत्म हो जावेगी, आप भी इन्तक़ाल कर जायेंगे। ख़ुदा जाने कितने परदे ज़िन्दगी और मौत के हैं और कब तक के इन्तक़ाल करने अभी बाक़ी हैं। आज यह चन्द मिनट के अर्से में जवावात लिखे गये हैं। अब तबियत घबरा गयी है, फिर कभी लिखूँगा। इस वक़्त निब ( ) भी चिकना हो गया है , बड़ा ज़ोर पड़ता है, इसलिए मुल्तवी करता हूँ।

सालाना जल्से में ग़ालिबन आपकी मसरूफ़ियत (व्यस्त) होगी और इसलिए शायद शिरकत का मौक़ा न हो सकेगा। बेलुफ़्ती तो ज़रूर होगी मगर बन्दगी बेचारगी। ख़ैर, कोशिश करना।

---

(८६)

मैं विलायत जाने के मुताल्लिक़ इत्तिफ़ाक़ करता हूँ और मुझको बहुत उम्मीदें हैं। मुमकिन है कि जो मैं अर्से से ख़्याली पुलाव पका रहा हूँ उन सब का यही वसीला हो।ईश्वर सब जानता है मगर वह अपने बन्दों के दिल की पूरी ज़रूर करते हैं। आपकी तीरकारी (काफी असर आध्यात्म का) लग चुका है, अब वहाँ माद्दीयत और दहरियत की हवा नहीं लगेगी, बल्कि रूहानियत का झंडा नसब होगा। मैं ईश्वर से दुआ करता हूँ। आमीन।

अभी आप कमज़ोर हैं इसलिए मिहनत (रूहानियत) कम करें, जब तन्दरुस्त हो जायें, तब इख़्तियार है। मैं इस वक़्त ६०० कोस के फासले पर हूँ मगर दिल वहाँ मौज़ूद रहता है। सब लोगों और अहबाबों से ज़्यादा आपकी याद आया करती है और इसका सबब नहीं जानता, ईश्वर की मर्ज़ी। इस सफ़र में आपका ख़्याल हमेशा आया और आया करता है, इसका सबब तुम्हारी मौहब्बत है,

यह तो मुझको पहले से मालूम है कि तुम ईश्वर की तरफ़ से इस काम के वास्ते बनाये गये हो। मगर अभी चन्द रोज़ सब्र करो और किसी को तवज्जह न दो , जब तक कि ताक़त न आ जावे।

---

(८७)

फ़तेहगढ़

२० सितम्बर १९३०

बैत (अपने आपको बेच देना, अपने को सुपुर्द कर देना) के मानी जो आपके समझ में आये हैं वह हैं तो दरअसल यही, लेकिन जो परमात्मा निबाह दे। आपने निस्बत रवानगी ।।।।।।। वग़ैरा के बारे में लिखा है, वह इरादा आपका क़ाबिले-तहसीन (प्रशंसनीय) है। परमात्मा इस इरादे का आपको अजर (लाभ) दें। अब मैं आपको अपनी तरफ़ से हक़ देता हूँ कि जो मुनासिब अमल आपके हुस्ने तदबीर में आवे (आपके विचार में अच्छा लगे) वह कीजिये। आप ख़ुद समझदार हैं। जायज़ ज़रूरियात (necessities) मुस्तहक़ीन (रिश्तेदार) की पूरी करना ज़्यादा नेक अमल है। कुनबा और मुताल्लिक़ीन के फ़रायज़ निहायत अहम (ज़रूरी) हैं। वह भी अदा करना बड़ा फ़र्ज़ मंसूबी है। इसलिए मेरी तरफ़ से कारिन्दा बन कर, इस बड़ी मुहीम (कार्य) को सरंजाम दीजिये, सबसे पहले उनका हक़ है।

राह तरीक़त (मन का शुद्ध करना) पर चलना यह है कि 'तरीक़त बजुज़ ख़िदमतेख़ल्क़ नेस्त ' (लोक सेवा जो निस्वार्थ हो) और यही परमात्मा की पूजा की जान है और हक़ीक़त है। ख़िदमतेख़ल्क़ में तमाम उपासनायें खत्म हो जाती हैं। अब ख़िदमते ख़ल्क़ के लिए कौन-कौन सी ख़िदमत को चुन लेना चाहिए, उसकी निस्बत मैं पहले किसी ख़त में इशारा दे चुका हूँ। यानी जो काम मुझसे न हो सका उसको पूरा करना तुम्हारा काम है, और यही मेरी दक्षिणा के वास्ते असली और बेबहा (बहुमूल्य) नक़दी है। फ़ितरत (आदत) और ख़सलत को मौक़े -मौक़े और वक़्त वक़्त पर ख़ुद -ब-ख़ुद हाथ पकड़ने वाले तरमीम बदल करते रहते हैं। इसमें इस गुनहगार और आज़िज़ बन्दे का कोई अख़्त्यार नहीं है। मैं तमाम उमर इसी अक़ीदे और भरोसे पर रहा और आपको भी इसी

पर क़ायम रहना अच्छा होगा। ख्व्वावात सब मुस्तनद और नतीजाख़ेज़ हैं। इस सच्चाई में किसको यक़ीन नहीं हो सकता कि अब हम लोग कहाँ तक बैठे रहेंगे और जो काम हुआ है वह किस हद तक काफ़ी है, इसको परमात्मा ही जान सकते हैं। बहरहाल आप तुमसे मनचले नौजवान लोगों पर इसका बोझ और ज़िम्मेदारी डाली जा सकती है और यही हमेशा से दस्तूर चला आ रहा है।

।।।।।। मैं तो उस काम का क़ायल हूँ जो कभी निपटने पर न आवे और जिसका सिलसिला कभी ख़त्म न हो - और वह सिर्फ़ प्रेम है और मौहब्बत - और यह काम सबसे ज़्यादा देरपा (स्थायी), नतीजाख़ेज़ औ असलुलअसल (असल का भी असल) तक पहुँचाने वाला है । परमात्मा आप में इससे ज़्यादा प्रेम-भाव व अक़ीदत और हिम्मत अता फ़रमावे। आमीन ।

---

(८८)

फ़तेहगढ़

२३ अक्टूबर १९३०

।।।।। आपके मदारिज (दर्ज़े) में तरक़्क़ी हो। अगर ऐसे हालात कश्फ़ (खुलना) वग़ैरा के किसी बन्दे सालिक पर रूनुमा (ज़ाहिर) होता हैं तो उसका इज़हार (ज़ाहिर) नहीं करते। क्योंकि इस अमर के लायक़ उसी परवरदिगार की ज़ात है। यह क्या हुआ कि कभी दिल के आइने पर उसके जमाल व जलाल का परतौ (अक्स) ज़रा देर के लिए गिर गया। यह हालत दायमी (स्थायी) नहीं है और न इसका एतबार, इसलिए इस पर नाज़ाँ होना (घमंड करना) बेकार है। ज़्यादातर इस तरह के माकाशफ़ात (अनुभव) से अनानियत (अहंकार) और ख़ुदी को हरकत मिलती है, और इस हालत से पनाह (शरण) माँगना चाहिए। हमको तो यह लाज़िम है कि हम उसके ख़ाक़सार बन्दे बने रहें और अपना सर इज़्ज़ो -नियाज़ उसके दरबार में झुकाये रखें।, इसी में सलामती है। यह सब हालात और क़ैफ़ियत लमहा-लमहा (क्षण-क्षण) तब्दील होने वाली है। जो होता जाय वह देखते जाओ और उसकी दरगाह (दरबार) में शुक्र बजा लाते रहो ।

(८९)

फ़तेहगढ़

२५ अक्टूबर १९३०

||||||| नफ़्स (मन) की शकल साँप की है जिसको अहंकार या अनानियत कहते हैं। कोई मख़लूक़ (जानदार) इससे ख़ाली नहीं है। जब कि श्रीकृष्ण जी ने भी अपने नाग को नाथा था (काबू में किया था) । यह मरता नहीं बल्कि दब जाता है । फ़ानी (लय) हो जाने और फ़नाय -हक़ीक़ी (ईश्वर में लय) के हो जाने पर

मुर्दा-सा हो जाता है। तमाम बदन में यह मौज़ूद होता है । यह ग़नीमत था कि टांग में असर किया। मौलाना अब्दुलग़नी साहब का नफ़्स बालिश्त भर का पुतला है, जो उनका पाक और तरबियतयाफ़्ता (regulated) नफ़्स है। जब जलाये जाने पर यानी अग्नि प्रचंड करने पर मजज़ूब हो गया, तब उसने दूसरे के नफ़्स को पछाड़ कर ज़हर उतार दिया। यह उनकी निस्बत बातिनी है जो नक्शबन्दी और मुजद्दिदी है। नीम स्याह (आधा काला) और नीम सफ़ेद अपना सूक्ष्म शरीर है , लेकिन अब तक वह परदा है और ग़िलाफ़ है। अगर यह सफ़ेद हो जाय या स्याह हो जाय तो यकरंगा होगा। रास्ते की मन्ज़िलों और उसमें जो कुछ दीद हो (दिखाई दे) उसके मुलाहिज़ा में जो कुछ मालूम हो देखते जाओ लेकिन इल्तिफ़ात (परवाह, ग़ौर) न करो ।

---

(९०)

फ़तेहगढ़

२६ मार्च १९३०

||||| अँधेरे वग़ैरा में डर मालूम होता है । एक ख़ास कैफ़ियत है जो अक्सर अभ्यासियों को गुज़रती है। मुज़ायक़ा नहीं, जाती रहेगी ।

बख़िदमत श्री गुरु महाराज

अरज़ यह है कि मुझे जो हालात हाल में गुज़र चुके हैं और गुज़र रहे हैं। उनकी इत्तिला देनी ज़रूरी है। १ नवम्बर सन १९२९ को ८ बजे रात के एक अन्दरूनी हालत का उभार पैदा हुआ और इससे अपनी हालत का नक़्शा पेश नज़र आया। वह हालत हमातन (बिलकुल) और सरापा (सर से पाँव तक) थी। ख्याल उस हालत से मिलकर एक हो रहा था। या यों कहना चाहिए कि गर्क़ हो गया था और वह हालत अनामुराशिद अज़ सरेतापा (अपने आपको गुरु समझना, लगता था जो गुरु है वही मैं हूँ) का ख़्याल पैदा कर रही थी मगर जोश के साथ, यानी हर बात उसमें लय होकर असल हो गयी थी और अनामुरशिद का नारा लगा रही थी। हिम्मत बेशुमार थी और यह जज़्बात (भावनायें), मौज़ूद थे की हर काम कर सकता हूँ और अपने आप को क़ादिर (जी पर क़ाबू हो) व मालिक हर शै का समझता था। थोड़ी देर इस ख़्याल में महब (डूबा) रहा। मगर हद से ज़्यादा बाहिम्मत होने और जज़्बात उठने को मैने अहंकार समझा, इसलिए जिस हालत में कि मैं घुसा था निकलकर हल्के ख़्याल से कुछ देर इस हालत की तरफ़ रुज़ू रहा। बाद को खाना खा कर लेटा, क़रीबन १० बजे रात के मीराबाई का भजन गाने लगा ' मेरे तो एक राम नाम दूसरा न कोई ' फिर वही समाँ बँध गया। हालत मज़कूर (उक्त) दिन में अक्सर पैदा होती रहती है। मगर इस क़दर बेखुदी और गुमशुदगी (अपने को भूल जाना) नहीं होती , और न हालत खुलकर पेशे नज़र (सामने) उस दर्जे तक होती है। अलबत्ता जहाँ तक मेरा ख़्याल नाक़िस (तुच्छ) पहुँचता है ख़ुद फ़रामोशी (दीनता) महसूस होती है। हालत ज़्यादातर बेक़ैफ़ी (जिस में कोई क़ैफ़ियत न हो) और एतदाल की (बीच का) रहती है और फ़नाइयत (लय होना) का अहसास (भान) दिलाती है।

दीगर अम्र ज़रूरी जिससे मेरी इख़लाक़ी हालत रोशन हो जावेगी जनाब अक़दस (श्रीमान) को इत्तिला देने के लिए यह है कि घर में मैं इतना परेशान किया जाता हूँ कि बाज़ औक़ात घर से भागने की और बाज़ औक़ात सर फोड़ने की तबियत चाहती है हालांकि बेबस हूँ। घर पर पहुँचते ही कोई न कोई सूरत ऐसी अख़्त्यार की जाती है कि ख़्वामख़्वाह ग़ुस्सा महसूस हो या बेहयाई की सूरत अख़्त्यार की जावे। यही वजह है कि मेरी ग़ुस्से की आदत पड़ गयी है, जिसकी वजह से बहुत से नुक़सानात उठाये हैं। मसलन किसी चीज़ को तोड़ फोड़ करना वगैरा। ग़ुस्सा ज़्यादातर घर ही तक महदूद (सीमित) है। तनहाई (अकेले) में जब ख़ास ईश्वर की कृपा होती है तो चैन मिल जाता है। वरना कोई न कोई बात ऐसी पेश की जाती है कि जिसका मानना ख़िलाफ़

अक़्ल या ख़िलाफ़ तबियत हो जिसका न करना ही मसलहत हो। यह बातें ज़्यादातर ऐसे वक़्त होती हैं जिस वक़्त मैं कचहरी से वापस आया हूँ या किसी मेहनत से परेशान हूँ। किसी ने लिखा है कि -

ख़ाके वतन अज़ मुल्के सुलेमाँ ख़ुशतर

खारे सफ़र अज़ सम्बुलो रैहाँ ख़ुशतर

और यहां मज़मून है --

ख़ाके सहर अज़ मुल्के सुलेमाँ ख़ुशतर

खारे सफ़र अज़ सम्बुलो रैहाँ ख़ुशतर

ग़ुस्सा बहुत जल्द और ज़रा सी बात पर आ जाता है मगर उसका उबाल कम होने पर दिल में बुग़्ज़ (किसी के प्रति बुरा भाव) क़ायम नहीं रहता, बल्कि उस शख़्स के पाँव पकड़ने को तबियत चाहती है। घर पर ग़ुस्से की आदत हो जाने की वजह से तबियत कोई न कोई वजह ग़ुस्सा करने की तलाश कर लेती है। इससे चन्द माह पेश्तर यह बात बहुत कम हो गयी थी। अब यह बात ज़्यादा हो गयी है और तबियत में चिड़चिड़ापन पैदा हो गया है।

जबाब

फ़तेहगढ़

२७ नवम्बर १९२९

जो हालात उरूज (उभार) और तरक़्क़ी मदारज (दर्ज़े) की निस्बत तहरीर किये (लिखे गए) थे, वह अल्लाह मुबारक करे। वह अहंकार नहीं है , बल्कि हिम्मत अफ़ज़ा (साहस वर्धक) हैं। इनका शुकराना अदा करना चाहिए तो फिर अहंकार नहीं रहेगा। अगर ख़ुदा की तरफ़ मन्सूब कर लिए जावें, तो फिर ग़ुरूर कहाँ? क्योंकि वह तो ख़ुदा की तरफ़ से हैं। अपना उसमें कुछ नहीं। ' ई सआदत बज़ोर बाज़ू नेस्त, गर न बख़्शद ख़ुदाय बख़्शन्दह।' बेक़ैफ़ी की हालत अच्छी है और यह देरपा (टिकाऊ) होती है।

परेशान किया जाना अच्छा है। घर हिल्म (सहन करना) और बरदाश्त का स्कूल है। हमारे यहाँ इन बातों पर सब्र करना तप कहलाता है और जुम्ला अक़साम (प्रकार) के तपों से यह बालातर (ऊंचा) है। पस बजाय ग़ुस्से व ग़म के ग़ैरत अख़्त्यार करनी चाहिए। ग़ैरत कहते हैं उस जज़्बे को जिसमें दूसरों के कहने सुनने और मलामत करने पर यह मालूम होता है कि वाक़ई मेरा ही क़सूर है और फिर ज़ब्त कर लेना पड़ता है। औरों के वास्ते जंगल और तनहाई गोशानशीनी (एकांत),तहम्मुल (सहन) और बरदाश्त और दुनियां के ज़क़-ज़क़ बक-बक से रिहाई के असबाब (कारण) हैं। और हमारे वास्ते, घर वालों, दोस्तों, दुनियाँ वालों की झिड़कियाँ, ताने, मलामतें - रियाज़त (अभ्यास) और चिल्लाकशी (व्रत रखना) है। चिड़चिड़ापन दूर करें और सब्र अख़्त्यार करें।

इन्शाअल्लाह इसके बाद तसलीम और रज़ा भी आ जावेगी।

---

(९२)

फ़तेहगढ़

२० जनवरी १९३०

अल्लाहताला आप पर अपना फ़ज़्ल व करम शामिल हाल फरमाये और मरातिब आलिया (ऊंचे दर्ज़ों) पर पहुँचाये। मुझे किसी वक़्त यह ख़्वाहिश थी की मेरे अहबाब में से कोई भी ऐसे हो जायें कि अगर बुजुर्गाने सल्फ़ (पुराने महापुरुषों) के ख़ाकपा (चरण रज) न हों तो कम से कम मुझ आसी (गुनहगार) को बदनाम करने वाले भी न हों। अल्हम्दलिल्लाह पीराने-उज्ज़ाम (वंश के महापुरुषों) की बरक़त के तुफ़ैल से अब ऐसे आसार पाये जाते हैं कि जिन पर फ़ज़्ल इलाही (ईश्वर कृपा) शामिल हाल मालूम होता है और बहुत मुमकिन है कि उनमें से आप भी हों। यह सब पीरों का तुफ़ैल है लेकिन 'ई' सआदत बज़ोर बाजू नेस्त, गर न बख़्षद ख़ुदाय बख्शंदह' ।।।।। की सौहबत और मौहब्बत को ग़नीमत जानना चाहिए। यह उनका फ़ैज़ और बरक़त है। बाखुदा वह साहबे मौहब्बत (प्रेमी) हैं और मौहब्बत ही एक ज़िन्दा शै है। अल्लाहताला आपको और जुम्ला अहबाब को अपने ज़िल्ले आतफत में (कृपा की छाया में) रखें। अज़ीज़म ।।।।।। से बहुत उम्मीदें हैं। यह भी साहबे मौहब्बत हैं। अल्लाह का फ़ज़्ल अज़ीम उनको पीराने- उज्ज़ाम की मौहब्बत और साया नसीब फ़रमाये ताकि उनका मुहतरिम (रहम करने वाले) और क़स्द (इरादा) मुस्तक़िल (स्थायी) सूरत अख़्त्यार कर ले।

मुरीद ज़्यादा पैदा होते हैं और मुराद बहुत शाज़ और नादिर। इस ज़माने में तो मुरीद भी ख़ाल (कोई कोई) नज़र आते हैं। यह सब पीराने-सिलसिले का फ़ैज़ ही कि मुरीदों और यहाँ के शनासी (सत्संगियों) में इम्तियाज़ (फ़र्क़) नज़र नहीं आ सकता। वरना मुरीद होना बहुत मुशिकल है। जब कभी मिलने वालों को सौह्बत का असर या जज़्ब की हवा लग जाती है, तो बराये चन्दे (थोड़ी देर के लिए) चेत जाते हैं। और जब आँच मध्यम हो जाती है तो सरक जाते हैं और सत्संग में आना बन्द कर देते हैं। उनका ज़ाती लगाव और जज़्बा बराय नाम है। पस यही ग़नीमत है कि कभी जब लहर आ जाती है, लहराने लगते हैं। मर्द वह है कि बिला तहरीक के भी अपना क़दमे- हिम्मत (हिम्मत का पाँव) क़ायम रखे।

पण्डित।।।।।।।और दीगर असहाब की क्या शिकायत है। वह तो ।।।।।, चरस और गांजे के यार हैं। अगर इसका दौर है अंग संग हैं। (दमी यार किसके, दम लगाई और खिसके) जब फ़ज़्ल इलाही का दौर हो जाता है, उनको भी दौरा (fit) आ जाता है, और फिर अपनी असली हालत पर आ जाते हैं।

पण्डित ।।।।।। का क्या रोना है ? मैं ख़्याल करता हूँ कि साल भर में ख़ालिस तौर पर शायद दो माह का औसत होगा कि वह भड़क उठते हों और वह भी कहीं अख़बार की धुन से और कहीं ड्रामे की। खुलासा यह है कि जिसको वह (प्रभु) खींच ले वही कामयाब है। मैं और आप अपने हाथ पीटते हैं। जब वक़्त आयेगा, वह सब लोग भी रफ़्ता रफ़्ता राहे-रास्त पर आ जायेंगे। हर एक के जज़बात व संस्कार मुख़्तलिफ़ हैं और इसी लिहाज़ से सब के लिए अलहदा अलहदा वक़्त है।

हाल के डाक्टरान योरप ने यह तशख़ीस किया है कि अगर चेहरे पर काफ़ी बाल रहें (जिसको दाढ़ी कहते हैं) तो दाँतों के अमराज़ (रोग) को काफ़ी इमदाद (मदद) क़ुदरतन मिल जाती है। तक़लीफ़ात (कष्ट) कम हो जाती हैं। पस अगर आपकी तबियत गवाही दे और लोगों के तअन (ताने) और तशनीय की बर्दाश्त की हिम्मत हो तो बाल रखवा लीजिये।

पत्र हमराह डायरी फ़रवरी सन १९३० ई

अर्ज़ यह है कि इस माह में आलावा उन बातों के जिनकी इत्तिला बक़्तन फवक़्तन दे चुका हूँ और जो मुस्तक़िल होना साबित करती है, चन्द बातें जदीद (नई) पैदा हुई। " अहम ब्रह्म " या हमामनम की हालत रही और उसके वक़्तन फवक़्तन फिट आते रहे।

मैं अपने आपको राम, कृष्ण और दीगर बुज़ुर्गाने सल्फ़ (पूर्वजों) जिनकी खाक़ पाकी (चरण रज) व पाकीज़गी (पवित्रता) व बरकत की दुनियाँ में कोई चीज़ मुक़ाबला नहीं कर सकती, नहीं नहीं बल्कि फ़हम (अक्ल) व इदराक भी समझने से कासिर मज़बूर समझता था। जब किसी बुज़ुर्ग का तज़किरा (ज़िक्र) होता था तो मैं समझता था कि यह मेरा ही तज़किरा ही और इस ख़्याल में कोई शक व शुबहा पैदा नहीं होता। यह बात भी महसूस होती है कि यह मैराज (।।।।।।। लक्ष्य) नहीं है और तड़प या ख़्याल को इस वहम से आगे दौड़ाता हुआ पाता था। तड़प बदस्तूर थी। निस्बत आला का ज़ोर अक्सर महसूस हुआ और वह इस तरह पर कि जुम्ला बुज़ुर्गाने-वक़्त व नीज़ बुज़ुर्गाने -सल्फ व बन्दा आसीसे इस क़दर घना सम्बन्ध ही जैसे दो कटोरों का पानी एक कटोरे या गिलास में मिला दिया जावे और वह मिलकर एक हो जावे। बुज़ुर्गों की बरक़तें हर वक़्त बरसती हुई महसूस होती हैं और जब मैं अपने माबूद (ईश्वर) को तसव्वर (ख़्याल) करता हूँ तो उसको बन्दा आसी की याद में महब पाता हूँ। (ईश्वर मेरी याद करता है। बाक़ी हाल बदस्तूर।

पत्र हमराह डायरी मार्च सन १९३० ई०

फरवरी सन ३० में हमामनम (मैं वही हूँ) का ज़ज़्वा रहा। अब मार्च सन १९३० में ' हमाओस्त (सब मैं ही हूँ) का दम भरता रहा। हालत से हमा और बाहमा (मिले हुए और सबसे अलग) का अहसास होता है। जिसका तर्जुमा शायद ज़ैल (नीचे) के शेर से अच्छा होगा

गुलाले हिम्मते आनम कि ज़ेरे चर्ख कबूद

ज़े हरचे रग तअल्लुक़ पीज़ीरद अज़ ओस्त

कुछ दिनों से यही अहसास रहा कि जनाब अक़दस (हुज़ूर वाला) का असर सीधा (direct) मन पर सुधार के लिए पड़ रहा है और अब मन की हालत पेश्तर से बहुत अच्छी पाता हूँ। हालांकि नफ़्स अम्मारा (तमोगुण) का हल्का दौरा अब भी हो जाता ही। मगर वह एक या निस्फ़ (आधा) मिनिट से ज़्यादा नहीं रहता। तबियत का मेल व रुझान कुछ एतदाल (समअवस्था) की तरफ़ नज़र आता है। बेक़रारी हर वक़्त किसी न किसी शक्ल में रहती है। बाज़ औक़ात बहुत तेज़ हो जाने की वजह से तबियत अशान्त हो जाती है और विसाले -यार होने की

या मैराजे-तमन्ना (लक्ष्य को हासिल करना) पर पहुँचने की जल्दी पड़ी रहती है। मौहब्बत का दौरा व तअल्लुक़ लतीफ़ (सूक्ष्म सम्बन्ध) इस दुनियाँ ही में महदूद नहीं हैं बल्कि आलम अरवाह (महापुरुषों की आत्मायें) और बेशुमार बुज़ुर्गाने -सल्फ़ (पिछले महापुरुषों) से पाया जाना महसूस होता है। बुज़ुर्गाने-सल्फ़ से निहायत घना और सीधा (direct) तअल्लुक़ महसूस होता है और चश्मे -फ़ैज़ (फ़ैज़ का दरिया) जिस वक़्त मैं ख़्याल करता हूँ , ऊपर से रुजू (अपनी तरफ़ आता) पाता हूँ। अन्दर और बाहर दोनों एक ही सी हालत तारी रहती है। हर जगह हालत एतदाल (सम) छायी हुई मालूम होती है और यह अहसास होता है कि हक़ीक़त बेनक़ाब (खुलना, बेपर्दा होना) हो रही है। इस तरह पर कि जैसे मुश्क़ और गुल अपनी खुशबू देता रहता है बिला लिहाज़ इसके कि किसी शख़्स का दिमाग़ उनकी नगहत (सुगंध) से मुअत्तर (तर होना) होता है या किसी शख़्स की तबियत खुश होती है या नहीं। मेरी एक हालत यह पैदा हो गयी है कि ख़्याल में बुसअत (विशालता) बढ़ गयी है और उसका पसारा (फैलाव) बहुत दूर तक महसूस होता है जिसको कि मैने अपनी तंग नज़रों से ||||||||मान रखा है। और उस पसारे के अन्दर मख़लूक़ (जीव मात्र) की बहबूदी (भलाई) आफ़ात (दुखों) के बचाव, सरसब्ज़ी (फलना फूलना) अपना फ़र्ज़ मालूम होता है और तवज्जह का असर ख़ुद-ब-ख़ुद बे इरादा हो जाता है । जब मैं खामोश होता हूँ तो दिमाग़ से तवज्जह निकलकर उस ख़्याल के अहाते में फैल जाती हैं। वह तवज्जह बहुत soothimg (शांति दायक) होती है और वहाँ की ख़्याली ज़रूरत मुझ आसी की तवज्जह से पूरी होती महसूस होती है ।

---

(९३)

जबाब

फ़तेहगढ़

१२ अप्रेल १९३०

जुमला अनवार और तजल्लियात का दरूद रहमत इलाही है (प्रकाश की दीखना परमात्मा के अख्त्यार में है।) अभी इससे ज़्यादा नज़ूल रहमत (कृपा का उतरना) और अनवार और तजल्लियात के वारिद होने (ज़ाहिर होना) का इन्तज़ार है। यह हमाओस्त (सब वही है) की हालत दरमियानी (बीच की) मंज़िल है। इसको क़याम (ठहराव) नहीं है और न इस पर क़याम होना चाहिए। तौफ़ीक़ एज़दी (परमात्मा की कृपा)

अगर शामिल हाल है तो इन्शाअल्लाह इसके आगे क़दम रखने की ख़ुशख़बरी मिलेगी।, आमीन। बक़ीया साहबान या तो अपना हाल क़स्दन (जानकर) नहीं लिखते, या उन पर क़ैफ़ियात का अहसास (असर ज़ाहिर होना) नहीं होता या वह ज़ाहिर नहीं कर सकते, और इज़हार (ज़ाहिर करना) ख़्यालात की क़ाबलियत नहीं है। लेकिन मैं समझता हूँ कि उनको अहसास नहीं होता। ज़्यादातर लोग रस्म व रिवाज़ के तौर पर इस काम को किये चले जाते हैं। असल शौक़ और तड़प और बेक़रारी नहीं है वरना ज़रूर -बिल -ज़रूर उनको कैफ़ियात से आगाही होती चलती (हालत उतरती चलती) और हर रोज़ एक ताज़ा रूह उनमें फूंकी जाती। ख़ैर, यह भी ग़नीमत है कि लगे लिपटे तो हैं। यह हज़ार ग़नीमत है और काफ़ी है।

बिरादर अज़ीज़ ।।।।।।।।।।। घबरा जाते हैं। उनकी तस्सली करते रहना चाहिये । वह रक़ीकुल क़ल्ब कोमल ह्रदय जो जल्दी द्रवित हो जाय) आदमी हैं। ज़्यादा मुसीबत और गड़बड़ होने से उनकी तबियत मुन्तशिर (परेशान) हो जाती है।

---

(९४)

फ़तेहगढ़

२३-११-१९३०

अज़ीज़ेमन, दुआ।

ख़त मुफ़स्सिल तुम्हारा मिला । परमात्मा का कितना धन्यबाद है कि तुम रोज़गार से लगे हो । बी०ए० और एम०ए० हज़ारों लाख़ों की तादाद में बेकार रोटी को मोहताज हैं, और कोई पुरसाँहाल नहीं (हाल का पूछने वाला) है। हमेशा और हर वक़्त अपनी बाबत शिकायत करते रहना यह कुफ़राने नैमत (नैमत का ग़लत स्तेमाल) है। जो कुछ कि मुक़्क़दर में है वह मिल जाता है, ईश्वर देता है । और फिर रोना और हर वक़्त का, यह बहुत बड़ी बेअदबी है । अपनी हिम्मत को बुलन्द (ऊंचा) करो और हर हाल में ख़ुश रहने की आदत डालो । मैने आजतक तुमको कभी ऐसा नहीं पाया कि ईश्वर का शुक्रिया अदा करते, हालांकि मेरे मिलने वालों में से पचासों इस वक़्त ऐसे मौज़ूद हैं जिनकी बड़ी गृहस्थी है और बेकार हैं, महज़ रोटी के वास्ते न पैसा है, न ज़ेबरऔर न ज़ायदाद। ऐसी कम-हिम्मती से रूहानी तरक़्क़ी हरगिज़ नहीं हो सकती । ख़ैर , मैं जो इस वक़्त

कहना चाहता हूँ वह यह है कि तंग-दिल न बनो और आली ज़र्फी (ऊँचा इरादा) और बुलन्द हिम्मत (ऊँची हिम्मत) की तरफ़ निगाह डालो।

चूँकि तुमने लिखा था कि ख़त पढ़कर चाक कर डालना (फाड़ देना) इसलिए उसी वक़्त चाक कर दिया गया। और अब जो बातें तुमने उसमें लिखी थीं और जिनका कि जबाब मुझको लिखना चाहिये था, वह मुझको याद नहीं रहीं। मैं अब कमज़ोर और ज़ईफ़ (बृद्ध) हूँ। अक्सर बीमारी घेरे रहती है। मुझसे जो कुछ होता है हाथ पैर हिलाये जाता हूँ और तुम लोगों की बेहतरी की बाबत हिम्मत से और दुआ से काम लेता हूँ। मगर अफ़सोस आजकल के नौजबान लोग, कितना ही उनको उभारो वह बैठते ही जाते हैं और उठाने से नहीं उठते। जिन बातों को मना किया जाता है वही ज़रूर करते हैं। फिर बताइये कि इलाज और दवा क्या काम करे जब कि दस गुना ज़्यादा बद-परहेज़ी कर ली जावे।

रूहानी दर्ज़ों के तय करने में बुरी सौहबत सबसे ज़्यादा नुक़सान पहुँचाने वाली और नाकामयाबी का मुँह दिखलाने वाली होती है। उसको लोग ज़रूरी समझते हैं। अब जो कुछ हो वह हो। मैं अपना फ़र्ज़ जहाँ तक मुमकिन हो सकता है, अदा करता हूँ। बच्चों को दुआ और प्यार।

राक़िम - *रामचन्द्र*

---

(९५)

२९ अक्टूबर १९२८

सन्ध्या में अगर इधर-उधर के ख़्यालात आते हैं तो आँखें आधी खुली रखिये या किताबें देखने में मश्ग़ूल हो जाइये या आँखें बन्द न किया कीजिये।

---

(९६) फ़तेहगढ़

२४ मई १९३०

मैने तुम्हारे ख़त का जबाब नहीं दिया। यह आख़िरी ख़त सिर्फ़ मौलाना साहब की ख़िदमत में बगरज़ मुलाहिज़ा भेज दिया था। मैने यह ग़लती की कि जुमला (सब) ख़तूत (पत्र) नहीं भेज दिए। इसलिए मेरी राय में क़तई और साफ़ राय न दे सके होंगे। ख़ैर मुझको इत्तिफ़ाक़ है। कहीं-कहीं राय से क़दरे इख्तलाफ़ (फ़र्क़) है मगर जुज़्बी (आंशिक)। उम्मीद है कि आ अज़ीज़ इस हिदायत से फ़ायदा कामिल (पूरा फ़ायदा) उठायेंगे।

नक़ल ख़त जबाब क़िबला मौलाना साहब

जनाबे-वाला के इफ्तख़ारनामा (पत्र) का जबाब अर्ज़ है लेकिन चूँकि क़लम बरदाश्ता (वगैर सोचे) जबाब अर्ज़ किया जाता है मुमकिन है कुछ ग़लती हो जावे लिहाज़ा उसको जनाब दुरुस्त फ़रमा लें। उजलत (जल्दी) में जो फ़क़ीर की समझ में आता है अर्ज़ किया जाता है। बाक़ी वल्लाह -आलम (परमात्मा बहतर जानता है) बिस-सवाब।

अलहम्दलिल्लाह (परमात्मा मालिक) कि अज़ीज़ ||||||||||||का हाल क़ाबिल शुक्र है। वह सुलूक (रास्ता, पंथ) के मदारिज (दर्ज़े) तय कर रहे हैं। कभी चढ़ाव है तो कभी नज़ूल (उतार) उरूज और नज़ूल दोनों मदारिज (दर्ज़े) तरक़्क़ियात (तरक़्क़ी) है। हमामनम (मैं वही हूँ) और हमाओस्त (वही सब कुछ है) उरूज और नज़ूल के मुक़ामात हैं जिसकी इब्तिदा (आदि) विलायत सुग़रा (छटा चक्र) है। इसका मतलब यह है कि अज़ीज़ मज़कूर (उक्त) का क़दम (पाँव) दायरे बिलायत के अन्दर है।

रूह का सीपी और घोंघे चुनने से अगर अज़ीज़ का यह मतलब है कि आला तजल्लियात (ऊंचे दर्ज़े का प्रकाश) और अनवार (नूर) का ज़हूर नहीं होता तो यह बसावस (मन की वृत्तियाँ) हैं, इनको ला (नेति) कर तहत में फ़ना (लय) करना चाहिए। अदना आला (छोटा बड़ा) कुछ नहीं। " ऐ बिरादर बे निहायत दर्ग हेस्त।" हमारे नज़दीक सीपी और घोंघे कोई नहीं चुनता है बल्कि इब्तिदा (शुरूआत) मोती ही चुनने से होती है।

इब्तिदाये मां आखारे हर मुनतहीस्त

आखरे मां ज़ेबे तमन्ना तिहीस्त

अर्थ - मेरी शुरुआत वहाँ से है जहाँ औरों का आख़ीर है। मेरा आख़ीर वहाँ है जहाँ कोई इच्छा, यहाँ तक कि ईश्वर पाने की इच्छा भी बाक़ी न रहे।

अपने ख़्याल में पस्ती (गिरावट) न आने दें , हर नियामत (उसकी कृपा) पर शुक्र करें और उरूज (चढ़ाई) की कोशिश करते रहें। किसी मुक़ाम को आला (ऊंचा) समझकर रुकना नामुनासिब (ग़लती) है। मतलब यह है

कि किसी हालत को सीपी और घोंघे के ताबीर (मुक़ाबला) न करना चाहिए। हर हालत आला है, अदना (छोटे) का तसव्वर (ख़्याल) बाज़ औक़ात (कभी कभी) पस्त हिम्मती (हिम्मत टूटना) पैदा करता है।

आगे लिखा है कि " ख़्याल फ़ना (लय) की हालत या गुश्शुदगी की तरफ़ मायल हो रहा है। " इसका अगर यह मतलब है कि गाहे गाहे (कभी कभी) फ़नाइयत तारी (लय अवस्था आ जाती है) हो जाती है फिर होश आ जाता है तो अच्छा है। अल्लाह पाक और तरक़्क़ी करेगा और अगर यह मतलब है कि कामिल फ़नाइयत (पूर्ण लय) नहीं होती तो यह भी दो हाल से ख़ाली नहीं।

१- या तो अज़ीज़ पर ऐसी हालत तारी होती है कि तबियत सिर्फ़ इकसू (एकाग्र) हो जाती है और वह भी कामिल नहीं।

२- या फ़नाइयत के साथ होश भी रहता है तो यह मुक़ाम तो सब हालतों से आलातर (सब से ऊँचा) है।

अज़ीज़ मज़कूर की तहरीर से जो कुछ मेरी समझ में आता है वह यही है कि तबियत की यकसूई कामिल (पूर्ण एकाग्रता) में तलव्वुन (तबदीली) पैदा होता रहता है।

इलाज इसका तसब्बर शेख़ (गुरु का ध्यान) है या शेख़ की ज़ात में फ़नाइयत (गुरु में लय होना)। फिर इन्शाअल्लाह (यदि ईश्वर चाहे) जो अज़ीज़ की तमन्ना (इच्छा) है पूरी हो जाएगी।

क़ुव्वते -मुदरिका (सोचने की शक्ति) की तरक़्क़ी जरिया उरूज (उन्नति) है और फ़लाह (उन्नति, बेहतरी) की उम्मीद।

इत्मीनान क़ल्बी (दिल की शांति) के साथ इज़्तराबी (बेकरारी) और बैचैनी इश्क़िया निस्बत (प्रेम की लगन) को ज़ाहिर करती है और यह हालत क़ाबिल शुक्र है।

अज़ीज़ मौसूफ़ ने उस हालत को नहीं लिखा जिससे अपने आपको फ़क़ीर होना महसूस किया। इल्ला (लेकिन) फिर भी अच्छा है। जब मश्क़ कामिल हो जाती है (अभ्यास पूर्ण हो जाता है) (इसलाहे सूफ़ियाये कराम में किसी मुक़ाम की सैर क़ामिल होती है) तब सूफ़ी जब चाहे (बजुज़ ख़ास वक्तों के) इस हालत को पैदा कर सकता है।

कश्फ़ (ज़ाहिर होना), करामत (सिद्धि, अजूबा) की जानिब फ़क़ीर का रुजू हो जाना बड़ा ख़लल (रुकाबट) पैदा करता है। अगर ख़ुद-ब-ख़ुद किसी बात का इन्किशाफ़ (खुलना) हो जाय या कोई करामात सरज़द हो जावे (अजबा हो जावे) तो वह और बात है। लेकिन फिर भी उसकी याद भी ज़रर (नुक़सान) से खाली नहीं।

अक्सर आला दर्ज़े के औलियाये अल्लाह (सन्तों) से तमाम उम्र कोई करामात (अजूबा) सरज़द (वाक़े, घटित) नहीं हुई। कश्फ़ की भी ऐसी ही हालत है। कभी बारीक से बारीक बात और हालत का इन्किशाफ़ (ज़ाहिर होना) होता है कभी मोटी से मोटी चीज़ का अहसास नहीं होता। ब मसदाक़ (जैसी कहावत है) इसके कि -

गहे बर तारके आला नाशीनम

गहे बर पुश्त पाये नबीनम

अर्थ - कभी तो आसमान के ऊपर तैरता हूँ, कभी अपने पैर की पीठ भी नहीं दीखती।

इसके आगे लिखा है कि मामूली कारोबार में अपने आपको आज़ाद पाता हूँ। यह खिलबत-दर-अन्जुमन (महफ़िल में एकांत) है। अल्लाह इस्तक़ामत (पुष्टि) फ़रमावें।

यह बात कि मख़लूक़ (जीव-मात्र) के ख़्याल का रुख़ दुनियाँ की तरफ़ पाते हैं यह सही कश्फ़ है। इस फ़क़ीर पर भी यह हालत मुद्द्तों तारी रही है।

अलबत्ता यह ख़्याल कुछ ठीक नहीं है कि ' हिम्मत के साथ क़ुव्वत नहीं है' - क़ुव्वत है, लेकिन इस क़ुव्वत का अहसास नहीं।

नफ़्स शरीर है। अगर इसके साथ उधेड़बुन है तो दुरुस्त है। नफ़्स के मामले में ख़ाकसारी (दीनता) व तरक़्क़ी नाज़ेबा (ठीक नहीं) और मुज़िर (हानिकारक) है। जाहिल से जाहिल नहीं बनना चाहिये।

कि बर जेहल जुज़ जेहल न आरद शिकस्त

अजीब बात का यह जबाब है कि फ़क़ीर को किसी सूरत में अपने मामूलात (नित्य का अभ्यास) तर्क न करना चाहिये (छोड़ना नहीं चाहिये) और न मालूम (अभ्यास) में किसी तरह का फ़र्क़ आने देना चाहिये) थोड़ा करे मगर हमेशा करे इससे कहीं बेहतर है कि बहुत करे मगर गाहे गाहे (कभी कभी)।

अगर मामूलात (अभ्यास) में सुस्ती पैदा हो जाय तो शैतान (तमोगुण) की तरफ़ से समझना चाहिये। यह बात कि डाक्टर ने ऐसी दवा खिला दी कि बिला ख़ुराक़ के मक़सद हासिल हो रहा है, ग़लत बात है। यह शैतान धोखा देता है। लाहौल (कुछ नहीं है सिवाय ईश्वर के) पढ़ो और पहले से ज़्यादा काम करो।

याद रखो इस राह में बहुत से नशेब फ़राज़ (ऊँच नीच) और घाटियाँ हैं। रहज़न (लुटेरे) भी क़दम क़दम पर लूटने के वास्ते डटे हुए हैं। इस वास्ते कामिल और क़वी रहबर (पूर्ण गुरु) की ज़रूरत है ताकि ख़ैरियत से वह इस राह दुशवार गुज़ार (कठिन मार्ग) और परख़तर (ख़तरे से भरा हुआ) राहरौ (साधक) को सलामती के साथ (सकुशल) मंज़िल (लक्ष्य) तक पहुँचा दे। जिस राहरौ (साधक) ने अपने रहवर (गुरु) का साथ छोड़ दिया या ज़रा भी बहका फिर उसका ठिकाना नहीं। फिर तो किसी ग़ार में ऐसा गिरेगा कि चकनाचूर हो जायेगा, या रहज़न (लुटेरे) उसका सब माल मत्ता छीन लेंगे।

१३ अप्रेल को ख्वाव में बशारत (अच्छी बात की खुशखवरी) दी गयी है, और एहतियाद की ताक़ीद है, फिर मज़बूती के साथ हिदायत की पावन्दी करना चाहिये। याद रखो जिनके रुतबे हैं सिवा उनको सिवा (बड़े) मुश्किल है। बक़ीया तमाम ख़्वाव मकाशफ़ात (हालत खुलना) है और अलहम्दलिल्लाह वह सब अच्छे हैं।

मैं अज़ीज़ मज़कूर की हालत से खुश हूँ।

आपका ख़ादिम फ़क़ीर नाचीज़ आसी

-

मुजद्दीदी मज़हरी अफ़ीअल्लाह अन्नहू अब्दुल ग़नी

इन्तख़ाब डायरी (सत्संगी की और से)

माह नवम्बर १९३० ई०

रात को ख़्वाव में एक शख्स ने दरियाफ़्त किया कि 'अहम ब्रह्म ' तक पहुँचने में कितनी सीढ़ियाँ हैं ? मैं उस वक्त सीढ़ियों पर चढ़ता जाता था और उनकी तादाद शुमार करता जाता था लेकिन दिल में कानपुर जाने का ख़्याल था। उतरने पर शुमार भूल गया और कोई जबाब उसको नहीं दिया क्योंकि मुझको यह खटका था कि मेरी गाड़ी कानपुर को न छूट जाय और मैं उक़दा (सवाल) हल करता ही रह जाऊं।

माह दिसंबर, १९३० ई०

शाम को अँधेरा छाया हुआ था और बदन के हर हिस्से से बेहद ताक़त का पता चलता था। वह अँधेरा अंधागुप की सूरत में न था बल्कि ऐसा था जैसे तेज़ रौशनी से गुज़र के दाख़िल हों तो अँधेरे के साथ थोड़ी झलक रौशनी की भी रहती है। उसके बाद बारह दिसंबर से दूसरी हालत आयी जिसमें यह मालूम होता था कि जैसे उजड़ी हुई बस्ती बिलकुल बीरान पड़ी हो और परिन्दा तक नज़र न आता हो। और वहाँ न बहार और न ख़िज़ाँ, न गर्मी हो न सर्दी। इसके बाद आख़ीर हफ़्ते में बेचैनी और परेशानी और तड़प बहुत ज़्यादा हुई। एक हफ्ते के बाद आनन्द की हालत पैदा हो गयी। अब हालत ऐसी है कि जैसे कोई शख़्स जंगल में बैठा हो और कोई सामान न हो।

माह जनवरी, १९३० ई०

परमात्मा की हस्ती कोसों दूर मालूम होती है और उसकी अज़मत (बड़प्पन) और बुज़ुर्गों का सिक्का नक्श है। वह सारे संसारों का बादशाह है और बन्दा एक अदना (तुच्छ) भिखारी है। हालत यह है कि जैसे किसी का प्रीतम इतनी दूर है कि शान-गुमान भी नहीं पहुँच सकता। उसके गुण और स्वभाव सुनकर उस पर मोहित हो गया है और इस आशा से कि दर्शन होगा, मौहब्बत जोड़े है और तड़प करता है। हालाँकि आँखों से दूर है और ख़्याल से बहुत नज़दीक। बस यही हाल बन्दा नाचीज़ का है। दुनियाँ के काम करते समय कोई हरकत मालूम नहीं पड़ती। इन्द्रियां अपने-अपने गोलक में खामोश बैठी रहती हैं और काम होता रहता है। यह भी नहीं मालूम कि मैंने कभी ब्रह्म-विद्या सीखी भी थी। मैंपना (अहंपना) बिलकुल लय होगया।

ख़्वाब देखा कि ||||||||| मुझको ध्यान करा रहे हैं और फ़रमाया कि तुम ठीक हो, सिर्फ जिस्मानी तन्दरुस्ती ठीक हो जाय। यह मुझ से कहा कि यह ख़्याल करो कि गंगा बह रही है और उनमें हर रंग मौज़ूद हैं। उनमें से वह रंग जो मेरे मर्ज़ को दूर करने वाले है मुझ मैं दाख़िल हो रहे हैं। और इसी तरह दूसरों के मर्ज़ दूर करने के लिए अपने चक्रों के पंच तत्वों के जिस रंग की कमी हो दाख़िल कर दिया जाय।

दिन भर हालत तेज़ रही और यह मालूम होता था कि फ़ैज़ ठसाठस भर गया है। गाने की हूक उठी और यह दोहा गाता रहा -

जब तक तन नाही जरत , मन नाहीं मर जात

तब लगि मूरत श्याम की, सपनेहु नाही लखात

---

(९७)

फ़तेहगढ़

१२ फरवरी १९३१

जो हालात लिखे हैं वह सब के सब क़ाबिल शुक्र के हैं। यह नियामत फ़नाये फ़ना (लय की भी लय) की है जिसके बाद इन्शाअल्लाह आ अज़ीज़ पर नियामत बक़ा की उस दरगाह (दरबार) से बख़्शी जायेगी। जिस दर्ज़े और हाल की फ़ना होती है उसी मिक़दार के मुआफ़िक बक़ा बख़्शी जाती है। और ख्वावात की ताबीरें क्या लिखी जायें। ग़रज़ मक़सद है। निशानात को समझ कर इक्तिफ़ा (संतोष) कर लिया गया है। तफ़सीलात में न पड़कर वक़्त को बचा लिया गया है।

---

(९८)

फ़तेहगढ़

१० मार्च १९३१

तुम्हारे पिछले ख़तूतों (पत्रों) का जबाब मैनें यह समझ कर रख छोड़ा था कि फिर जबाब दूँगा। इसके अलावा यह भी बात थी कि हर फ़िकरे के ख़तम पर एक हिस्सा ऐसा होता है कि जो मज़मूने-जबाब को (उत्तर

के लिए) काफ़ी होता है। और इस ख़त में भी वही हालत है। पस मुश्किल है कि इस क़िस्म के तहरीरात (लेखों) का जबाब दिया जा सके जो ख़ुद ही जबाब की शकल रखते हैं।

जो हालत कि शुरू करने से पहले थी वैसी ही अब महसूस होती है। ' हुवल अव्वल, हुवल आख़िर ' (जो आरम्भ था वही अन्त है) का मज़मून है। जहाँ से कि रूह चली थी वहीँ वापस आ गयी। अगर इसकी तशरीह की जावे तो एक दफ़्तर दरकार है और नीज़ अदब भी माने है क्योंकि यह सिर्रे इलाही (ईश्वर का भेद) है। क़ालिब इन्सानी (मनुष्य) में रूह के मफ़्तूह होते ही (प्रकाशित होते ही) जुमला अमूर (सारी बातें) और सिफ़ात (गुण) और क़ुवाय मुदारिका महसूसा (ज्ञान इन्द्रियाँ) अपने कामिल इख़लाक़ (सम्पूर्णता) पर थे।

पैदायश कायनात (सृष्टि) के सिलसिले में जज़बात (वासनायें, भावनायें) का उभार हुआ। तवज्जह और रूह का नज़ूल (उतार) माद्दियत (संसारी वस्तुओं) की तरफ होता चला गया। बैलेंस (balance - समता) नहीं रहा। इख़लाक़ी कैफ़ियात (सदाचारी बातों) में एतदाल (समता) बाक़ी न रहा, यहां तक कि जुमला जज़बात (emotions) मुरदा हो गए।

अब मुर्शिद अपनी तवज्जह और फ़यूज़ (फ़ैज़) से गुमशुदा (खोई हुई) जज़बी कैफ़ियात (ग्रहण करने की शक्तियों) को फिर से उभारते हैं। यहाँ तक कि हमारे यहाँ सिलसिला तालीम में जज़्ब से शुरू कराके जुम्ला जज़्ब की जेहत (रूप) को ख़तम कराके फिर सलूक की तरफ वापिस ले आते हैं और सलूक की जेहत को ख़तम करते हैं। यही ख़ातिर सुलूक है।

जो कैफ़ियत क़ल्ब (ह्रदय) और नफ़स इन्सानी (मनुष्य की आदतों) की इब्तिदा (शुरू) में थी वह ही कैफ़ियत एतदाल (सम अवस्था) की अब आयी है। दरमियानी कैफ़ियत (हालत) और मुक़ामात (मुक़ाम) मौजें हैं। इनसे यह पता नहीं चल सकता कि सुकून क्या है और कहाँ है। अब दूर असल इन्सानी शकल इन्सानी है और उससे पहले हैवान बशकले इन्सान (मनुष्य के रूप में हैवान)।

मौज़ों में असलियत का पता कब चलता है। यहाँ पर start (आरम्भ करना) व reach (पहुँचना) का कोई सबल नहीं। जो है सो है। नुक़्स में कमज़ोरी, ख़्वाहिशात (इच्छाएं) और जज़बात (वासनायें, भावनायें) हैं। तकमील (पूर्णता) में लहरें और ख़्वाहिशों का पता कहाँ है। जुमला सिफ़ात (सारे गुणों के) एतबाल (सम) होने पर सुकून (चैन) है। ख़्वाहिशात (इच्छाओं) के होते हुए भी बेख़्वाहिशी (अनिच्छा) का मजमून है। या तो ऐसी हालय क़ल्ब (ह्रदय) के तक जाने पर होती है या क़ल्ब तस्सलीयाफ़्ता (शान्ति प्राप्त) और तस्कीनयाफ़्ता

(शांत अवस्था) की। हर काम को करते हुए आख़िर को क़ल्ब (मन, ह्रदय) monotonous । हो जाता है यानी उसको उपराम हो जाता है। अगर हक़ीक़ी (ईश्वरीय) है तो मुबारक़, अगर मजाज़ी (संसारी) है तो भी उम्मीद अफ़ज़ा (आशा वर्धक), क्योंकि इसके बाद फिर दौर उरूज (चढ़ाव) शुरू हो जाता है जो सालिकों (पन्थाइयों) की राहे-रवी (रास्ता चलने) का मशग़ला (काम) है ।

कुम-ब-यज़नी (अहं ब्रह्मास्मि - मेरे हुक्म से हो जा) में क़माल तक़वा (पूरा परहेज़) और कमाल तवक्कुल (पूरा भरोसा) का भी यही असर है और नतीज़ा होता है जो कुम-ब-यज़नी का । लेकिन

अव्वलुल्ज़ीक्र (जो ऊपर कहा गया है) की कैफ़ियत अदब को लिए हुए है और क़ुर्बज़ाती (समीपता) की बशारत (खुश ख़बरी) देती है । क़ुर्ब (समीप) व मय्यत ज़ाती में ज़ाती अनवार (ईश्वर का प्रकाश) से सालिक को मुशर्रफ़ (उन्नति) कराते हैं ।

ज़ाती (ईश्वरीय) और सिफ़ाती (गुण) अनवार (प्रकाश) में ज़मीन और आसमान का फ़र्क़ है । क्या हनुमान जी महाराज की सिफ़त मिसकीनी (आधीनता) को याद करके खुश नहीं होना चाहिए कि जब कोई शख़्स उनको उनकी ताक़त का ध्यान दिला दिया करता था तब उनको याद आ जाती थी । हमको आम खाने से ग़रज़ है न कि पत्तों और पेड़ गिनने से । अगर इस कमहिम्मती के ख़्याल होते हुए भी सालिक वह काम कर जावे जो बाज़ शेखीवाज़ों से न हो सके तो क्या कमाल नहीं है ।

अगर कोई नौकर अपने मालिक के पीछे और आगे भी अपनी ताक़त और मिलकियत (मालिक होने) का दावा कर बैठे तो क्या हालत मालिक के ग़ुस्से और ग़जब की होगी । मुमकिन है कि वह अपने इस ग़ज़र और बाग़ियाना हरकत की वजह से अपने औहदे से माज़ूल (अलहदा) ही कर दिया जाय ।

लेकिन दूसरा नौकर क़ुर्ब ज़ाती (सामीप्य) और हमेशा नज़दीकी के बायस (कारण) और ख़िदमत (सेवा) में ऐसा दख़ल मालिक के मिज़ाज़ में पा ले कि जुम्ला अख़्त्यारात मालिक की तरफ से उसको अता हो जायें और वह नौकर उन अख़्त्यारात को बिलकुल इस तरह काम में लावे कि हमेशा अमल के साथ मालिक का नाम मन्सूब किया करे, तो मेरे ख़्याल में मालिक को भी कभी कोई शुबहा और मौक़ा इस बात का न होगा कि मालिक यह समझने लगे कि कभी हमारी बादशाहत में ज़बाल (गिरावट) आ जावेगा और वह उसके अख़्त्यारात (अधिकारों) को ज़ब्त करके उसको माज़ूल (अलहदा) कर दे ।

मौज़ के ताबे में (ईश्वर की इच्छा में रहना) महसूस होना और अपने आपको बन्दा गुनहगार समझना निहायत दर्ज़े की शराफ़त इन्सानी है। बल्कि यह ख़ास करम व रहम परवरदिगार का है।

आप लिखते हैं कि मुझको अपनी हालत पर रोना अक्सर आता है। अफ़सोस है कि घी और हलुवा खिलाने पर रोना आवे और चने चवाने पर इन्सान खुश हो। यह सब जेहल और नादानी के बायस हैं। इस नियामत ख़ुदाबन्दी का शुक्रिया कहाँ तक अदा किया जजवे। पस इस वहम और नादानी को एक दम दूर कीजिये वरना कुफ़राने - नियामत (परमात्मा की नियामत का शुक्र अदा न करना) हो जावेगा। फिर आप ख़ुद ही लिखते हैं कि ज़िन्दगी में मौत का लुत्फ़ उठाता हूँ। यह क्या मुतज़ाद तहरीर (विपरीत लेख) नहीं है। बेक़ैफ़ी ज़ाती मुक़ाम के हद तक पहुँचने की अलामत है। मगर अभी तुम बेक़ैफ़ी का ख़्याल बांधे हुए हो, वहाँ क़ैफ़ और बेक़ैफ़ी एक-सी है। अल्लाह पाक यह हालत भी फ़रमावेंगे।

---

(९९)

फ़तेहगढ़

१२ जुलाई १९२२

जो तुम्हारा क़स्द (इरादा) था वही पूरा हुआ। यानी बेहद ख़्वाहिश कर रहा था कि तुम्हारे हालात दरियाफ़्त हों और हमेशा याद करता रहता हूँ। उसी याद ने तुमको मज़बूर कर दिया कि ख्वामख़्वाह मुझको याद ही करो।

चाँद असहाब (सज्जनों) ने निहायत बेएतनाई (बेपरवाही) अख़्त्यार की है लेकिन मैं उनको भी हमेशा याद करता रहता हूँ। कभी न कभी उनको अपनी भूल मालूम ही होगी।लेकिन हाँ , इस क़दर अन्दाज़ा हो गया है कि बहुत ज़्यादा मुमकिन है कि ऐसे लोग मेरे बाद मुझको ख़्वाब में भी न याद करें।

मैं इन दिनों बतक़ाज़ये वशरियत (मनुष्यता के नाते) निहायत मुतफक्किर (चिंतित) रहा हूँ और इस तफ़क्कुर (चिंता) की हालत में खतो-किताबत (पत्र व्यव्हार) करने को जी नहीं चाहा। मुझे बड़ी फ़िक्र हो गयी थी जब कि तुम्हारी अलालते- इलतबा (तबियत ठीक न होना) का हाल |||| से मालूम हुआ। उसके बाद बहुत दिन मुन्तज़िर रहा लेकिन अज़ीज़ ||||| के खत आने से हालात मालूम हो गए।

अपने तबादले के निस्बत तुमने जो लिखा है कि मेरे पास रह कर कुछ लुत्फ़ हासिल करोगे। भाई, मेरा तजुर्बा कुछ इसके बरक्स (विपरीत) है। चन्द लोग ऐसे भी फ़तेहगढ़ में मौज़ूद हैं जो एक वक़्त में निहायत सरगर्म मौहब्बत (प्रेम के जोश में) थे और अब वही हैं कि महीनों उनकी शक्ल भी नज़र नहीं आती है। और कुछ ऐसे आसार सर्दमोहरी (ख़ामोशी, ठंडक) के नज़र आते हैं कि ख़ुदा-न- ख़ास्ता एक रोज़ ऐसा आने वाला है कि वह मेरी शक्ल देखने से बेज़ार हो जायेंगे।

यह ईश्वर की इनायत और करम पर मुनहसिर है कि अहले-मौहब्बत (प्रेम करने वालों) से अहले मौहब्बत का ताल्लुक़ क़ायम रहे। दुनियाँदारी के लिहाज़ से भी तो पासे बज़ेदारी (ख्याल) रहना चाहिए वरना क्या लुफ़्ते-सौहबत (सौहबत का लुत्फ़) है।

मैं सच कहता हूँ कि आप ऐसे दूर रहने वालों को मैं निहायत ज़्यादा नज़दीक रहने वालों से बेहतर ख़्याल करता हूँ। जो इज़्तराब (खिंचावट) और खटक दूर पड़े लोगों में होती है वह नज़दीक वालों में नहीं। ख़ैर, हर जगह कोई फ़ायदा कुल्लिया (स्थायी) नहीं है। अगर मुमकिन हो सके तो कभी कोई मौक़ा निकालकर ज़रूर मेरे पास रहिये क्योंकि बारीक बारीक इख़लाक़ (फ़र्ज़) और छोटी छोटी बातों का इरतबात (पैरवी) बिला चन्द रोज़ साथ रहे नहीं हो सकता है।

अफ़सोस है उन पर जिन्होंने बाबजूद इसके कि कई सालों से मेरे साथ हैं अपनी आदतों को जो क़ाबिले - तर्क (छोड़ने लायक़) हैं तर्क़ नहीं किया (नहीं छोड़ा) और जो अमूर (काम) क़ाबिल इख़्तियार करने के हैं जज़्ब (क़बूल) नहीं किया। ऐसे लोगों का अगर हमेशा सौहबत में रहें और कुछ न हासिल करें, रहना और न रहना बराबर है। हर काम मसलहत से होते हैं और वक़्त मुक़र्रिर है, जब वक़्त होगा, हो रहेगा। ताहम (फिर भी) चन्द रोज़ साथ रहने की ख़्वाहिश ज़रूर रखिये।

मेरा दिल अब ताल्लुक़ बेताल्लुक़ी और बफ़ज़लहू (ईश्वर की दया से) यकसाँ हो गया है।

अपने हालात से ज़रूर मुत्तला करते रहियेगा और आइन्दा अब ऐसा अहद न कीजियेगा कि जबमैं लिखूँगा तब आप लिखेंगे। मैं हमेशा मुस्तैद रहकर याद किया करता हूँ और दुआ करता रहता हूँ, गो ज़ाहिर ख़त में न लिखूँ ।

(१००)

फ़तेहगढ़

१२सितम्बर १९२३

इन्सान में फ़ितरतन (क़ुदरती) नफ़्सानी जज़्बात (इन्द्री भोग की इच्छा) मौज़ूद हैं और ख़ास कर यह जज़्बा निहायत मुँहज़ोर (प्रबल) है। इसलिए हमारे बुज़ुर्गों ने सख़्ती के साथ शादी करने की इज़ाज़त ही नहीं बल्कि हुक्म दिया है।

आखिऱ में स्वामीजी महाराज ने अपने परमधाम जाने के वक़्त यह अल्फ़ाज़ कहे थे कि अपने फ़रायज़ में से यह बड़ा फ़र्ज़ मैंने अदा नहीं किया, लिहाज़ा इसकी जबाबदेही (उत्तर देना) करना होगी। बहुत मुबारक़ है वह मौक़ा कि ऐन शबाब (जवानी) के वक़्त तुम्हारी ज़रूरत तुमको महसूस करा दी गयी।

मेरा ख़्याल यह ग़ालिबन है कि तुम अभी तक इन्सानी फ़रायज़ (धर्म) और उनकी अफ़ज़ीलियत (बुज़ुर्गों) को नहीं समझे। जिन बातों को वर्षों से छोड़ देने के तुम अभिमानी हो वह बातें आख़ीर में गड्ढे में डाल देने वाली हैं। शुक्र है कि संस्कार अब उदय हुए जिनके तज़ुर्बे के बाद ख़्वामख्वाह सीधे रास्ते पर आना चाहिए।

नातज़ुर्बेकारी (अनुभव हीनता) से इन्सान अपने नफ़्स (मन) के हिदायत (आदेश) को बहुत ठीक जानता है। लेकिन जो ठीक है वह हमेशा तज़ुर्बे के बाद होता है। अब फिर कोशिश करो कि सम्बन्ध हो जाये।

---

(१०१)

फ़तेहगढ़

१९ जून १९२३

जो कुछ क़ुदरत की तरफ से हो जावे अच्छा है। जो होता जावे देखते जाओ, और अपने को परमात्मा के हवाले कर दो। वाल्दा आपकी ज़ईफ़ुलउम्र (बृद्ध) हैं पीरी (बुढ़ापा) और सदऐब (सैकड़ों बीमारियाँ) के मसदाक़ (पीड़ित) हैं। जो कुछ उनकी ख़िदमत हो सके, करना ज़रूरी है।

(१०२)

फ़तेहगढ़

१९दिसम्बर १९२३

मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि वह आपको अपने रास्ते में रखे। घबराइये नहीं, दुनियाँ के तजुर्बात सबक़ आमेज़ (शिक्षा प्रद) हैं, नहीं मालूम क्या मसलहत ख़ुदाबन्दी (ईश्वर की इच्छा) है। अपने हालात और तंदुरुस्ती से मुत्तला करते रहिये।

---

(१०३)

फ़तेहगढ़

२७ जनवरी १९२४

परमात्मा तुमको नेक तौफ़ीक़ और ख़्याल को इस्तक़लाल बख्शे (मज़बूती दे) । ख़तों के मज़मून से यह बात पैदा होती है कि परमात्मा का फ़ज़्ल (कृपा) तुम पर है। हर आदमी जब अपनी कमी और कमज़ोरी को महसूस करने लगता है और फिर उसको नदामत (शर्म) पैदा होकर कमज़ोरी को दूर करने का ख़्याल पैदा होता रहता है तो यह सब परमात्मा के फ़ज़्ल (कृपा) और दया का सबब है । बिला उसकी प्रेरणा के कुछ नहीं हो सकता।

मुझे यकीन है कि तुम मेरी चन्द बातों को जो नीचे लिखता हूँ ग़ौर से पढ़ोगे और कभी-कभी विचार करोगे तो उम्मीद है कि राह नेक हासिल करोगे। हिम्मत करो, ईश्वर मदद करेगा।

सुना होगा कि " ज़रबुलमिसल (कहावत) दुनियाँ में ज़रूरत ईज़ाद की माँ है " (necessity is the mother of invention) यह ज़रूर एक उसूल है कि कुल मौज़ूदात (जो मौज़ूद हो) में ज़ाहिर और पोशीदा (छिपी हुई) हर वक़्त काम कर रही है।

अब हम लफ्ज़ 'ज़रूरत' को यहाँ अच्छी तरह समझ लें तब आगे चलें। इससे तो कोई इन्कार नहीं कर सकता कि दुनियाँ में जो मौज़ूद है वह मुफरिद (एक) है या मुरक़्क़ब (मिली हुई) है। लेकिन जिस चीज़ को हम मन, अक़्ल, हवास से जान लेते हैं या महसूस कर लेते हैं वह मुरक़्क़ब (मिली हुई) है। यानी चन्द जुजों (टुकड़े, हिस्से) से मिलकर एक जिस्म बन गयी है।

इन चीज़ों में से कभी किसी में कमी हो जाती है और कभी बेशी (अधिकता) हो जाती है और क़ुदरत हर कमी को पूरा करती रहती है। जब तक सब कमी पूरी न कर ले दम नहीं लेती। और अगर कभी कोई चीज़ ज़्यादा हो जाती है तो क़ुदरत उसको निकालकर बाहर फेंक देती है। इस कमी का दूसरा नाम ' ज़रूरत ' है। लेकिन ज़्यादती के भी दूर करने की ज़रूरत होती है। इसकी भी ज़रूरत कमी का दूसरा बरक्स (उल्टा) पहलू है। तो मालूम हुआ कि दोनों हालतों में ज़रूरत होने का सामान दरकार है। और लफ्ज़ ' ज़रूरत ' जब कमी का ख़्याल दिलाती है तो दोनों हालतें नाक़िस (नुक़्स रखने वाली) हैं। अगर कमी है तो बेशी की ज़रूरत है और अगर बेशी है तो कमी की ज़रूरत है। यह कशमकश हर वक़्त और हर हालत में जब होती है और नाक़िस है तो मुकम्मिल और बेहतरीन हालत क्या है ?

मुक़म्मिल हालत एतदाल (सम अवस्था) की है जहाँ खींचा-खींची नहीं है। कमी और बेशी की दरम्यानी हालत का नाम एतदाल है। खींचा-खींची की हालत को ख़्वाहिश कहते हैं। जब ख़्वाहिश न हो और हालत इत्मीनान और सुकून की हो वह शान्ति अवस्था है।

तुम्हारे अन्दर अच्छी हवा की जब कमी होने लगती है तो वह क़ुदरत का अमल बुरी हवा को निकालकर अच्छी हवा को बाहर से जज़्ब करके कमी को पूरा कर लेता है और कम हवा की ज़्यादती को बाहर ढकेल देता है। ग़िज़ाइयत (भोजन) और पानी के कम हो जाने के वक़्त भूख और प्यास सताती है। बाहर से वह ज़रूरत और ख़्वाहिश पैदा होकर मन और इन्द्रियों के ज़रिये ग़िज़ा और पानी को लेकर अन्दर भर देती है और चन्द घण्टों के वास्ते सेरी (तृप्ति) होकर शान्ति हो जाती है।

दरख़्त बुरी हवा जज़्ब करते हैं और अच्छी हवा को छोड़ते रहते हैं। गरज़, दुनियाँ की कोई चीज़ बेकार नहीं है। अगर एक वक़्त में एक ही चीज़ किसी कमी को पूरा करने के काम में लायी जाती है तो दूसरे वक़्त में वही चीज़ किसी बेशी और बेकार चीज़ को रफ़ा करने के लिए इस्तेमाल की जाती है।

एक जानदार की एक चीज़ से मौत हो जाती है तो दूसरे जानदार की उसी चीज़ से परवरिश होती है और फ़िर वही चीज़ एक ही शख़्स अगर ज़्यादा मिकदार (मात्रा) में खा ले तो मौत वाक़े हो जाती है, और अगर मिक़दार (मात्रा) के मुवाफ़िक़ स्तेमाल करे तो अक्सीर का हुक्म रखती है।

आओ पहले हम अपने जिस्म की बनावट पर ग़ौर करें और उसके अन्दर जो मुख्तलिफ़ (विभिन्न) ताक़तें काम कर रहीं है उनमें से इस वक़्त सिर्फ़ दो को अपने सामने रख लें। निहायत मोटी शकल में भूख प्यास और

नफ़्सानी ख़्वाहिश यानी मैथुन (cohibition) की ख़्वाहिशात का गल्वा (प्रभाव) बहुत ज़ोर के साथ रोज़मर्रा हुआ करता है।

भूख, प्यास, नींद का न आना, सो रहना, यह ज़ाहिर करता है कि जिस्म में ग़िज़ा पानी की कमी हो गयी है। उसको पूरा करना चाहिए और जिस्म के जो आज़ा (अंग) काम करते करते कमज़ोर और थक गए हैं, उनमें ताक़त फ़िर पैदा करनी चाहिए। जब ख़्वाहिश या ज़रूरत पैदा होती है तो क़ुदरत मन और इन्द्रियों के ज़रिये कमी की चीज़ों को बाहर से लाकर दूर कर देती है। इस ख़्वाहिश को हिंदी में काम-शक्ति कहते हैं।

ख़्वाहिशात जिस्मानी (शारीरिक इच्छायें) - यह काम-शक्ति का एक अंग है जो सिर्फ़ जिस्मानी ज़रूरियात को या उसकी कमी को पूरा करता है। लेकिन इस काम-शक्ति का दूसरा अंग लतीफ़ (सूक्ष्म) है जो कमी को पूरा नहीं करता बल्कि ज़्यादती या बेशी को ख़ारिज़ करता है और कमी को भी पूरा करता है।

अब आप ध्यान से और ग़ौर करके सोचिये। आपके अन्दर पानी, पत्थर , शकर, घी, नमक, फ़ास्फ़ोरस, चर्बी, सफ़ेदी, रेत, वग़ैरा, वग़ैरा मौज़ूद हैं। इन सब का मजमुआ (समूह) आपको और आपके जिस्म की परवरिश करता रहता है। जब इनमें कमी होती है तब भूख और प्यास लगती है। ग़िज़ा खाते हैं और पानी पीते हैं, कमी पूरी हो जाती है।

ग़िज़ा और पानी से जो जौहर या इत्र निकल आता है वह वीर्य कहलाता है। और दिमाग़ के अन्दर अक़्ल वग़ैरा और आज़ाय लतीफ़ा (सूक्ष्म इन्द्रियों) को मदद पहुँचाता रहता है और एक महफ़ूज़ (सुरक्षित) हिस्से में जमा रहता है।

ग़िज़ा (भोजन) और पानी के दरमियान का हिस्सा बलग़म, सौदा, सफ़रा की शकल में गोश्त, पोस्त, हड्डी और ख़ून की परवरिश (पालन -पोषण) और साख़्त-आज़ा (शरीर के बनने) की इमदाद के लिए जमा रहता है। और सबसे बेकार फुज़ला, पाखाना, पेशाब, और पसीना और अबखरों की शकल में जिस्म से बाहर ख़ारिज हो जाता है।

जौहर या इत्र-ग़िज़ा जो महफ़ूज़ जगह जमा हो गया है अगर मिक़दार से ज़्यादा जमा हो गया है और बिलकुल जगह नहीं रही है तो यह शक्ति उसको जिस्म से निकालकर इन्द्री (लिंग) के ज़रिये से बाहर फेंक देती है। पस वह जौहर जो निकालकर फेंका गया था अगर उमदा ज़मीन या अच्छे बरतन व जगह में रखा गया तो

अपने जिस्म से वह ज़्यादा हिस्सा होने की वजह से बाहर निकला, लेकिन क़ुदरत का दूसरा मन्शा पूरा हो गया, यानी एक से अनेक हो गया। तुम एक थे अब दो हो गए, तीन हो गए।

जिस्म के अन्दर की ज़ायद और बेकार चीज़ अगर ज़्यादा देर जिस्म में रहे तो ज़हरीला माद्दा पैदा कर देती है।जैसा कि क़ब्ज़ हो जाने या पेशाब के ख़ारिज़ न होने का नतीज़ा तुम रोज़ देखते हो। लेकिन जौहर इत्र या वीर्य की ज़्यादती से एक क़िस्म का इनफ़आल (हया व शर्म) और इन्क़िलाबे - अज़ीम (मन की गिरावट) अक़्ल में पैदा कर देता है, जिससे इख्तलाफ़े-अज़ीम (बड़ा भेद-भाव) का एहतमाल (भ्रम) हो जाता है और ज़्यादातर बड़े-बड़े ज़ाहिद (सन्त) और आबिद (अभ्यासी) लोगों की तबियत को भी मुतग़य्यर (तब्दील) करके गुनाह (पाप) का मुर्तक़िब (करने वाला) करा देता है और एक तरह से क़ुदरत की मंशा की भी रोक-थाम करता है कि पैदाइशे-आलम (सृष्टि का विकास) में रुकावट का बायस (कारण) होता है।

इस तहरीर (लेख) के देखने के बाद अब आप ज़रा फिर कर ख़्याल कीजिये कि किस नतीज़े पर पहुँचे। काम और क्रोध सब मसलहत से है। बाक़ायदा इसका इस्तेमाल ज़रूरी है। नफ़रत (घृणा) और रग़बत (लगाव, प्रेम) काम और क्रोध के दूसरे नाम हैं और यह सिलसिला हर वक़्त जारी है।

जो ताक़त ज़हरीले हिस्से को निकाल फेंके उसका नाम क्रोध है और जो चीज़ों को बाहर से जिस्म के परवरिश और क़ायम रखने के लिए अन्दर लावे वह काम है। काम और क्रोध का बाक़ायदा इस्तेमाल धर्म है। और जो धर्म और अधर्म के बाक़ायदा लक्ष्य पेश करके तालीम का क़ानून मुकम्मिल मुरत्तिब करे (तरतीब में लावे) और लोगों के सामने पेश करे वह मज़हब कहलाता है। मज़हब, तंगदिली, ताअस्सुब, वाहिमी इख़्तलाफ़ात और झगड़े का नाम नहीं है।

मैं इस पर अपनी हत्तुलमक़दूर (शक्ति के अनुसार) वक़्तन -फवक़्तन (समय समय पर) मज़ीद] (और) रौशनी डालने का एहतमाम (प्रोग्राम) करता रहूँगा। आपको चाहिए कि कभी-कभी बल्कि ज़्यादा दिनों तक इसी दुनियांवी उसूल के मज़मून पर ग़ौर के साथ निगाह। डालते रहें। हिम्मत करो, ईश्वर मदद करेगा।

(१०४)

फ़तेहगढ़

१२ मार्च १९२४

शरीर रखते हुए कभी न कभी रोग लगता ही है। शादी-विवाह की रस्म होने की वजह से किसी पर इल्ज़ाम लगाना यह इख़लाक़ी (सदाचारी) कमज़ोरी है बल्कि आत्मा के अशुद्ध होने की अलामत है। क्या परमात्मा पर विश्वास के यह मानी हैं कि ऐसे नापाक ख़्याल को दख़ल दिया जावे ? यह औरतों की तरह की बातें कब से सींखी ? उम्मीद है की आ अज़ीज़ ऐसे निफ़ाक़ (लड़ाई-झगड़े) के ख़्यालात को दिल से निकालें और ईश्वर पर ख़्याल रखें। जिस्म के सेहत की तदबीर इलाज से करें, अपने वक़्त पर रोग दूर हो जायेगा। बलग़म की ज़्यादती की वजह से दर्द होता है और बलग़म ज़रूर मैदा या जिगर की ख़राबी की वजह से होगा। उसका इलाज हो सकता है। कोशिश कीजिये, दूर हो जावेगा। ईश्वर मदद करेगा।

---

(१०५)

फ़तेहगढ़

१० मई १९२५

भाई , ज़िन्दगी का तो किसी का भरोसा नहीं है। यह मन बड़ा खिलाड़ी है, किसी तरह चैन नहीं लेने देता। मुमकिन है कि हमेशा नफ़्सानी ख़्वाहिशात रुकी रहें लेकिन इसका कुछ ठीक नहीं है। सिर्फ़ दवा और हकीम का काम औरत देती है। ख़्यालात के नाक़िस हो जाने पर अन्नमय आत्मा सिर्फ़ इसका भोगी है। उसको ख़ुराक़ ज़रूर दरकार है। महज़ इस वजह से मैं हक़ीक़त को जानकर तुमको हमेशा शादी का मशविरा दे दिया करता हूँ। तुम ख़ुद समझदार हो, समझ-बूझकर काम करो। ज़िन्दगी के कारोबार में जहाँ और ज़रूरियात (आवश्यकतायें) हैं वहां यह भी एक ज़रूरत है और लाज़िमी ज़रूरत है।

मैने ।।।।।। को ख़त नहीं लिखे, जब उन्होंने ख़ुद नहीं लिखा तब मैं क्या किसी के पीछे पड़ूँ। जब वक़्त आवेगा, वह ख़ुद चलेंगे।

(१०६)

फ़तेहगढ़

६ अक्टूबर १९२८

ईश्वर से प्रार्थना है कि तुम्हारी दीन और दुनियाँ दोनों की तरक़्क़ी हो। लगन और याद दिल में बाक़ी रहे यही सब कुछ है। दुनियाँ के ख़्यालात अगर आते हैं , आने दीजिये। मुलाक़ात तो है और याद तो बाक़ी है, यही शुक्र है।

---

(१०७)

फ़तेहगढ़

२५ जुलाई १९२९

मुफ़स्सिल हालात मालूम हुए। शादी निहायत खैरो -ख़ूबी के साथ सरअंजाम हो गयी।परमात्मा का लाख-लाख शुक्र है।

ऐसे बच्चों के कब्ज़ के लिए घुट्टी काफ़ी होती है, और बाथ दिलाया गया (स्नान कराया गया) यह बहुत अच्छा है। कमज़ोरी का ख़्याल नहीं करना चाहिए। खाने की एहतियात ज़्यादा लाज़िमी है। ख़्वामख़्वाह ख़राब ख़्याल करते रहना बाक़ई ठीक नहीं है, जो दुलहिन अज़ीज़ा से कह दीजियेगा। सब मामलात ईश्वर के हाथ में रहते हैं। उस बच्चे का नाम ग़ालिबन यहाँ ।।।।।।। रखा गया था। किसी के निस्बत कोई ख़राब ख़यालात न रखना चाहिये। जो हो गया वह हो गया। अब आइन्दा अच्छा होगा।

---

(१०८)

सिकन्दराबाद

२९ अगस्त १९२८

वाजै हो कि हर काम मौज़ के साथ होते हैं। जब वक़्त आयेगा ख़ुद-ब-ख़ुद तरक़्क़ी हो जायेगी। हर हालत में शुक्र भेजिए और राज़ी रहिये। तरक़्क़ी व तनज़्ज़ुली (गिरावट) के हालात से मतलब नहीं है।

हर शख़्स पर जो नई बात गुज़रे, उसको ख़ुद लिखना चाहिये। बिला कहे हुए किसी का कुछ हाल मालूम नहीं होता। जिस किसी को न मालूम हो, उसकी निस्बत यह समझ लेना चाहिये कि उसको कुछ अभी मालूम नहीं हुआ। अगर किसी को कुछ मालूम हो और वह ज़ाहिर नहीं कर सकता, तो समझ लेना चाहिये कि वह जानवर की मिसाल है।

मेरे ख़्याल में ||||||||||||||| कि तवज्जह इस तरफ़ कम है। वह रस्म के तौर पर शरीक़ हो जाते होंगे। ||||के हालात मालूम हुए। अपने लिखा है कि ॐ (कार) का ख़्याल होता है और शब्द सुनाई नहीं देता। जब वक़्त आयेगा, सुनाई देगा। क्या उनके कभी ह्रदय यानी सीने के शब्द की तरफ़ तबियत रुजू हुई या नहीं?

||||||||| का अभी वक़्त नहीं आया है, जब खास तौर पर तबियत लगेगी तब शब्द होगा। लगे रहें और मालिक की मौज़ का इन्तज़ार करें। ||||||||| को मुबारक़ हो कि उनके गले यानी कण्ठ का शब्द खुल गया है। इस पर खूब तबियत लगाये रहें और गले पर शब्द को मालूम करें।

---

(१०९)

फ़तेहगढ़

२० नवम्बर १९३०

|||||||||||||||||| भाई, इस क़दर घबराने की क्या ज़रूरत थी ? मुझको अपनी मुलाज़मत में सदहा मर्तबे (सैकड़ों बार) ऐसे इत्तिफ़ाक़ात हो चुके हैं। यह सब मामलात चले ही जाते हैं। अभी और काम में लगे रहिये अभी वक़्त बाक़ी है। अगर||||||||||||||||||||||||में मुलाक़ात ख़ुदा-न -खास्ता न होगी तो मैं |||||||||||| आजाऊँगा और उस वक़्त मुलाक़ात हो जायेगी।

मेरी राय में ज़रूर |||||||| देहात के लोग |||||||| को नहीं पहुँच सकेंगे। अभी यह ज़्यादा मुतहम्मिल (बर्दाश्त) नहीं हो सकते हैं। इसलिए यही बेहतर है कि वह |||||||||||||में मुझसे मिल लें।

जो साहब कि मुबाहिसा (बहस) करने को तैयार हैं, इत्मीनान फ़रमाइये कि मैं हरगिज़ मुबाहिसा नहीं करूँगा, ख़्वाह कितना ही नालायक़ शुमार किया जाऊं क्योकि मैं जनता हूँ कि इस बात से कोई ख़ास नतीज़ा बरामद नहीं होता है। सब बेकार है।

आपको जो मायूसी रुख़सत वग़ैरा के न मिलने में हुई तो उसके बायस तबियत आपकी घबरा गयी। भाई, मुलाज़मत का हर जगह और हमेशा यही हाल रहा है और रहता है। सब्र कीजिये और ईश्वर की मर्ज़ी पर रज़ामन्द रहिये।

---

(११०)

फ़तेहगढ़

९ जून १९३१

।।।।।।। इस गिरोह की ख़िदमत करना ऐन सआदत (अपने फ़र्ज़ को पूरा करना) है। बल्कि यों समझना चाहिये कि उस पाक परवरदिगार की रहमत ने दिलों में इस तरह के सेवा भाव पैदा कर दिए हैं जो कि ऐन मौहब्बत के इज़हार हैं।

यह जिस्म सबारी रूह की है। इनमें तबादले हुआ ही करते हैं। जब उनका हुक्म होगा, ताक़त आ जायगी और काम ठीक देने लगेगा।

---

(१११)

फ़तेहगढ़

२५ जुलाई १९३१

हमदर्दी का मशकूर हुआ। मर्ज़ में बीमारपुर्सी (बीमारी का हाल पूछना) भी धर्म है। मेरी तबियत आजकल ज़्यादा ख़राब है। ताक़त बिलकुल नहीं, तमाम पेट पर बरम हो गया है। लिहाज़ा लोगों की राय से कानपुर व लखनऊ जा रहा हूँ।

---

(११२)

फ़तेहगढ़

११ फरवरी १९२६

हमेशा परमात्मा ने इमदाद की है और अब भी वही बेड़ा पार करेंगे।

इस साल यह इरादा किया है कि ईस्टर की तातील में जलसा सालाना क़ायम किया जावे क्योंकि ये दिन न बहुत गर्मी के हैं न बहुत सर्दी के और तातील बिला ख़रख़्शा (बिना परेशानी) है। किसी का त्यौहार नहीं है।

मैं तो अपने मिलने वालों के लिए हमेशा दस्तबदुआ (हाथ जोड़कर दुआ करते रहना) रहता हूँ कि ईश्वर अपना सच्चा ज्ञान और अपनी निज भक्ति प्रदान करें। अब उनकी मर्ज़ी कि जिस क़दर हिस्सा जिस प्राणी को अपनी मेहर से देना चाहते है, देते हैं। राज़ी उसमें हम हैं जो रज़ा उसकी है। तसलीम व रज़ा ही आला शांति है।

परमात्मन हम सब पर दया करके अपनी तरफ़ बुला लें और हक़ीक़ी (सच्चे) ज्ञान की रौशनी अता फ़रमावें।

ॐ शान्ति

---

(११३)

बिरादरम सुल्लमहू ,

आपका मुफ़स्सिल (विस्तृत) लिखा हुआ खत मिला। आपने अपने ग़ैर तस्सलीबख्श (असंतोषजनक) हालत लिखे और उनके बाइस (कारण) अपनी परेशानी का इज़हार किया है । लेकिन दरहक़ीक़त (वास्तव में) मेरे जाती (निजी) तजुर्बात (अनुभव) और शकूक (संशय) की तस्दीक (पुष्टि) इनसे होती है। आप पहले से ही बहस की तहलील में थे । मगर इस मर्तबा ग़ालिबन लफ्ज़ 'इज़ाज़त' और 'तकमील' वैगेरा के ख़्यालात ने आपको उलझन में डाल दिया। मैं कोशिश करता हूँ कि इस बहस की तफ़सीलात (विस्तार) पर काफ़ी तौर पर रौशनी दाल सकूँ और उम्मीद है कि जिस वक़्त यह मसला (प्रश्न) हल हो जायेगा आप मुतमय्यन (संतुष्ट) हो जायेंगे ।

गाँव के चौकीदार को उसके मन्सब (पद) के मुनासिब चन्द ज़ाती (निजी) इख्त्यारात (अधिकार) दे दिए जाते हैं लेकिन उन इख़्तयारात अता -शुदा (जो दिए गए हों) की काफ़ी निगरानी कान्स्टेबिल के ज़रिये होती है । यह एक सिलसिला तो फौज़दारी के सींगे का कायम कर लें । दूसरा सिलसिला गांव के पटवारी का क़ायम कर लीजिये । अब दोनों सिलसिलों को नीचे की तरफ से ऊपर को उठाते हुए ले चलिए और हर ओहदेदार के इख़्तयारात (अधिकार) और असरात (प्रभाव) को सामने रख लीजिये। अब आपको मालूम होगा कि हर

ओहदेदार एक ख़ास तौर पर एक ख़ास हालत में ख़ुद-मुख़्तियार (स्वतंत्र) और उन्हीं अख्तयार के साथ दूसरे ख़ास सूरत में ग़ैर-मुख़्तियार (परतंत्र) और अपने हाकिमेवाला (उच्च अधिकारी) के ज़ेर-असर (नीचे) है। एक का इरतबा (पैरवी) दूसरे पर लाज़िमी है।जिससे हम यह कह सकते हैं कि Secretary of State और War Secretary के सिवाय बाक़ी जुमले (सब) ओहदेदारान (अधिकारी) एक ख़ास सूरत में मुकम्मिल (पूर्ण) आज़ाद (स्वतंत्र) नहीं हैं।

लतीफ़े नफ़्स (काल चक्र) के मातहत जुमले (सब) लतायफ़ ज़ेली (नीचे के चक्र) का तै हो जाना दो तरीक़े पर बुज़ुरगाने सल्फ़ (पुराने महापुरुषों ने) ने इस तौर पर क़रार दिया है कि (१) ब-तरीक़ सलूक और कस्ब नीचे से ऊपर की तरफ़ मन्ज़िल तै की जाती है। (२) ब-तरीक़े जज़्ब नीचे से ऊपर को जाना होता है। इसके अलावा जज़्ब के रास्ते में एक शाख़ और भी है और वह वहबी है जो क़स्फ से बिलकुल मुख़्तलिफ़ (भिन्न) है।

कस्बी हालत में अपनी ताक़त से नीचे से ऊपर को जाना होता है। इस रास्ते में हर लतीफ़े (चक्र) के जुमला क़िस्म के मवक्किलों यानी देवताओं को जगाया जाता है। चन्द मवक्किलों (कुछ देवताओं) का काम सिर्फ़ निगरानी करना है और चन्द मवक्किलों का काम mechanical है। निगरानी करने वाले देवता अपने ऊपर के चक्रों के देवताओं से हमेशा और हर दम energy (शक्ति) रौशनी, ताक़त, हिदायत हासिल किया करते हैं और अमल करने वाले देवताओं (मवक्किलों) को रौशनी, ताक़त, हिदायत, ग़िज़ाइयत (खुराक) बख्शते रहते हैं। निगरानी करने वाले देवताओं का काम ख़ास ख़ास function (कार्य) को एतदाल (समता) पर रखने का ज़रूरी है। अमली काम (कार्यान्वित) करने वाले देवताओं का काम जिस्म के मुताल्लिक़ ग़िज़ाइयत (आहार) हासिल करते रहना, परवरिश करते रहना, ग़ैरजिन्स आशिया (गंदी चीज़ों को) ख़ारिज कर देना और जिन अशिया (चीज़ों) की ज़रूरत हो उनको पूरा करने के लिए जज़्ब की ताक़तों का स्तेमाल करना है।

हर लतीफ़े मुक़ाम या चक्र में जिस्मानी (शारीरिक) इख़लाक़ी (सदाचार के) और रूहानी मरकज़ (केन्द्र) मौजूद हैं जो अपने ऊपर वाले चक्र की अक्सी मुशावहत और मुनासिबत रखते हैं। जिस्म के जिस्मानी लतीफ़ (सूक्ष्म) मवक्किलों (देवताओं) और उनकी ताक़तों का एक ख़ास मरकज (केन्द्र) है और इसी तरह ख़ालिस इख़लाक़ी मवक्किलों और उनकी ताक़तों का लतीफ़ मरकज़ (सूक्ष्म केन्द्र) एक ख़ास मुक़ाम पर है और नीज़ रूहानी मवक्किल और उनकी ताक़तों के लतीफ़ मरकज़ों के खुलासे का मरकज़ एक ख़ास जगह पर।

लतीफ़े नफ़्स (काल चक्र) महामाया (शैतानी) क़ुब्बतों का ख़ास मरकज़ जब तक तय न हो जावे उस वक़्त तक इख़लाक़ी कुवा की तक़मील नहीं हो सकती। अगर इसके पार हो गया तो इख़लाक़ी मरकज़ के दायरे में दाखिल हो गया और इख़लाक़ी मरकज़ का एतदाल (सम अवस्था) पर आ जाना और हक़ीक़ी तौर पर नशवानुमा (develop) हो जाना इस अमल की दलील (प्रमाण) है कि रूहानी मन्ज़िल पर क़दम आ गया, जिसको परमात्मा मदद दे । गरज़े कि इख़लाक़ी क़वा का एतदाल पर आ जाना और उनका नशवोनुमा हो जाना ही मक़सद (लक्ष्य) है। उसका तय हो जाना रूहानी मुक़ाम की बशारत (खुश ख़बरी) है । यही तसब्वुफ़ (ब्रह्म विद्या) की जान है। यह इख़लाक़ी मन्ज़िल अगर बराये (द्वारा) सलूक तय होती है तो देर -तलब है और दिक़्क़त-तलब है ।

बराये जज़्ब तय हो तो दिक्क्त कम और वक़्त भी कम सर्फ़ होता है। यहाँ पर खूब ग़ौर करने की एक बात है जो मेरे आपके मतलब की है और इसी जगह से आपका मतलब हल होना शुरू होता है ।

बहालते-जज़्ब (जज़्ब की हालत में) सैर तो लतायफ़ (चक्रों) की एकदम हो जाती है, जिसका मतलब यह है कि सिर्फ़ निगरानी करने वाले देवता अपने ऊपर वाले चक्रों के देवताओं के साथ ताल-मेल (harmony) पैदा कर लेते हैं और नई जिद्दत(जोश) और energy हासिल कर लेते हैं जिसको जाग जाना कहते हैं लेकिन क़वाये- नफ़सानिया, शाहवानियाँ, अक़लिया और इख़लाक़िया की तरतीव और तक़मील उस वक़्त तक मुक़म्मिल नहीं होती (अर्थात रहनी सहनी तब तक ठीक नहीं होती) जब तक लतीफ़े -नफ़्स (काल चक्र, महामाया) के मुक़ाम पर पहुँच कर ठहराव एक ख़ास वक़्त तक न हो जाये ।

लतीफ़े -नफ़्स (काल चक्र) में ठहरकर इख़लाक़ी मरकजों की तकमील (पूर्णता) मुद्द्तों में होती है और ऊपर से नीचे उतरते हुए हर मरकज़ पर तकमील होती जाती है। ४५ साल की उम्र में इस तरफ़ बहुत शाज़ोनादिर (यदा कदा) सूफ़ी इसको तय कर सकते हैं। हाँ, एक दूसरी तरक़ीब जल्द्तर (शीघ्रता से) इख़लाक़ी हालत को एतदाल (समता) पर लाने और तक़मील करने की और है जो हज़रत क़िबला (लाला जी के गुरुदेव) ने बराये-रहम (कृपा करके) और नज़रे- शफ़क़्क़त (दया दृष्टि करके) मुझ ख़ादिम (सेवक) पर इस्तेमाल फ़रमाई और वह वहबी है और यह शाज़ोनादिर (कभी-कभी) है। आप समझ सकते हैं कि तरीक़े में दाख़िल हुए मुझको सिर्फ़ ५ महीने गुज़रे थे कि आपने इज़ाज़त -तरीक़त अता फ़रमाई थी ।

बहालत मज़कूर उल सदर (उपरोक्त लेख से) बखूबी मालूम हो सकता है कि उस वक़्त तकमील किस तरह हो सकती है ? मैं बिला बनाबट के इक़रार करता हूँ कि मेरी तक़मील अभी तक नहीं हुई है। हाँ,

बतुफ़ैल-पीराने उज़्ज़ाम (महापुरुषों की कृपा से) दरसदकेबार गाहे ख़िलाफ़त पनाह मुन्तज़िर हूँ कि कब नज़रे-रहमत (कृपा दृष्टि) इस आसी की तरफ़ हो जाये और कब इस दौलत से मालामात हो जाऊँ। तकमील हो जाने की यह दलील है कि जिस तरह ब-मदद ख़ुदाबन्दी (ईश्वर की मदद से) व बतुफ़ैल-पीराने उज़्ज़ाम (महापुरुषों की कृपा से) क़ुब्बते-इरादी (इच्छा शक्ति) से लतायफ़ (चक्र) के मरकज़ों (केंद्रों) को ज़ाकिर करने (जगाने) की क़ुब्बत (शक्ति) होती है और सलूक के वास्ते तय करने की हिम्मत हो जाती है तो उसके साथ इख़लाक़ी मरकज़ों पर भी क़ुदरत हासिल हो जानी चाहिए। लेकिन आपने मुझको ऐसा नहीं पाया। पस लाज़िम है की मैनें तकमील का अभी ख्वाव भी नहीं देखा या यूँ कहिये कि रास्ते में तुम मुझसे चन्द क़दम पीछे हो और मैं आगे हूँ। रास्ते की दुशवारी (कठिनाइयाँ) जानता हूँ ,

जब किसी राहरौ (पन्थाई) पर बोझ डाला जाता है तो उसको अपनी कमज़ोरियाँ मालूम होती हैं और शुक्र है कि अब आपको अपनी कमज़ोरियों की किसी क़दर फ़िक्र पैदा हो गयी है। मैं बहुत ख़ुश होऊँगा कि यह फ़िक्र रोज़-बरोज़ तरक़्क़ी पर हो। बिला इसके आप में तजुरबात (अनुभव) किस तरह आयेंगे और बिला तजुरबे के आप अपनी संभाल में साई (कोशिश करने वाला) किस तरह होंगे और जो कमज़ोरी इख़लाक़ में आपको महसूस होगी, उसे आप किसी न किसी तरह दूर करने की कोशिश करेंगे।

आप इन्तज़ार करें ताकि इस ख़ाकसार को किसी वक़्त यह नैमत हासिल हो जावे और आप उससे फ़ायदा उठावें या आप जहाँ कहीं भी ऐसे साहबे-दौलत पावें और तालाश में मिल जावें तो उनसे फ़ैज़ उठावें। मैं बख़ुशी और सच्चे दिल से इज़ाज़त देता हूँ और हरगिज़ गिरानी (बुरा) नहीं मानता। मैं बहुत ख़ुश होऊँगा कि बिला किसी ख़ास तरीक़े और मेहनत के आपको यह दौलत किसी की सौहबत से हासिल हो जावे। मैं ख़्याल करता हूँ कि आप मेरे इस ख़त से मुतमय्यन हो जावेंगे। अगर काफ़ी न हो तो लिखियेगा ताकि दूसरा तरीक़ा सोचा जावे। यहाँ सब भाई अच्छी तरह से हैं।

दुआगो --

रामचन्द्र